

52

२३२
करानी

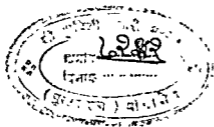


6282

सड़क के किनारे

२३२
कटानी

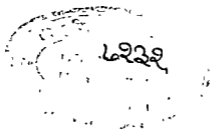
6282



सड़क के किनारे

[मण्टो की पन्द्रह प्रतिनिधि कहानियों का संग्रह]

२३२
कहानी



मण्टो

नवयुग प्रकाशन, दिल्ली

अनुक्रम

जीवन-परिचय

१. मौ कंगडल पावक वा बल्ल	७
२. मुदफरेव	१७
३. बर्मी सडनी	२७
४. मुगिया	३७
५. फोमा घाई	४६
६. बादशाहन वा खात्मा	५६
७. निक्की	७१
८. शादी	८५
९. महमूदा	९७
१०. गाति	११३
११. राम गिनावन	१२३
१२. औरत जात	१३५
१३. घल्ला दिता	१४५
१४. झूठी कहानी	१५३
१५. सडक के किनारे	१६३
	१७५

4.

२६५३

जीवन परिचय

मण्डो ने हमन मण्डो का जन्म ११ मई १९१२ ई० में मन्नाल जिला होशि-
यागपुर में हुआ था। उनके पिता सम्प्रदाय धराने से सम्बन्ध रखते थे और
स्वभावतया बड़े कठोर-हृदयी थे। माता पिता के विपरीत, सर्वथा दान्तिप्रिय
तथा कोमल-हृदयी थीं। मण्डो अपने माता पिता की अन्तिम सन्तान थे।

उनके दो बड़े सौतेले भाई विदेश में उच्च शिक्षा के लिए गये हुये थे किन्तु
मण्डो को अपनी प्रखर बुद्धि और पठन-पाठन से अभिरुचि होते हुए भी बाहर
तो क्या यहाँ भारत में भी उच्च शिक्षा का अवसर प्राप्त नहीं हुआ था।
अनुत्तर से किसी-न-किसी तरह मैट्रिक की परीक्षा पास करके वह मुस्लिम
यूनिवर्सिटी अलीगढ़ में इण्टर साइंस में दाखिल हुए किन्तु उनके भाग्य में
विश्वविद्यालय की डिग्री प्राप्त करना नहीं अपितु इस विद्यालय जन-समुदाय के
जीवन का चितेरा बनना था। अतः पढ़ाई अधूरी छोड़ कर ही वह अलीगढ़ से
दिल्ली आ गये और वहाँ आकर कहानियों के अतिरिक्त उन्होंने साप्ताहिक
पत्रों का सम्पादन आरंभ कर दिया।

मण्डो ने अपना कलम विभिन्न साहित्यांगों पर आशमाया था किन्तु वह
मुप्यनया कथाकार थे और उनकी कहानियों ने ही उन्हें बहुत शीघ्र उच्च
कोटि के कहानोकारों में स्थान दिलवा दिया। समालोचकों के विपरीत प्रहार
उन्हें अपने पथ से न डिगा सके और उन्होंने अपने मनोनीत विषय 'सिक्स' पर
कहानियाँ लिखी और अन्तिम समय तक (१८ जनवरी, १९५५) वह वे कथा-
नियाँ लिखते रहे।

मण्डो ने अपना साहित्यिक जीवन अनुवादों से आरम्भ किया था। उन्होंने
चेगोव, गार्की और मोषाता की कतिपय कृतियों का उर्दू में बड़ा सुन्दर अनुवाद

किया था। विक्टर ह्यूगो, टॉल्स्टॉय और गोर्की ने वह प्रारम्भ में इतने प्रभावित हुए थे कि अपने को कानिफारी कहा करते थे। मुस्लिम यूनिवर्सिटी ने अपनी शिक्षा अपूर्ण छोड़ कर ही उन्होंने कहानियाँ लिखना शुरू कर दिया था और बहुत कम समय में ही बड़ी प्रगति पा चुके थे। आन उल्डिया रेडियो पर काफी दिन बड़े सफल एवं दिनगन्प नाटक लिखने के पश्चात् वह बम्बई चले गये थे जहाँ उन्होंने कुछ पत्रों का सम्पादन किया था तथा कई फिल्मी कहानियाँ लिखी थीं जिनमें 'आठ दिन', 'पुतली', 'भिर्जा सानिय' और 'पमंड' उल्लेखनीय हैं। इनमें से पहली फिल्म में उन्होंने अभिनय भी किया था।

मण्टो ने अपने ब्यालीस वर्षीय जीवन में लगभग ३०० कहानियाँ, १०० नाटक, २० संस्मरण तथा स्केच एवं अनेक निरा लिखे थे। 'नाचा माम के नाम पत्र' शीर्षक से उन्होंने ६ पत्र भी लिखे थे जिनमें अमरीका के साम्राज्यवाद की एशिया पर बढ़ती हुई अशुभ छाया पर एक जबरदस्त व्यंग्य किया था।

मण्टो की कहानियों के विषयवस्तु पर उर्दू साहित्य में घोर मतभेद है किंतु उनकी कला अद्वितीय तथा निस्सन्देह है और उर्दू के चोटी के समालोचकों ने उनकी उस कला की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उर्दू के प्रगतिशील लेखक आंदोलन के संस्थापक श्री सज्जाद जहीर ने लिखा है :

“...सआदत हसन मण्टो उर्दू के एक बहुत अच्छे अफसाना निगार है और मैं कहूँगा कि उनके कुछ अफसानों का शुमार हमारे अदब के बेहतरीन अफसानों में किया जा सकता है।”

उर्दू के प्रख्यात कवि सरदार जाफरी ने जिन्होंने अपनी पुस्तक 'तरवकी पसन्द अदब' में मण्टो को 'फोशनिगार' (अश्लील लेखक) के नाम से याद किया है और मण्टो की लेखनी का लोहा माना है। उन्होंने मण्टो को लिखे अपने एक पत्र में कहा था :

‘...मते हो मेरे और तुम्हारे अदबी नुवतए नज़र (साहित्यिक दृष्टिकोण) से मण्टो (अन्तर) है। लेकिन इसके बावजूद मैं तुम्हारी कद बहुत सी उम्मीदें बावस्ता किये हुए हूँ।’

मण्डो के कहानी सभह 'चुगद' पर भूमिका लिखते हुए जाफ़री ने लिखा था :

'मण्डो उर्दू का सबसे ज्यादा बदनाम अपसाना निगार है और वह बदनामी जो मण्डो को नसीब हुई है मकबूलियत और शोहरत की तरह सहज कोशिश से हासिल नहीं की जा सकती उमके लिए फ़नकार में असली जौहर होना चाहिए और मण्डो का जौहर उसके कलम की नोक पर नगीने की तरह चमकता है।

'मण्डो के अफसाने उन किरदारों की अरानी हैं जिनसे सरमायादाराणा निजाम ने उनकी इन्सानियत छीन ली है। उनमें एक तागे बाला है जो किमी टांभी से बदला लेने की फ़िक्र में हैं। एक भू गफ़ली बाला है जो अपने मालिक-मकान सेठ की गाली मुनकर उसका खून पी जाना चाहता है लेकिन मजबूरी में खुद सिर्फ़ गाली दे सकता है। एक दलाल है जिसकी मर्दानगी की एक तयाउफ़ नें तौहीन कर दी है। एक रण्डी है जिसके मीने में उनका औरतपन जाग उठा है और वह समाज से इन्तकाम लेने के लिए अपने कुत्ते के साथ सो जाती है। एक बच्चा है जो अपने बाप की हिमाकत पर बिमूर रहा है और बाप उमके भोलेपन के मामने और भी अहमक मालूम होता है। एक अल्हड़ लडकी है जो जिन्दगी के तौर-तरीके सीख रही है और अपनी जिन्दगी के अग्रे जज्बात को पूरा करने के लिए बेचन है। एक चलती-फिरती औरत है जो औरतों के पेट पर तेल डालकर पैदा होने वाले बच्चों के बारे में पेन्शनगॉट करती रहती है। एक धका-मांदा नौजवान है जो अपनी तन्हा जिन्दगी का कोफ़्त को दूर करने के लिए एक तख्तीली महबूबा बनाकर उसकी मुहब्बत में महल (संलग्न) रहना है। यह एक अच्छी-खामी पितृचर गंतरी है जिनमें हमारे मुतबस्सित तबके के समाज की बिगड़ी हुई तस्वीरें लगी हुई हैं।'

ये हैं मण्डो के पात्र। ये अच्छे हैं या बुरे इसमें मण्डो को कोई मरोकान नहीं। इनमें सुधार हो सकता है या भंडा ऐसे ही रहेंगे यह बनाना भी मण्डो का विषय नहीं। मण्डो की तो केवल यह दर्शाना अभीष्ट है कि ये सब इन्सान थे, इनमें इन्सान बनने की योग्यता थी लेकिन हम समाज ने जिनकी नाब नूत-

खसूट पर है उन सबको जानवर बना दिया है। मण्टो को इनमें से किससे प्रेम है और किससे घृणा वह पाठक स्वयं अनुमान लगा सकते हैं। मण्टो ने तो अपनी कलम को मात्र कैमरा बनाकर उनके निम्न रंगों दिये हैं पाठक स्वयं उन चित्रों में अच्छे-बुरे पहचान लें।

शायद मण्टो और उर्दू के प्रतिगामियों के नेता हसन अस्करी इन बात में एकमत थे कि साहित्य को इस बात से कोई दिनगस्पी नहीं कि कौन जुल्म कर रहा है, कौन नहीं कर रहा; जुल्म हो रहा है या नहीं हो रहा। साहित्य तो देखता है कि जुल्म करते हुए और जुल्म सहते हुए इन्सानों का बाह्य तथा आंतरिक दृष्टिकोण क्या है। जहाँ तक साहित्य का सम्बन्ध है जुल्म की बाह्य क्रिया और उसके बाह्य प्रक निरर्थक हैं।' ('स्वाह हाशिये' की भूमिका)

यही कारण है मण्टो ने अन्य लेखकों के प्रतिकूल अपनी कहानियों में मुधार की अवृत्ति को नहीं फटकने दिया। वह अपने पात्रों से प्रेम करते हैं तो पाठकों से भी यही आशा करते हैं; यदि घृणा करते हैं तो भी उन्हें यही आशा रहती है। वह अपने घृणित पात्रों में घृणा का संचार क्यों हुआ, कैसे हुआ या किस प्रकार वह दूर हो सकता है इस रोग को नहीं पालते। वह तो स्थिति जैसी है उसे कलात्मक ढंग से पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में विश्वास करते हैं। उनका मत है कि यदि वेश्याओं के जीवन पर कहानियाँ लिखना वर्जित है तो पहले वेश्यालय बन्द करने होंगे और तब इस विषय पर कोई कहानी नहीं लिखी जायगी। एक स्थल पर लिखते हैं :

'तवाइफ का मकान खुद एक जनाजा है जो समाज खुद अपने कन्धों पर उठाए हुए है। वह उसे जब तक दफन नहीं करेगा उसके वारे में बातें होती रहेंगी।

'यह लाश गली-सड़ी सही, वदबूदार सही, काविले-नफरत सही, भयानक सही, लेकिन इसका मुँह देखने में क्या हर्ज है? क्या यह हमारी कुछ नहीं लगती? क्या हम इसके अजीब नहीं? हम कभी-कभी कफन हटाकर इसका मुँह देखते रहेंगे और दूसरी को दिखाते रहेंगे।'

अपनी लेखनी और अपनी कला के वारे में अनेक स्थलों पर स्वयं

बहुत कुछ लिखा है। उनका कहना था कि मैं जो कुछ लिखता हूँ यदि वह प्रश्लील है; नग्नता है तो इसमें मेरा कोई दोष नहीं, दोष उस घृणित समाज, उन दोषपूर्ण व्यवस्था का है जहाँ मुझ जैसे लेखक को अश्लीलता और नग्नता खिसरी हुई दृष्टिगोचर होती है।

अपनी कहानियों पर नंगे आरोपों के उत्तर में मण्टो ने लिखा था

‘आज जिस दौर में हम गुजर रहे हैं अगर आप उससे नाबाकिफ हैं तो मेरे अफसाने पढ़िये। अगर आप उन अफसानों को बर्दाश्त नहीं कर सकते तो इनका मतलब है कि यह जमाना नाकाविले-बर्दाश्त है। मुझमें जो बुराईयाँ हैं वो इस दौर की बुराईयाँ हैं। मेरी तहरीर (लेखनी) में कोई नुकस (त्रुटि) नहीं है। जिग नुस को मेरे नाम से मसूब किया जाता है दरअसल वह मौजूदा निजाम का नुस है। मैं हगामा पसन्द (उपद्रववादी) नहीं, मैं लोगों के स्यालान व जज्बात में हैजान (उत्तेजना) पैदा करना नहीं चाहता। मैं तहजीब-तमद्दून (मंस्कृति) व समाज की चौकी बया उजाहंगा जो है ही नहीं। मैं उसे कपडे पहनाने की कोशिश भी नहीं करता इसलिए कि यह काम दर्जियों का है। लोग मुझे सियाह कलम कहते हैं लेकिन मैं स्याह तख्ते पर काली चक्र से नहीं लिखता, मफेद चक्र इस्तेमाल करता हूँ ताकि स्याह तख्ते की स्याही और भी ज्यादा नुमायाँ हो जाय। यह मेरा खास अदाज, खाम मज है जिसे फोशनगारी, (अश्लीलता) तरकी पसन्दी और खुदा मालूम क्या कुछ बहा जाता है—लानत हो सआदत हसन मण्टो पर कमबख्त की गाली भी सलीके से नहीं दी जाती। ‘.....’

मण्टो ने उर्दू बधा-साहित्य में जिस ‘नग्नता’, ‘अश्लीलता’ और उच्छृंखलता का बीजारोपण किया था उसका परिणाम उनकी बे चार कहानियाँ हैं जिन पर ब्रिटिश सरकार तथा पाकिस्तानी सरकार ने अभियोग चलाये थे—‘ठण्डा गोस्त’, ‘धू’, ‘काली शलवार’ और ‘धुआँ’।

उन्होंने अपनी इन कहानियों के बचाव के लिए खुद पैरवी की थी और फलस्वरूप बह बरी हो गये थे।

मण्टो का नंगे समाज को कपड़े न पहनाने बल्कि उसे और नंगा कर देने

का दृष्टिकोण ही आलोचकों के उन पर गिरे प्रकोप का कारण था। प्रसिद्ध समाज का चित्रण, वेश्याओं का चित्रण अश्लील नहीं, न ही उसमें लाग लपेट अपेक्षित है बल्कि इस सिलसिले में मण्टो का साहस और निर्भीकता वस्तुतः सराहनीय है। परन्तु प्रश्न यह है कि हमारे उन विज्ञान मन्त्रालय में जहाँ प्रत्येक वस्तु का बाहुल्य है, जहाँ सद्गुण-दुर्गुण, नकार-सकार, भले-बुरे, शोषक-शोषित अत्याचारी-अत्याचारित, शासक-शासित सभी मौजूद हैं तब क्या वेश्यावृत्ति या भ्रष्टाचार की ओर प्रवृत्त मानव का चित्रण ही सर्वथा आवश्यक और अनिवार्य है? क्या इसी का चित्रण लेखक का परम कर्तव्य है? क्या वेश्या का कोटा चित्रित करने व उसकी संसारी दिना देने मात्र से वेश्याओं का तथा उन्हें जन्म देने वाली इस व्यवस्था अथवा समाज का अन्त हो जायगा? मण्टो ने दरअसल अपनी कहानियों के पात्रों के शत्रु को पहचाना तो सही पर उससे किसी को कुछ हासिल न हुआ।

उर्दू के लब्ध-प्रतिष्ठ आलोचक श्री आले एहमद 'मुस्कर' ने उनके सम्बन्ध में लिखा है।

“.....मण्टो मोपासाँ और माँम दोनों से बहुत ज्यादा मुतास्सिर हुआ है।.....वह बड़ा अच्छा फनकार है। उसने अफसाने लिखना सीखा नहीं वह अफसाना-निगार पैदा हुआ था।...मगर उसका जहन मरीज है उसे जिन्स और उसकी बदउनवानी से बहुत दिलचस्पी है। उसके अफसानों में जिन्दगी जरूर है लेकिन एक महदूद व मखसूस किस्म की जिन्दगी...वह माँम की तरह किसी चीज पर ईमान नहीं रखता। सिर्फ इस बात का वह कायल है कि इन्सानी फितरत बड़ी अजीब है और उसमें कमी ज्यादा है।

‘इस बात की अहमियत से इन्कार नहीं किया जा सकता लेकिन इसकी बड़ाई मस्कूक है।’

इसी प्रकार सज्जाद जहीर ने भी उन्हीं से उनकी कहानियों पर चर्चा करते हुए कहा था :

“.....आपका यह अफसाना 'बू' एक बहुत ही दर्दनाक लेकिन फिजूल इसलिए कि दरम्यानी तक्के के हर आमूदाहाल फर्द (संतुष्ट

व्यक्ति) की जिन्सी बदउन्वानियों (विषयी विच्छृंखलताएँ) का तजकरा चाहे कितना ही हकीकत पर मन्नी (भाधारित) क्यों न हो लिखने और पढ़ने वाले दोनों के लिए तजीए-श्रीकात (समय-नाश) है और दरअसल वह जिन्दगी के अहमतररीन (अत्यंत महत्वपूर्ण) तकाजो से इसी कद्र फरार (पलायन) का इजहार है जितना कि कदीम किस्म की रजतपसदी (प्रतिक्रियावाद) ' ' ।

इस समाज में कुछ और भी बर्ग है, कुछ और पात्र भी है जो अपनी खोई हुई मानवता को पुनर्प्राप्त करने के लिए सघर्षशील हैं। जो जुल्म-अत्याचार, शोषण व कुरीतियों के विरुद्ध लड़ रहे हैं और एक नये सत्तार का निर्माण कर रहे हैं। लेकिन मण्टो की नजर उन तक न गई—या यों कहे कि उनकी ओर देखना मण्टो ने इतना आवश्यक न समझा।

जीवन के प्रति मण्टो का कुछ विचित्र-सा दृष्टिकोण था। वह इस समाज में रह कर इसकी गंदगी को देखते थे। उसका विरोध करते थे पर साथ ही इस समाज की जड़—जनता—में भी अलगाव ही पसन्द था। कृष्णचन्द्र से शरावनीशी के समय उन्होंने कहा था :

“... जिन्दगी नहीं देखोगे, गुनाह नहीं करोगे, मौत के करीब नहीं जाओगे, गम का मजा नहीं चखोगे तो क्या तुम खाक लिखोगे ?”

मण्टो ने वास्तव में मह सब किया था, मौत को उन्होंने करीब बुलाया था और स्वयं उसके नजदीक चले गये। मण्टो के जीवन की निराशा ने मण्टो को सब तरफ से काट कर केवल शराव में गर्क कर दिया और कभी वह पागल-खाने गये तो कभी अत्यधिक मदिरा-पान के कारण उन्हें अस्पताल में रहना पडा और एक दिन वह आया जब वह इस सत्तार से हो चले गये।

कृष्णचन्द्र ने मण्टो की मृत्यु पर लिखे अपने सुन्दर लेख में उन्हें श्रद्धा-जलि अर्पित करते हुए एक जगह लिखा था :

‘मण्टो एक बहुत बड़ी गाली थी। कोई व्यक्ति ऐसा न था जिससे उसका भगड़ा न हुआ हो।’ बजाहिर तरकीपसन्दों से खुश नहीं था, न ही गैर तरकीपसन्दों से, न पाकिस्तान से, न हिन्दुस्तान से। न अन्कल साम से न हस से। न जाने उसकी प्यासी, बेचैन व बेकरार हह क्या चाहती थी ? उसकी

जवान ब्रेह्म कड़वी थी। लिखने की तर्ज थी गो कमीन्दी और कॅटीनी, नयत्र की तरह तेज और बेरहम, लेकिन आप उम गाली को, उमकी तन्त्र जुवानी को, उसके नुकीले, कटिदार लपकों को जरा-सा खुरचकर तो देखिये अन्दर से जिन्दगी का मीठा-मीठा रस टपकने लगेगा। उमकी नफरत में मुहब्बत थी, उरियानी में सत्रपोशी, नुटी हर्ट अस्मत वाली आरतों की दास्तानों में उसके अदब की पाकीजगी छिपी हुई थी। जिन्दगी ने मण्टो से इन्साफ नहीं किया लेकिन तारीख जम्बर उससे इन्साफ करेगी।'

मण्टो की महानता इस बात में भी है कि उन्होंने अपने पात्रों का चयन हमारे जीवन में से किया। उनके पात्र हमें रोजमर्रा दिखाई देने वाले चलते-फिरते, गोस्त-पोस्त वाले पात्र हैं, जो सच्चे पात्र हैं। मण्टो की कहानियाँ कुछ आत्मचरित का-सा भुकाव लिए हैं जो उनकी मुन्दरता को द्विगुणित कर देता है। मण्टो की शैली उनकी अपनी अछूती व अद्वितीय शैली थी जिसने उन्हें आधुनिक युग का महान् कलाकार बनाया। मण्टो की भाषा सरल, सुवोध तथा पैनी व प्रभावशाली थी। शब्दों में मितव्ययिता के वह कायल थे।

स्वभावतया ही स्वातंत्र्य-प्रेमी होने के कारण मण्टो ने कभी किसी संस्था-विशेष से अपने को सम्बद्ध न किया था। भारतीय वातावरण, साम्प्रदायिक दंगों के कारण जब अत्यधिक दूषित हो गया तो वह चम्बई से लाहौर चले गये और वहाँ रहकर भी वह कभी सन्तुष्ट न रहे। उन्हें अपनी जन्मभूमि भारत की याद बहुत आती रही। मण्टो भारत से पाकिस्तान किसी साम्प्रदायिक कारण से नहीं गये थे बल्कि कहना चाहिए साम्प्रदायिकता के विरुद्ध मण्टो ने जिस निर्ममता से प्रहार किया वह उन्हीं का साहस था।

पाकिस्तान में मण्टो ने बहुत सी कहानियाँ लिखीं और उनके अनेक संग्रह प्रकाशित हुए किन्तु इन सबके बावजूद वह आर्थिक दृष्टि से हमेशा परेशान रहे और 'जेवेकफन' नामक अपने लेख में इसी संकट का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है :

'मेरी मौजूदा जिन्दगी मसायब से पुर है। दिन-रात मशकत करने के बाद वमुश्किल इतना कमाता हूँ जो मेरी रोजमर्रा की जरूरियात के लिए पूरा

हो सके। यह तकलीफदेह एहसास मुझे हर वक्त दीमक की तरह चाटता रहता है कि अगर मैंने आँखें भीख ली तो मेरी बीबी और तीन बमसिन बच्चों को देखभाल कौन करेगा ? मैं फोशनबीस, दहशत पसन्द, सनकी, लकीफावाज, और रजनपसन्द सही लेकिन एक बीबी का स्वाबिन्द और तीन लडकियों का बाप हूँ, इनमें से अगर कोई बीमार हो जाय और मौजूब मुनासिब इलाज के लिए मुझे दर-दर की भीख माँगनी पड़े तो मुझे बहुत कोपन होगी है।'

मण्टो बहुत पवित्र हृदयी थे, गन्दे-से-गन्दे विषय पर कहानी लिखकर भी वह अग्र्यन्त साफ सुथरे तथा पवित्र रहे थे। किन्तु मदिरा ने उन्हें खोल्ला कर दिया और परिणामस्वरूप १८ जनवरी १९५५ को भारत एवं पाकिस्तान के इस महान् चिन्तक का हृदय-गति बंद हो जाने से देहान्त हो गया। उन्हें कथा साहित्य में मण्टो की मृत्यु में जो रिक्ति हुई है उसे पूरा करना सहज नहीं है।

२३३५, छत्ता मोमगाँ,
तुकमान गेट,
दिल्ली।

—नूरनबी अट्वासी

सौ कैण्डल पाँवर का बल्ब

वह चौक में कंगर पार्क के बाहर जहाँ बन्द ताँगे खड़े रहते हैं, बिजली के एक खम्भे के साथ खामोज खड़ा था और दिल-ही-दिल में मोच रहा था 'कोई बीरानी सी बीरानी है !'

यही पार्क जो सिर्फ दो वर्ष पहले इतनी पुर-रोनक जगह थी अब उबड़ी हुई दिखाई देती थी। जहाँ पहले स्त्री पुरुष तटक भटक बातें वस्त्रों में चलते-फिरते थे वहाँ अब बेहद मँले-कुचँले कपड़ों में लोग इधर-उधर निरहंसेम फिर रहे थे। बाजार में काफी भीड़ थी परन्तु उनमें वह रंग नहीं था, जो एक मँले-ठेले का हुआ करता था। आस-शाम की भीमेट से बनी हुई इमारतें अपना रूप रंग गुपी थी, सर-भाङ-मुंह-फाङ एक दूसरे की घोर फटी-फटी आँखों से देख रही थी, जैसे बियवा स्त्रियाँ।

वह आश्चर्य-चकित था कि वह फ्रीम-भाउडर कहाँ गया ? वह सिन्दूर कहाँ उड़ गया ? वे गुर वहाँ गुप्त हो गये जो उनमें कभी यहाँ देखे तथा सुने थे ? अधिक समय नहीं बीता था—अभी वह बस ही तो (दो वर्ष भी कोई समय होता है) यहाँ धाया था। कलकत्ते से जब उमे यहाँ की एक फर्म ने अच्छे वेतन पर बुलाया था तो उनमें कंगर पार्क में कितनी कोशिश की थी कि उमे किराये पर एक कमरा ही मिल जाय, परन्तु वह असफल रहा था—हजार फर्माइशों के बावजूद।

किन्तु अब उनमें देखा कि जिस कुँजड़े, जुलाहे और मोची की तबियत चाहती थी फर्माइशों और कमरों पर अपना अधिकार जमा रहा था।

जहाँ किसी पानदार फिल्म बम्पनी का दग्नर हुआ करता, वहाँ चूल्हे सुलग

रहे हैं; जहाँ कभी महान की बड़ी-बड़ी रंगीन तस्मियाँ एकत्र होती थीं, वहाँ धोबी मने कपड़े भी रहे हैं।

दो वर्ष में उनकी बड़ी क्लानि।

वह ईमान था। लेकिन उसे हम क्रांति की पूरुभूमि का ज्ञान था। अस्त्रवाजों से श्रीर उन मित्रों में जो महान में मौजूद थे, उसे सब पता लग चुका था कि वहाँ कैसा तूफान आया था। परन्तु वह सोचना था कि यह कोई अजीब तूफान था जो उमान्तों का रस-रस भी चुसकर ले गया। उन्सानों ने उन्सान कत्ल किये; स्त्रियों का गतीत्व नूटा; हिन्दु उमान्तों की भृगों तकड़ियों और उनकी ईंटों से भी यही बनाय किया।

उसने गुना था कि कि इस तूफान में स्त्रियों को नग्न किया गया था, उनके स्तन काटे गये थे। यहाँ उसके आसपास जो कुछ था सब नंगा और यौवनहीन था।

वह विजली के सम्भे के साथ लगा अपने एक मित्र की प्रतीक्षा कर रहा था; जिसकी सहायता से वह अपने निवास का कोई प्रबन्ध करना चाहता था। इस मित्र ने उससे कहा था कि तुम कंसर पार्क के पास जहाँ ताँगे खड़े रखा करते हैं, मेरा इन्तजार करना।

दो वर्ष हुए जब वह नौकरी के सिन्सिले में यहाँ आया था तो वह ताँगों का अड्डा बहुत मशहूर जगह थी—सबसे बढ़िया, सबसे बाँके ताँगे सिर्फ यहीं खड़े रहते थे, क्योंकि यहाँ से ऐय्याशी का हर सामान उपलब्ध हो जाता था। अच्छे से अच्छा रेस्तोराँ और होटल समीप था। सर्वश्रेष्ठ चाय, उत्तम भोजन और अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी।

शहर के जितने बड़े दलाल थे वे यहीं मिलते थे। इसलिए कि कंसर पार्क में बड़ी-बड़ी कंपनियों के कारण रुपया और शराब पानी की भाँति बहते थे।

उसे याद आया कि दो वर्ष पूर्व उसने अपने मित्र के साथ बड़े ऐश किये थे। अच्छी-से-अच्छी लड़की हर रात को उनकी आगोश में होती थी। युद्ध के कारण स्काच अप्राप्य थी, परन्तु एक मिनट में दर्जनों बोतलें प्राप्त हो थीं।

तमि श्रम भी खड़े थे किन्तु उन पर बे तुर्र, बे फुंदने, बे पीतल के पालिसा बिये हुए माज-सामान की चमक-द्रमक नहीं थी। यह भी शायद दूसरी चीजों के साथ उड़ गई थी।

उसने घर्षा में समय देखा, पाच बज चुके थे। फरवरी के दिन थे। शाम के साथे छाने शुरू हो गये थे। उसने दिल-ही-दिल में मित्र को धिक्कारा और दाहिने हाथ के निजंन होटल में मोरी के पानी से बनी हुई चाय पीने के लिए जाने ही वाला था, कि किसी ने उसे हीने से पुरारा। उसने सोचा शायद उसका मित्र आगया परन्तु जब उसने मुड़ कर देखा तो कोई अजनबी था—आम शयल मूरत बन, लहू की नई शलवार पहने जिममें और अधिक सली की गुंजाइश नहीं थी नीली पापतिन की कमीज में जो साण्डी जाने के लिए व्याकुल थी।

उसने पूछा, 'क्यों भई, तुमने मुझे बुलाया?'

उसने धीरे से उत्तर दिया, 'जी हाँ।'

उसने समझा कि शरणाधी है, भीख माँगना चाहता है। 'क्यों माँगते हो?'

उसने उर्मा स्वर में उत्तर दिया, 'जी कुछ नहीं।' फिर तिकट आकर रहा, 'कुछ चाहिए आपको?'

'क्या?'

'कोई लड़की-बड़की।' यह कहकर पीछे हट गया।

उसके मीने में एक तीर-सा तगा कि देखो इस जमाने में भी यह लोगों की चासना टटोलता फिरता है। और फिर मानवता के बारे में ऊपर-तले उसके मस्तिष्क में निररमाह करने वाले विचार उत्पन्न हुए। इन्ही विचारों से अभिभूत हो उसने पूछा :

'कहाँ है?'

उसका स्वर दनाल के लिए आनाजनक नहीं था, अतः कदम उठाने हुए उसने कहा . 'जी नहीं, आपको जरूरत नहीं मालूम होती?'

उसने उसे रोसा। 'यह तुमने कैसे जाना? इन्सान को हर बात इस चीज की जरूरत होती है जो तुम दिलवा सकते हो—मूर्ती पर भी, जलती बिता में भी.....'

वह दार्शनिक बनने ही चाहता था कि मर गया, 'देखो, अगर वहाँ पान ही है तो मैं चलने के लिए नौकर हूँ। मैंने वहाँ एक दोस्त ही बना दे रखा है।'

दलाल निराश था, 'पान तो बिना ही पान है।'

'कहाँ?'

'वह नामने वाली मिनिश में है।'

उमने नामने वाली मिनिश को देखा।

'उमने, उन बड़ी मिनिश में?'

'जी हाँ।'

वह लौट गया, 'दलाल, वहाँ...'

नभयान्तर उमने पूछा, 'मे भी वहाँ?'

'अनिष्ट, लेकिन मे आगे-आगे चलना है।' और दलाल ने मानने वाली विलिंग की ओर चलना शुरू कर दिया।

वह नौकरों आमा-येथी वहाँ सोनाटा उनके सीटों ले लिया।

चन्द्र गजों का फँगला था, फोन्स ही हो गया। श्वाभ और वह दोनों उस बड़ी विलिंग में थे जिनके मन्गक पर एक मोटे गटक रखा था—उसकी हालत सबसे खराब थी, जगह-जगह उगड़ी हुई टिंटों, बड़े हुए पानी के नलों और कूड़े-करकट के ढेर थे।

अब शाम नहरी हो गई थी। इधोड़ी में मे गुजरकर आगे बढ़े तो मँधेरामुह हो गया। चौड़ा-चकला आंगन ले करके वह एक तरफ मुड़ा जहाँ इमारत बतले-बतले तक गई थी। नंगी टिंटें थी, चूना और सीमेंट गिने हुए सग्त ढेर पड़े थे और जा-बजा बजरी धिगरी हुई थी।

दलाल अपूर्ण सीड़ियाँ चढ़ने लगा कि मुझकर उमने कहा :

'आप यहीं ठहरिए मैं अभी आया।'

वह रुक गया ; दलाल गायब हो गया। उसने मुँह ऊपर करके सीड़ियों के अन्त की ओर देखा तो उसे तेज रोशनी नजर आई।

दो मिनट गुजर गये तो दवे पाँच वह भी ऊपर चढ़ने लगा। आतिरी जीने पर उसे दलाल की बहुत जोर की कड़क चुनार्ई दी :

'उठती है कि नहीं?'

कोई स्त्री बोली, 'बह जो दिया मुझे सोने दो।' उनकी आवाज थूटी-थूटी-सी थी।

दलाल फिर कड़वा, 'मैं कहता हूँ उठ, मेरा कहा नहीं मानेगी नां याद रख...'

स्त्री को आवाज आई, 'तू मुझे मार डाल, लेकिन मैं नहीं उठूँगी। खुदा के लिए मेरे हाथ पर रहम कर—'

दलाल ने पुचकारा, 'उठ बेरी जाग, जिद न कर। गुजारा कैसे चलेगा?'

स्त्री बोली, 'जाम गुजारा जहन्नुम मे, मैं भूखी भर जाऊँगी। खुदा के लिए मुझे तग न कर। मुझे नींद आ रही है।'

दलाल की आवाज कड़ो हो गई 'तू नहीं उठेगी, हरामबादी, सूअर का बच्ची?'

स्त्री बिल्लाने लगी, 'मैं नहीं उठूँगी; नहीं उठूँगी नहीं उठूँगी।'

दलाल की आवाज भिच गई।

'आहिस्ता बोल, कोई मुन लेगा। ले चल उठ। तीस-बालीस रुपये मिल जायेंगे।'

स्त्री को बाणी में आग्रह था, 'देर मैं हाथ जोड़ती हूँ। मैं कितने दिनों में जाग रही हूँ? तरस था। खुदा के लिए मुझ पर रहम कर...'

'बस एक-दो घण्टे के लिए, फिर सो जाना। नहीं तो देख मुझ सस्ती करनी पड़ेगी।'

थोड़ी देर के लिए एक गामोसी छा गई। उसने दवे पाँव आगे बढ़कर उन कमरे में झाँका जिसमें में चड़ी तेज रोशनी आ रही थी।

उसने देखा कि एक छोटी कोठरी है जिसके फर्श पर एक स्त्री बैठी है। कमरे में दो-तीन बर्तन हैं, वस उसके सिवा और कुछ नहीं। दलाल उस स्त्री के पाग बँठा उसके पाँव दाब रहा था।

थोड़ी देर बाद उसने स्त्री से कहा, ले चल उठ। कमरे खुदा की एक-दो घण्टे में आ जायेंगी। फिर सो जाना।'

वह दार्शनिक बनने ही जाना था कि एक भया, 'देगी, अगर नहीं
है तो मैं चलने के लिए बेचारा हूँ। मैं यहाँ एक दोस्त को बचाने के
दलाल निकट आया, 'नाम ही विन्डिंग नाम।'

'कहाँ?'

'यह नामने वाली विन्डिंग में।'

उसने नामने वाली विन्डिंग को देखा।

'उसमें, उस बड़ी विन्डिंग में?'

'जी हाँ।'

वह काँप गया, 'अच्छा, तो...?'

संभगकर उसने पूछा, 'मैं भी चला?'

'चलिए, लेकिन मैं आगे-आगे चलता हूँ।' और दलाल ने सामने
विन्डिंग की ओर चलना शुरू कर दिया।

वह सैकड़ों आत्मा-बेघी बालों सोचता उसके पीछे ही निकल
चन्द्र गजों का फैसला था, फीरन ती हो गया। दलाल ने कहा
बड़ी विन्डिंग में थे जिनके मस्तक पर एक बोंडे लटक
सबसे खराब थी, जगह-जगह उमड़ी हुई ईंटों, कटे
कूड़े-करकट के ढेर थे।

अब शाम गहरी हो गई थी। ड्योढ़ी में से निकलने वाले बड़े तो प्र
हो गया। चौड़ा-चकला आंगन ती करके वह
बनते दक गई थी। नंगी ईंटें थीं, चूना
और जा-बजा बजरी बिखरी हुई थी।

दलाल अपूर्ण सीढ़ियाँ चढ़ने के

'आप यहीं ठहरिए मैं अभी

वह रुक गया; दलाल

के अन्त की ओर देखा तो

दो मिनट गुजर गये

पर उसे दलाल की

उसने कहा, 'पचास ही रमो'
'माह्व मलाम !'

७२५२

उमके जी में आई कि एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर उमको दे मारे ।
दलाल बोला, 'तो ले जाइए इसे । लेकिन देखिए तग न कीजिएगा । और
फिर एक-दो घण्टे के बाद छोड़ जाइएगा ।'

'बेहतर ।'

उमने बड़ी विल्डिंग में बाहर निकलना शुरू किया जिसकी रोगनी पर वह
कई बार बहुत बड़ा बोर्ड पड चुका था ।

बाहर तांगा खडा था वह आगे बंठ गया और स्त्री पीछे ।

दलाल ने एक बार फिर मलाम किया और एक बार फिर उसके दिन
में यह इच्छा हुई कि वह एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर, उसके सर पर दे
मारे ।

तांगा चल पडा । वह उसे पाम ही एक बीरान-से होटल में ले गया ।
मस्तिष्क में जो विकार उत्पन्न हो गया था उसमें अपने को निकाल कर उमने
उस स्त्री की ओर देगा जो मिर से पैर तक उजाड़ थी । उसके पपोटे मूजे हुए
थे, आंखें भुकी हुई थी । उसका उगार का घड भी सारे-का-सारा भुका हुआ
था, जैसे वह एक ऐसी इमारत है जो पल भर में गिर जायगी । वह उससे
सम्बोधित हुआ :

'जरा मर्दन तो ऊंची कीजिए ।'

वह जोर से चीकी, 'क्या ?'

'कुछ नहीं ।' मैंने सिर्फ इतना कहा था कि कोई बाल तो कीजिए ।'

उमको आंखें लाल बोटी हो रही थी जैसे उनमें मिर्चे डाली गई हो, वह
खामोश रही ।

'भापका नाम ?'

'कुछ भी नहीं ।' उसके स्वर में तेजाब की तेजी थी ।

'घार बही की रहने वाला है ?'

'जहाँ की भी तुम समझ लो ।'

वह स्त्री एकदम गां उठीं जैसे आग दिगारिं हुईं छल्लूँदर उठनी है और चिल्लाई, 'अच्छा उठनी है ।'

वह एक तरफ हट गया । अगल में वह उर गया था । दबे पाँव वह तेजी से नीचे उतर गया । उसने सोना कि भाग जाये । इस महल ही में भाग जाय । इस दुनिया से ही भाग जाय । मगर कहाँ ?

फिर उसने सोना कि यह स्त्री कौन है ? क्यों उस पर इतना जुल्म हो रहा है ? और यह दल्लाल कौन है, उनका क्या लगता है और यह इस कमरे में इतना बड़ा बल्य जलाकर जो गौ कँडल पावर से किनी तरह भी कम नहीं था क्यों रहने हैं ? कब से रहते हैं ?

उसकी आँखों में उस तेज बल्य का प्रकाश अभी तक घुसा हुआ था । उसे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था । परन्तु वह सोच रहा था कि इतनी तेज रोशनी में कौन सो सकता है ? इतना बड़ा बल्य, क्या ये छोटा नहीं लगा सकते ? यही पन्द्रह-पच्चीस कँडल पावर का ?

वह यह सोच रहा था कि आहट हुई । उसने देखा कि दो चाये उसके पास खड़े हैं । एक ने जो दल्लाल था, उससे कहा :

'देख लीजिए ।'

उसने कहा, 'देख लिया है ।'

'ठीक है ना ?'

'ठीक है ।'

'चालीस रुपये होंगे ।'

'ठीक हैं ।'

'दे दीजिए ।'

वह अब सोचने-समझने के योग्य नहीं रहा था । जब में उसने हाथ डाला, निकाल कर दलाल के हवाले कर दिये ।

लो कितने हैं ।'

ी खड़खड़ाहट सुनाई दी ।

कहा, 'पचास हैं ।'

उसने कहा, 'पचास ही रंगी !'

'माह्व मतलब !'

उमके जी ने भाई कि एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर उसको दे मारे ।

दलाल बोला, 'तो ले जाइए इमे । लेकिन देखिए तग न कीजिएगा । और फिर एक-दो घण्टे के बाद छोड जाइएगा ।'

'बेहतर ।'

उसने बडी विल्डिग से बाहर निकलना शुरू किया जिसकी रोगनी पर वह कई बार बहुत बडा बोंडे पड़ चुका था ।

बाहर तांगा सड़ा था वह आगे बैठ गया और स्त्री पीछे ।

दलाल ने एक बार फिर सलाम किया और एक बार फिर उसके दिल मे यह इच्छा हुई कि वह एक बहुत बडा पत्थर उठा कर, उमके सर पर दे मारे ।

तांगा चल पडा । वह उसे पास ही एक वीरान-से हाटल मे ले गया । मस्तिष्क मे जो त्रिकार उत्पन्न हो गया था उससे धपने को निकाल कर उसने उम स्त्री की ओर देखा जो सिर से पैर तक उजाड़ थी । उसके पपोटे सूजे हुए थे, आँखें भुकी हुई थी । उसका ऊपर का धड़ भी सारे-का-मारा भुका हुआ था, जैसे वह एक ऐसी इमारत है जो पल भर मे गिर जायगी । वह उससे सम्बोधित हुआ :

'जरा गर्दन तो ऊँची कीजिए ।'

वह जोर मे चीकी, 'क्या ?'

'कुछ नहीं ।' मीने सिर्फ इतना कहा था कि कोई बात तो कीजिए ।'

उमकी आँखें ताल बोटी हो रही थी जैसे उनमे मिर्चे डाली गई हों; वह ग्रामोग रही ।

'आपका नाम ?'

'कुछ भी नहीं ।' उमके स्वर में तेजाव की तेजाव

'आप कहाँ की रहने वाली है ?'

'जहाँ की

फर्न का जो हिस्सा उसे नजर आया, उस पर एक स्त्री चटाई पर लेटी थी। उसने उसे गौर से देखा—गो नहीं थी; मुँह पर दुपट्टा था। उसका नीला रॉन्स के उतार-चढ़ाव से हिल रहा था। वह जरा श्रीर आगे बढ़ा। उसकी चीन्घ निकल गई, मगर उसने फौरन ही दबा ली—उस स्त्री ने कुछ दूर नंगे फर्न पर एक आदमी पड़ा था जिम्मा गिर टूक-टूक था। पास ही रून में लक्षपथ डींट पड़ी थी। वह सब उसने एकदम देखा श्रीर सीढ़ियों की तरफ लपका, पाँव फिसला और नीचे। परन्तु उसने चोटों की कोई परवाह नहीं की और होश व हवाश कायम रखने की कोशिश करते हुए बड़ी कठिनाई से अपने घर पहुँचा और सारी रात उसने न्याय देखाता रहा।

खुदफरेव

रम न्यू पेरिम स्टोर के प्रायवेट कमरे में बैठे थे। बाहर टेलीफोन की घण्टी बजी तो उसका मालिक श्याम उठकर दौड़ा। मेरे साथ मसूद बैठा था; उसने कुछ दूर हटकर जलील दाँतों से अपनी छोटी-छोटी उँगलियों के नाखून काट रहा था। उसके कान बड़े गौर से श्याम की बातें सुन रहे थे। वह टेलीफोन पर किसी से कह रहा था -

‘तुम झूठ बोलती हो; अच्छा खर देख लेंगे। सो, यह क्या कहा? तुम्हारे लिए तो हमारी जान हाज़िर है। अच्छा तो ठीक है पाँच बजे। खुदा हाज़िर! क्या कहा? भरे भई कद तो दिया कि नुम्हें मिन जाऊंगा।’

जलील ने मेरी ओर देखा, ‘मण्टो साहब, ऐश करता है श्याम।’

मैं जवाब में मुस्करा दिया।

जलील उँगलियों के नाखून अब तैली से काटने लगा।

‘कई लड़कियों के साथ उसका टाँका मिला हुआ है। मैं तो सोचता हूँ एक स्टोर खोल लूँ—नेडोज स्टोर। लशामब्रवाह प्रेम के चक्कर में पड़ा हुआ है; औरन का साथ तक भी वहाँ नहीं आता। सारा दिन गटगडाहटें सुनो; उल्लू के पट्टे किस्म के प्राहकों से मगलमारी करो। यह जिन्दगी है!’

मैं फिर मुस्करा दिया। इतने में श्याम आ गया। जलील ने खोर से चून्डों पर घप्पा मारा और कहा, ‘सुनाइये कौन थी यह जितके लिए तू अपनी जान हाज़िर कर रहा था।’

श्याम बैठ गया और कहने लगा, ‘मण्टो साहब के सामने ऐसी बातें न किया करो।’

जलील ने अपनी ऐनक के मोटे शीशों में घूरकर गयास की ओर देखा और कहा, 'मण्टो साहब को सब मालूम है, तुम क्या भी कौन थी ?'

गयास ने अपने नीचे सीधे वाली ऐनक उतार कर उसकी कमानी ठीक करनी शुरू की। 'एक नहीं है, परमों आई थी टेलीफोन करने। किसी से हेस-हेसकर बातें कर रही थी। फोन कर चुकी तो मैंने उससे कहा, 'जनाब फ्रीस अदा कीजिए।' यह सुनकर मुस्कराने लगी। पर्स में हाथ डालकर उसने दस रुपये का नोट निकाला और कहा, 'हाजिर है।' मैंने कहा, 'मुक्रिया! आपका मुस्करा देना ही ताकती है।' बस दोस्ती हो गई। एक घण्टे तक यहाँ बैठी रही, जाते हुए दम मगान ले गई।' मसूद गामोश बैठा अपनी बेकारी के बारे में सोच रहा था, उठा, 'बकवास है, महज मुदफरेबी है।' यह कहकर उसने मुझे सजाम किया और चला गया।'

गयास अपनी बातों ने बहुत गुंथा था। मसूद जब अकस्मात् बोला तो उसका चेहरा किंचित मुर्झा गया। जलील थोड़ी के देर बाद गयास से सम्बोधन हो गया, 'क्या कहा ?'

गयास चौंका, 'क्या कहा ?'

जलील ने फिर पूछा, 'क्या माँग रही थी ?'

गयास ने कुछ मंकोच के पश्चात् कहा, 'मेडन फ्रॉम 'ब्रेजियर' जलील की आँखें ऐनक के मोटे शीशों के पीछे से चमकीं, 'साइज क्या है ?'

गयास ने जवाब दिया, 'थर्ड फ्लोर।'

जलील ने मुझसे सम्बोधन किया 'मण्टो साहब, यह क्या बात है अँगिया देखते ही मेरे अन्दर खरबद-सी होने लगती है।'

मैंने मुस्कराकर उससे कहा, 'आपकी कल्पना-शक्ति बहुत तेज है।'

जलील न समझा और न वह समझना चाहता था। उसके मस्तिष्क की थी, वह उस लड़की के बारे में बातें करना चाहता था। स ने टेलीफोन पर बातें की थीं। अतः मेरा उत्तर सुनकर हा, 'यार हमसे भी मिलाओ उसे।'

जलील ठीक करके ऐनक लगा ली, 'कभी यहाँ आयेगी तो

‘कुछ नहीं गार तुम हमारा यही शुष्का देते रहते हो। पिछले दिनों जब वह मर्दा आई थी क्या नाम था उसका ?—जमीला। मैंने आगे बढ़कर उसमें बात करनी चाही तो तुमने हाथ जोड़कर मुझमें मना कर दिया। मैं उसे खा तो न जाता।’ यह कहकर जलील ने ऐनक के मोटे शीशों के पीछे अपनी आँखें सिकोड़ ली।

जलील और गुयास दोनों में बचपना था। दोनों हर समय लड़कियों के बारे में सोचते रहते थे : खूबमूरत, मोटी, दुबली, भई लड़कियों के बारे में, लगे में बैठी हुई लड़कियों के बारे में; पैदल चलती और साइकिल सवार लड़कियों के बारे में। जलील इस मामले में गुयास से बाली से गया था। दफ्तर से किसी आवश्यक ब्यापकरण मोटर में निकलता; रास्ते में कोई लगे में बैठी या मोटर में सवार लड़की नजर आ जाती तो उसके पीछे अपनी मोटर लगा देता। यह उसका अत्यन्त प्रिय मनोरंजन था, परन्तु उसने कभी बदतमीजी न की थी। छुंछछाड़ से उसे डर लगता था। जहाँ तक बातोंलाप का सम्बन्ध था उसे उसका विजिता कहना चाहिए, वह बड़े-बड़े मजबूत किले जीत चुका था।

प्राइवेट फमरे में जब बाहर स्टोर से कोई स्त्री की भावाज घाती तो गयान उछल पड़ता और पंशी हटाकर एकादम बाहर निकल जाता। मर्दे प्राहकों से उसे कोई दिनबन्धी नहीं थी; उनसे उसका नीकर निपटता था।

दोनों अपने काम में होशियार थे। स्टोर किस प्रकार चलाया जाता है, उसे किस प्रकार लोकप्रिय बनाया जाता है इसमें गुयास को बड़ी दक्षता प्राप्त थी। इसी तरह जलील को प्रंस के सभी भागों का परिपूर्ण ज्ञान था। किन्तु पुरसन के समय वे केवल लड़कियों के सम्बन्ध में सोचते थे—काल्पनिक तथा वास्तविक लड़कियों के सम्बन्ध में।

स्टोर में किमी दिन जब कोई लड़की न घाती तो गुयास उदास हो जाता। यह उदासी वह जमीन से टेलिफोन पर उन लड़कियों के बारे में बार्ने करके दूर करता जो बकील उसके जान म फेमी हुई थी। जलील उन अपनी दिखयो का हाथ धताता और दोनों कुछ देर बातें करते। स्टोर में कोई प्राहक आता

या उधर प्रेस में किसी को जलील की ज़रूरत होती तो दिलचस्प बातों का यह क्रम टूट जाता ।

इस दृष्टि से न्यू पेरिस स्टोर बड़ी दिलचस्प जगह थी । जलील दिन में दो-तीन बार ज़रूर आना । प्रेस से किसी काम के किए निकलता तो चन्द्र मिनटों के ही लिए स्टोर में बाहर हो जाता । गयास ने किसी लड़की के बारे में छेड़ छ़ाड़ करता और उँगली में मोटर की चाबी गुमाता चला जाता ।

जलील को गयास ने यह शिकायत थी कि वह अपनी लड़कियों के बारे में बड़ी राजदारी से काम लेता है, उनका नाम तक नहीं बताता । छिप-छिप कर उनसे मिनता है, उनको उपहारादि देता है और अकैले-अकैले ऐश करता है । और यही शिकायत गयास को जलील से थी किन्तु दोनों के मंत्रीपूर्ण सम्बन्ध जैसे-के-तैसे ही थे ।

एक दिन स्टोर में एक काले बुक वाली लड़की आई, नकाब उल्टा हुआ था, चेहरा पसीने से शराबोर था, आते ही स्टूल पर बैठ गई । गयास जब उसकी ओर बढ़ा तो उसने बुक से पसीना पोछ कर उससे कहा 'पानी पिनाइये एक गिलास ।'

गयास ने फ़ौरन नीकर को भेजा कि एक ठण्डा लेमन ले आये । स्त्री ने छत के निश्चल पंखों को देखा और गयास से पूछा, 'पंखा क्यों नहीं चलाते आप ?'

गयास ने सिर-से-पैर तक क्षमा की मूर्ति बन कर कहा, 'दोनों खराब हो गये हैं; मालूम नहीं क्या हुआ ? मैंने आदमी भेजा है ।'

स्त्री स्टूल पर से उठी, 'मैं तो यहाँ एक मिनट नहीं बैठ सकती ।' यह कह कर वह शो-केसों को देखने लगी ।

'आदमी खाक शॉपिंग कर सकता है इस दोजख में ?'

गयास ने अटक-अटक कर कहा, 'मुझे अफ़सोस आप.....आप अन्दर तशरीफ़ ले चलिए ।' जिस चीज़ की ज़रूरत होगी मैं लाकर दूँगा ।'

स्त्री ने गयास की ओर देखा, 'चलिए ।'

गयास तेज कुदमों से भागे बढ़ा, पर्दा हटाया और स्त्री से कहा, 'तयारीक
शाइए ।'

स्त्री अंदर के कमरे में प्रविष्ट हो गई और एक कुर्सी पर बैठ गई ।
गयास ने पर्दा छोड़ दिया । दोनों भेरी नजरों से ओझल हो गये । कुछ क्षणों
के बाद गयास निकला और भेरे पास आकर उसने हीले से कहा, 'मण्टो
साहब, क्या मयाल है आपका इस लडकी के बारे में ?'

मैं मुस्करा दिया ।

गयास ने एक स्नाने से विविध प्रकार की लिपिस्टिकें निकाली और अन्दर
कमरे में ले गया । इतने में जलील की मोटर का हॉर्न बजा और वह उंगली
पर चाबी घुमाता हुआ प्रकट हुआ । आते ही उसने पुकारा, 'गयास, गयास !
आधो मई सुनो, वह कल वाला मामला मैंने सब ठीक कर दिया है।' फिर
उसने भेरी और देखा । 'मोखोह ! मण्टो साहब, आदाब अजं : गयास
कहाँ है ?'

मैंने जवाब दिया, 'अन्दर कमरे में ।'

'वह मैंने सब ठीक कर दिया मण्टो साहब ! अभी अभी पेट्रोल पम्प के
पाम मिली—पैदात चली जा रही थी । मैंने मोटर रोकी और कहा, जनाव,
यह मोटर आविर किस मजं की दवा है ?' उसे मजग छोड़कर भा रहा हूँ ।'
फिर उसने कमरे के पर्दे की ओर मुँह करके आवाज दी, 'गयास, बाहर
निकल वे !'

जलील ने उंगली पर जोर से चाबी घुमाई । 'व्यस्त है । अब इसने अन्दर
व्यस्त होना शुरू कर दिया है ।' कहकर उसने आगे बढ़कर पर्दा उठाया ;
एकदम जैसे उसके शोक-सा लग गया । पर्दा उसके हाथ में छूट गया । 'सॉरी !'
कहकर वह उल्टे क्रदम वापस आया और धबराये हुए स्वर में उसने मुझमें
पूछा, 'मण्टो साहब, 'कोन कहिए ?'

मैंने पूछा, 'कहाँ कोन ?'

'यह जो अन्दर बैठे होठों पर लिपिस्टिक लगा रही है ।'

मैंने जवाब दिया, 'मासूम नहीं, साहब है ।'

जलील ने ऐनक के मोटे शीशों के पीछे आँखें सुकेड़ों और पर्दों की तरफ देखने लगा। गयाम बाहर निकला; जलील से 'हलो जलील !' कहा और आईना उठाकर वापस कमरे में चला गया। दोनों बार जब पर्दा उठा तो जलील को स्त्री की हल्की-सी भलक नजर आई। मेरी पोर मुड़कर उसने कहा, 'ऐसा करता है पट्टा।' फिर बेचनी की स्थिति में वह धर-धर टहलने लगा। थोड़ी देर के बाद पर्दा उठा; स्त्री होठों को चूसती हुई निकली। जलाल की निगाहों ने उसे स्टोर के बाहर तक पहुँचाया। फिर उसने पलट कर कमरे का रुख किया। गयाम बाहर निकला रुमाल से होठ साफ करता। दोनों एक-दूसरे से करीब-करीब टकरा गये। जलील ने तान्र स्वर में उससे पूछा, 'यह क्या किस्सा घा भई ?'

गयाम मुस्कराया, 'कुछ नहीं।' यह कहकर उसने रुमाल से होठ साफ किये। गयाम ने जलील के चुटकी भरी, 'कौन थी ?'

'यार तुम ऐसी बातें न पूछा करो।' गयाम ने अपना रुमाल हवा में लहराया। जलील ने छीन लिया; गयाम ने झपट्टा भाकर वापस लेना चाहा।

जलील पंतरा बदल कर एक ओर हट गया। रुमाल खोल कर उसने गौर से देखा। जगह-जगह लाल निशान थे। ऐनक के मोटे शीशों के पीछे अपनी आँखें सुकेड़ कर उसने गयाम को घूरा।

'यह बात है !'

गयाम ऐसा चोर बन गया जिसे किसी ने चोरी करते-करते पकड़ लिया हो। 'जाने दो यार, इधर लाओ रुमाल।'

जलील ने रुमाल वापस कर दिया, 'बताओ तो सही कौन थी ?'

इतने में नौकर लेमन लेकर आया, गयाम ने उसे इतनी देर लगाने पर फिड़का, 'कोई मेहमान आये तो तुम हमेशा ऐसा ही किया करते हो।'

गयाम ने जलील से पूछा, 'यह लेमन उसी के लिए मँगवाया गया था।'

'हां यार, इतनी देर में आया है कमवस्त। दिल में कहती होगी प्यासा ही भेज दिया।' गयाम ने रुमाल जेब में रख लिया।

जलील ने शो-केस पर से लेमन का गिलास

‘हमारी ध्यान तो मुझ गई; लेकिन यार व
मुलाकात में तुमने हाथ साफ कर दिया ।’

गयास ने इमान निकाल कर अपने हाँठ
कहा, ‘बिगट ही गई; मैंने कहा देखो ठीक नई
मेरे झोठों का खुला मे गई ।’

एकदम असूद की आवाज आई, सब बकस
गयास चौंक पड़ा । असूद स्टोर के बाहर
किसी धीरे बात दिया । जलील फौरन ही ग
बार, तुम क्याओ फिर क्या हुआ ? यार चीख ।

गयास ने बबाब न दिया । असूद की आ
बाबना-ना गया था । जलील को एकदम याद
ही बकरी काम पर निकला है । उँगली पर व
कहा, ‘नइकी के बारे में फिर पूछो । सब
बसोकुम ।’ धीरे चला गया ।

2 मैंने मुस्कुराकर गयास से पूछा, ‘गयास ।
मुलाकात में आपने ...’

‘गयास झेंप गया; मेरी बात काटकर उसने
आप हमारे बुझने है । बलिये अन्दर बैठे, यही बस
हम अन्दर कमरे की धीरे बसने मने तो स्टोर
है । उतने ओर-ओर मे हार्न बजाया । गयास
अन्दर आया । गयास अन्दर आओ; बस स्टैण्ड में
बैठकी जनी है ।’

गयास उसके साथ चला गया; मैं मुस्कुराने बस
हम लोगन में बनीम मे बड़ी मुस्कुराते से व
कुछ क्लिपियन नइकी नीकर एक थी । उसे वह
कई बार मोटर में उसे अपने साथ लाया; लेकिन
है । गयास को इस बात पर बड़ा खेद था ।

गयास ने जलील से मजाक किया तो वह बहुत खिटापिटाया। उसके कान की लवें सुन्न हो गईं। नजरें झुकाकर उसने गाड़ी स्टार्ट की और यह जा; वह जा।

... वकील जलील के यह स्टैनो घुस-घुस में तो बड़ी रिजवं रही, लेकिन आखिर उससे पुल ही गई, 'बस अब चन्द दिनों ही में मामला पटा समझो।'

गयास अब ज्यादातर जलील से स्टैनो की बातें करता। जलील उससे उस लड़की के बारे में पूछना जिसने चिमट कर उसे चूम लिया था तो गयास बाम तौर पर यह कहता, 'कल उसका टेलीफोन आया, पूछने लगी 'आऊँ?' मैंने कहा, 'यही नहीं; तुम वक्त निकालो तो मैं किसी और जगह का इन्तजाम कर लूँगा।'

जलील उससे पूछता, 'बया कहा उसने?'

गयास उत्तर देता, 'तुम अपनी स्टैनो की सुनाओ।'

स्टैनो की बातें शुरू हो जातीं।

एक दिन मैं और गयास दोनों जलील के प्रेस गये; मुझे अपनी किताब के टाइटिल कवर के डिजाइन के बारे में मालूम करना था। दफ्तर में स्टैनो एक कोने में बैठी थी। लेकिन जलील नहीं था। स्टैनो से पूछा तो मालूम हुआ कि वह अभी-अभी बाहर निकला है। मैंने नीकर को भेजा कि उसे हमारे आगमन की सूचना दे। थोड़ी ही देर के बाद जलील आ गया। चिक उठाकर उसने मुझे सलाम किया और गयास से कहा, 'इधर आओ गयास।'

हम दोनों बाहर निकले। गयास को एक कोने में ले जाकर जलील ने लकर गयास से कहा, 'मैदान मार लिया। अभी-अभी तुम्हारे आने से देर पहले!' यह कहकर रुक गया और मुझसे सम्बोधित हुआ, 'जिएगा मण्टो साहब।' फिर उसने गयास को जोर से अपने साथ। 'बस मैंने आज उसे पकड़ लिया—विल्कुल इसी तरह—और इस ट्रेडल के पास।'

गयास ने पूछा, 'किसे ?'

जलील झुंझला गया। 'अबे अपनी स्टैनो को; कसम खुदा की मजा आ गया। यह देखो।' उसने अपना रुमाल पतलून की जेब से निकालकर हवा में सहाराया : उस पर सुर्खों के धब्बे थे।

एकदम ममूद की आवाज आई, 'बकवास है, महज खुद फरेबी है।'

जलील धीरे गयास धौंक उठे। मैं मुस्कराया : ट्रैडल के तबे पर सुल्लं रग की पतली-सी समतल तह फैली हुई थी। एक जगह पोंछने के कारण कुछ खराबें पड़ गई थीं।

वर्मा लड़की

ज्ञान की शूटिंग थी इसलिए किफायत जल्दी सो गया। प्लेट में घीर कोई नहीं था। बीबी-बच्चे राबलपिंडी चले गये थे। पड़ोसियों से उसे कोई दिलचस्पी नहीं थी। माँ भी बम्बई में लोगों को घपने पड़ोसियों से कोई सरोकार नहीं होता। किफायत ने झकेले ब्राण्डी के चार पेग पिये, खाना खाया, नौकरों को छुट्टी दी और दरवाजा बन्द करके सो गया।

रात के पाँच बजे के लगभग किफायत के सुमार-भरे कानों को घक की आवाज सुनाई दी। उसने झंझें खोली—नीचे बाजार में एक ट्राम दनदनाती हुई गुजरी। कुछ क्षण बाद दरवाजे पर बड़े जोरों की दस्तक हुई। किफायत उठा; पलंग से उतरा तो उसके नंगे पैर टखने तक पानी में चले गये। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि कमरे में इतना पानी कहाँ से आया और बाहर कौरी-डोर में इससे भी अधिक पानी था। दरवाजे पर दस्तक जारी थी; उसने पानी के बारे में सोचना छोड़ा और दरवाजा खोला।

ज्ञान ने जोर से कहा, 'यह क्या है?'

किफायत ने उत्तर दिया, 'पानी।'।

'पानी नहीं, औरत !' यह कहकर ज्ञान आधे झंघियारे कौरीडोर में दाखिल हुआ, उसके पीछे एक छोटे-से कद की लड़की थी।

ज्ञान को फर्श पर फैले हुए पानी का कुछ एहसास न हुआ। लड़की ने पाजामा ऊपर उठा लिया और छोटे-छोटे कदम उठाती ज्ञान के पीछे चली आई।

किफायत के मस्तिष्क में पहले पानी था, अब यह लड़की उसमें प्रविष्ट हो गई और हुबकियाँ लगाने लगी। सबसे पहले उसने सोचा कि यह कौन है—

शकल व मूरत तथा वस्त्रों से बर्मी मालूम होती है ! लेकिन ज्ञान उसे कहीं से लाया ?

ज्ञान अन्दर के कमरे में जाकर कपड़े तन्वील किये बिना ही पलंग पर लेटा और लेटते ही सो गया । किफायत ने उससे बात करनी चाही किन्तु उसने केवल हूँ-हाँ में उत्तर दिया और आँसू न रोलीं । किफायत ने उस लड़की की ओर एक नजर देखा जो सामने वाले पलंग पर बैठी थी; और बाहर निकल गया ।

रसोई में जाकर उसे ज्ञात हुआ कि खर का वह पाइप, जो रात को बड़ा ड्राम भरा करता था, बाहर निकला हुआ है । तीन बजे जब नल में पानी आया तो उससे तमाम कमरों में वाढ़ आ गई । तीनों नौकर बाहर गली में सो रहे थे । किफायत ने उन्हें जगाया और पानी निकालने के काम पर लगा दिया । वह खुद भी उनके साथ शरीक था । सब चुल्लुओं से पानी उठाते थे और बाल्टियों में डालते जाते थे । उस बर्मी लड़की ने उन्हें जब यह काम करते देखा तो झटपट सैण्डल उतार कर उनका हाथ बंटाने लगी ।

उसके छोटे, गोरे हाथ, उंगलियों के नाखून बढ़ाये हुए और सुर्खी लगे नहीं थे । छोटे-छोटे कटे हुये बाल थे जिनमें हल्की-हल्की लहरें थीं । मर्दाना किस्म का लेकिन खुला रेशमी पाजामा पहने थी । उस पर काले रंग का रेशमी कुरता था जिसमें उसकी छोटी-छोटी छातियाँ छिपी हुई थीं ।

जब उसने उन लोगों का हाथ बटाना शुरू किया तो किफायत ने उसे मना किया, 'आप तकलीफ न कीजिये, यह काम हो जायगा ।'

उसने कोई जवाब न दिया । छोटे-छोटे सुर्खी लगे होटों से मुस्कराई और काम में लगी रही । आधे घण्टे के अन्दर-ही-अन्दर तीनों कमरों से पानी निकल गया । किफायत धूलकर साफ 'चलो यह भी अच्छा हुआ । इसी बहाने सारा घर

वह
कमर
सो

के लिए स्नानागार में चली गई । किफायत विस्तर पर लेटा—नींद पूरी नहीं हुई थी,

लगभग नौ बजे वह जगा और जागते ही उसे सबसे पहले पानी का विचार आया; फिर उसने बर्मी लड़की के बारे में सोचा जो ज्ञान के साथ आई थी। वही स्वाब तो नहीं था; लेकिन वह सामने ज्ञान सो रहा है और फर्मा भी धुला हुआ है।

किफायत ने गौर से ज्ञान की ओर देखा; वह पनलून, कोट बल्कि जूते समेत झोधा सो रहा था, किफायत ने उसे जगाया, उसने एक आँख खोली और पूछा, 'क्या है?'

'वह लड़की कौन है?'

ज्ञान एकदम चौंका। 'लड़की! वहाँ है?' फिर फौरन ही चित्त लेट गया। 'मोह बकवास न करो, ठीक है।'

किफायत ने उसे फिर जगाने की कोशिश की पर वह सामोस सोया रहा। उसे साढ़े नौ बजे अपने काम पर जाना था। उसने जल्दी-जल्दी स्नान किया, शौच भी स्नानागार के भन्दर ही कर लिया। बाहर निकल कर ड्राइंग रूम में गया तो उसे भेज सजी हुई नजर आई।

सुबह नाश्ते पर भ्राम तौर पर किफायत के यहाँ बहुत ही थोड़ी-सी चीजें होती थीं। दो उबले हुए भण्डे, दो टोस्ट, मक्खन और चाय। मगर भ्राज भेज रंगीन थी, उसने गौर से देखा छिने हुए भण्डे विचित्र ढंग से कटे हुए थे कि फूल मानूम होते थे। सलाद था, बड़े सुन्दर ढंग से प्लेट में सजा हुआ। टोस्टों पर भी मीनाकारी की हुई थी। किफायत चकरा गया। रमोई में गया तो वह बर्मी लड़की चौकी पर बंठी भावने भंगीठी रत्ने कुछ कह रही थी। तीनों नीकर उसके, इंदे-मिंदे थे और हंस-हंसकर उससे बाने कर रहे थे। किफायत को देखकर वे उठ खड़े हुए। बर्मी लड़की ने भाँसों धुमाकर उमकी ओर देगा और मुस्करा दी।

किफायत ने उनसे बात करती चाही लेकिन वह कैसे करता; उमके क्या कहता? वह उसे जानता तक नहीं था। उमने अपने एक नीकर में मिठे इतना पूछा, 'नाश्ता आज किमने तैयार किया है बशीर?'

बशीर ने उस बर्मी लड़की की ओर संकेत किया, 'बाईबी ने!'

समय बहुत कम था। किफायत ने जल्दी-जल्दी उगका मञ्जीना नाश्ता खाया और कपड़े पहनकर अपने आफिस को चला गया। शाम को वापस आया तो वह बर्मी लड़की उगके स्लीपिंग सूट का डकनोता पाजामा पहने अपने कुर्ते पर इस्तारी कर रही थी। किफायत पीछे हट गया, क्योंकि वह सिर्फ पाजामा पहने थी।

‘आ जाइए।’

लहजा बड़ा आफ-मुबरा था। किफायत ने सोना कि बर्मी लड़की की वजाय शायद कोई और बोला है। जब वह अन्दर गया तो उस लड़की ने छोटे-छोटे होंठों पर मुस्कराहट पैदा करके उसे सलाम किया। किफायत की उपस्थिति में उसने कोई पर्दा अनुभव नहीं किया, बड़े संतोष के साथ वह अपने कुर्ते पर इस्तारी करती रही। किफायत ने देखा उसकी छोटी-छोटी मोल छातियों के दरम्यानी हिस्से में इस्तारी की गर्मी के कारण पसीने की नन्हीं-नन्हीं बूँदें जमा हो गई थीं।

किफायत ने ज्ञान के बारे में पूछने के लिए वशीर को आवाज देनी चाही पर रुक गया। उसने ऐसा करना उचित न समझा क्योंकि वह लड़की आधी नंगी थी। उसने हैट उतार कर रखा। थोड़ी देर इस अर्ध-नग्नता को देखा लेकिन कोई उत्तेजना अनुभव नहीं की। लड़की का शरीर वेदाग था; त्वचा बहुत ही कोमल थी। इतनी कोमल कि निगाहें फिसल-फिसल जाती थीं।

कुर्ते पर इस्तारी हो गई तो उसने स्विच आफ किया। एक कुर्ता और भी आ सफेद वोस्की का जो तह किया हुआ इस्तारी शुदा पाजामे पर रखा था। उसने ये सब कपड़े उठाये और किफायत से बोली, ‘मैं नहाने चली हूँ।’

यह कहकर वह नहाने चली गई। किफायत टोपी उतार कर सिर खुजलाने लगा। ‘कौन है यह?’

उसके दिमाग में बड़ी खुदबुद हो रही थी। जब भी वह उस लड़की के में सोचता सारी घटना उसके सामने आ जाती। रात को उसका उठना—ही-पानी; उसका दरवाजा खोलना और कहना, ‘पानी!’ और ज्ञान का उत्तर देना, ‘पानी नहीं औरत!’ और एक नन्हीं सी गुड़िया का छम से आ जाना।

किफायत ने दिल में कहा, 'हुदाओ जी, शान आयगा तो सब कुछ मालूम हो जायगा। लौंडिया है दिनचस्प। इतनी छोटी है कि जी चाहता है कि भादमी जेब में रखले। चलो ब्राडी पिये।'

बशीर ने ग्लाम, ब्राडी और बर्फादि सब कुछ ड्राइंग रूम में तिपाई पर रख दिया था। किफायत ने कपड़े बदले और पीनी शुरू कर दी। पहला पेग खत्म किया तो उसे स्नानागार के दरवाजा मुलने को 'चू' मुनाई दी। दूसरा पेग डालकर वह प्रतीक्षा करने लगा कि थोड़ी ही देर में वह बर्मी लडकी जरूर इधर आयेगी। परन्तु उसके नियत चार पेग समाप्त हो गए और वह न आई; भ्रान भी न आया। किफायत झुंझला गया। अन्दर बेड रूम में जाकर उसने देखा वह लडकी इस्तरी किए हुए कपड़े पहने अपनी गोल-गोल छातियों पर हाथ रखे बड़ी निश्चिन्ता से सो रही थी। इस्तरी वाली भेज पर उसके स्लीपिंग सूट का इकलौता पाजामा बड़ी अच्छी तरह तह किया हुआ रखा था।

किफायत ने वापस जाकर ब्राडी का एक डबल पेग ग्लाम में डाला और 'नोट' ही चढ़ा गया। थोड़ी देर के बाद उसका सिर घूमने लगा; उसने बर्मी लडकी के बारे में सोचने की कोशिश की मगर उसने ऐसा महसूस किया कि वह चुल्लुधुंधों में पानी भर-भर के उसके मस्तिष्क में डाल रही है। खाना खाने बिना वह सौफें पर लेट गया और उस बर्मी लडकी के सम्बन्ध में कुछ सोचने की चेष्टा करते हुए सो गया।

सुबह हुई तो उसने देखा कि वह मोफे की बजाय अन्दर पलंग पर है। उसने अपनी स्मरण-शक्ति पर जोर दिया—'मैं रात कब आया यहाँ? क्या मैंने खाना खाया था?'

किफायत को कोई जवाब न मिला। सामने वाला पलंग खाली था। उसने जोर से बशीर को आवाज दी; वह भागा हुआ अन्दर आया। किफायत ने उससे पूछा, 'ज्ञान साहब कहां हैं?'

बशीर ने जवाब दिया, 'रात को नहीं आये।'
... 'क्यों?'

मालूम नहीं साहब !'

‘वह बाईजी कहाँ हैं ?’

‘मछली तन रही हैं ।’

किफायत के दिमाग में मछलियाँ तनी जाने लगीं । उठकर रसोई में गया तो वह चौकी पर बैठी सामने अँगोठी रने मछली तन रही थी । किफायत को देखकर उसके हाँठों पर एक छोटी-सी मुस्कान पैदा हुई । हाथ उठाकर उसने सलाम किया और अपने कार्य में लीन हो गई । किफायत ने देखा तीनों नौकर बहुत प्रसन्न थे और बड़ी कार्यसाधकता से उस लड़की का हाथ बटा रहे थे ।

वशीर को कुछ दिनों की छुट्टी पर अपने घर जाना था । कई दिनों से वह बार-बार कहता था कि साहब मुझे तनखाह दे दीजिए : मेरे पास घर से कई खत आ चुके हैं, माँ बीमार है । रात को वह उसे तनखाह देना भूल गया था । अब उसे याद आया तो उसने वशीर से कहा, ‘इधर आओ वशीर, अपनी तनखाह ले लो । मैं कल दफ्तर से रुपये ले आया था ।’

वशीर ने वेतन ले लिया । किफायत ने उससे कहा, ‘नौ बजे गाड़ी जाती है, उसी से चले जाओ ।’

‘अच्छा जी !’ कहकर वशीर चला गया ।

नाश्ता बहुत स्वादिष्ट था; विशेषकर मछली के टुकड़े । उसने खाना शुरू करने से पहले वशीर के जरिये उस वर्मी लड़की को बुला भेजा, मगर वह न आई । वशीर ने कहा, ‘जी वह कहती हैं कि मैं नाश्ता वाद में करूँगी ।’

किफायत की आर्थिक स्थिति बहुत पतली थी; ज्ञान भी इसमें अपवाद न था । दोनों इधर-उधर से पकड़कर निर्वाह कर रहे थे । ब्राँडी का प्रबन्ध ज्ञान कर देता था; बाकी खाने-पीने का सिलसिला भी किसी-न-किसी तरह चल ही रहा था । जिस फिल्म कम्पनी में ज्ञान काम कर रहा था, उसका दीवाला निकलने ही वाला था किन्तु उसे विश्वास था कि कोई चमत्कार निश्चय ही होगा और उसकी कम्पनी सँभल जायेगी । शूटिंग हो रही थी, शायद, इसीलिए रात भी न आ सका था ।

नास्ता करने के पश्चात् किफायत ने भाँककर रसोई में देखा . लड़की अपने कार्य में निमग्न थी, तीनों नौकर उससे हँस-हँसकर बातें कर रहे थे । किफायत ने बशीर से कहा, 'मछली बहुत अच्छी थी ।'

लड़की ने मुडकर देखा : उसके होठों पर छोटी-सी मुस्कराहट थी ।

किफायत दफ्तर चला गया, उसे धाधा थी कि कुछ रुपयों का प्रबन्ध हो जायगा । लेकिन खाली जेब वापस आया । बर्मी लड़की अन्दर बड़े रूम में लेटी सचित्र पत्रिका देख रही थी । किफायत को देखकर बँठ गई और सलाम किया ।

किफायत ने सलाम का जवाब दिया और उससे पूछा, 'जान साहब आये थे ?'

'आये थे दोगहर को; खाना खाकर चले गये । फिर शाम को आये कुछ मिनटों के लिए ।' यह कहकर उसने एक और को हटकर तकिया उठाया और कागज में लिपटी हुई बोतल निकाली । 'यह दे गये थे कि आपको दे दूँ ।'

उसने बोतल पकड़ी, कागज पर ज्ञान के ये शब्द थे :

'कमबस्त यह चीज किसी न किसी तरह मिल जाती है, लेकिन पैसा नहीं मिलता । बहर हाल ऐश करो ।' —तुम्हारा ज्ञान

उसने कागज खोला बाँड़ी की बोतल थी । बर्मी लड़की ने किफायत की तरफ देखा और मुस्कराई; किफायत भी मुस्करा दिया, 'आप पीती हैं ?'

लड़की ने जोर से सिर हिलाया, 'नहीं ।'

किफायत ने नजर भरकर उसे देखा और सोचा, 'क्या छोटी-सी नन्ही-मुन्नी गुड़िया है ।'

उसका जो चाह कि उसके साथ बैठकर बातें करे । अतः उससे सम्बोधित हुआ, 'आइए इधर दूसरे कमरे में बैठते हैं ।'

'नहीं, मैं कपड़े धोऊँगी ।'

'इस समय ?'

‘उग समय अच्छा होता है; गान धीमे, सुवह गूग गये । उठते ही इस्तरी कर लिये ।’

किफायत थोड़ी देर खड़ा रहा; उसे कोई बात न सूझी तो ड्राइंग रूम में बैठकर त्रांटी पीनी शुरू कर दी । गाने का वक्त हो गया । उसने बर्मी लड़की को बुलाया पर उसने कहा :

‘मैं जान साहब के साथ गाऊंगी ।’

किफायत ने खाना खाया और उसके पलंग पर सो गया । रात के लगभग एक बजे उसकी आँख खुली : चांदनी रात थी; हल्की-हल्की रोशनी कमरे में फैली हुई थी । हवा भी बड़े मजे की चल रही थी । करवट बदली तो देखा सामने पलंग पर एक छोटी-सी सुडील गुड़िया ज्ञान के चौड़े, वालों भरे सीने के साथ चिमटी हुई है । किफायत ने आँखें बन्द कर लीं । थोड़ी देर के बाद ज्ञान की आवाज आई, ‘जाओ, अब मुझे सोने दो; कपड़े पहन लो ।’

स्प्रिंगों वाले पलंग की आवाज के साथ रेशम की सरसराहटें किफायत के कानों में दाखिल हुईं । थोड़ी देर के बाद किफायत सो गया । सुवह छः बजे उठा क्योंकि वह रात यह सोचकर सोया था कि सुवह जल्दी उठेगा । उसे ट्राम की बहुत लम्बी यात्रा तै करके एक आदमी के पास जाना था जिससे उसे कुछ मिलने की उम्मीद थी । पलंग से उतरा तो उसने देखा कि बर्मी लड़की नंगे फर्श पर उसके स्लीपिंग सूट का इकलीता पाजामा पहने अपने छोटे-से सुडील बाजू सिर के नीचे रखे बड़े सुकून से सो रही है । किफायत ने उसको जगाया; उसने अपनी काली-काली आँखें खोलीं । किफायत ने उससे कहा, ‘आप यहाँ क्यों लेटी हैं?’

उसके छोटे-छोटे होंठों पर नन्हीं-सी मुस्कराहट पैदा हुई; उठकर उसने जवाब दिया, ‘ज्ञान को आदत नहीं किसी को अपने पास सुलाने की ।’

किफायत को ज्ञान की इस आदत का पता था । उसने लड़की से कहा, ‘जाइए मेरे पलंग पर लेट जाइए ।’

लड़की उठी और किफायत के पलंग पर लेट गई ।

किफायत स्नानागार में गया । वहाँ रस्सी पर बर्मी लड़की के कपड़े लटक

रहे थे। किफायत साबुन मलकर नहाने लगा तो, उसका ख्याल उस लड़की के मुलायम जिस्म की तरफ चला गया जिस पर से निगाहे फिसल-फिसल जाती थीं।

स्नान करके किफायत ने कपड़े पहने। चूँकि जल्दी में था इसलिए ज्ञान को जगाकर उससे कोई बात न कर सका। सुबह का निकला रात के ग्याहरह बजे वापस आया—जेबें खाली थीं। बेडरूम में गया ज्ञान और वहाँ लड़की दोनों इकट्ठे सोये हुए थे। किफायत ने ड्राइंग रूम में बैठकर त्राँडी पीनी शुरू कर दी। बहुत थका हुआ था, मायूस वापस आया था। वहाँ लड़की के सम्बन्ध में सोचता-सोचता वही सोफे पर सो गया। सुबह पाँच बजे उठा। तिपाई पर उसका चौथा पैरा पानी में पड़ा बासी हो रहा था।

किफायत उठा; बेडरूम के नंगे फर्श पर वहाँ लड़की सो रही थी। ज्ञान भल्भारी के भाईने के सामने खड़ा टाई बाँध रहा था। टाई की गिरह-ठीक करके उसने दोनों हाथों में लड़की को उठाया और अपने पलंग पर लिटा दिया। मुझ तो उसने किफायत को देखा, 'क्यों भई, कुछ बन्दोबस्त हुआ रुपयो का?'

किफायत ने निराशापूर्ण स्वर में उत्तर दिया, 'नहीं।'

'तो मैं जाता हूँ; देखो शायद कुछ हो जाये।'

पूर्व इसके कि किफायत उसे रोके ज्ञान तैयारी से बाहर निकल गया। दरवाजा खुला तो उसकी आवाज आई, 'तुम भी कोशिश करना किफायत।'

किफायत ने पलट कर गलंग की तरफ देखा: लड़की बड़े मुकून के साथ सो रही थी। उसके नन्हें-से मीने पर छोटी-छोटी गोल-गोल छातिर्मा चमक रही थीं। किफायत कमरे से निकल कर स्नानागार में चला गया। अन्दर रस्ती पर लड़की के घुने हुए कपड़े लटक रहे थे।

नहा-धोकर बाहर निकला तो उसने देखा लड़की नीकरों के साथ नाश्ता तैयार करने में व्यस्त थी। जास्ता करके बाहर निकल गया।

चार दिन इती प्रहार गुजर गये। किफायत को उस लड़की के बारे में कुछ मायूम न हो सका। ज्ञान कभी रात को देर से आता था, कभी दिन को बहुत जल्दी निकल जाता था। यही हाल किफायत का था; दोनों परेशान थे।

पाँचवें रोज जब वह सुबह उठा तो वशीर ने क़िफ़ायत को ज्ञान का पर्चा दिया। उसमें लिखा था : 'बुदा के लिए किसी-न-किसी तरह दस रुपये पंदा करके बर्मी लड़की को दे दो।'

लड़की सड़ी इस्तरी कर रही थी, केवल ब्लाउज की आस्तीन बाकी रह गई थी जिस पर वह बड़े सलीके से इस्तरी फेर रही थी। क़िफ़ायत ने उसकी ओर देखा। जब उनकी निगाहें चार हर्डें तो बर्मी लड़की मुस्करा दी। क़िफ़ायत सोचने लगा कि वह दस रुपये कहाँ से पंदा करे। वशीर पास सड़ा था, उसने क़िफ़ायत से कहा : 'साहब, श्घर आइए।'

क़िफ़ायत ने पूछा, 'क्या बात है?'

'जी कुछ कहना है।'

वशीर ने एक ओर हटकर दस रुपये का नोट निकाला और क़िफ़ायत को दे दिया। 'मैं नहीं गया अभी तक साहब।'

क़िफ़ायत नोट लेकर सोचने लगा, 'नहीं, नहीं। तुम रखो लेकिन तुम गये क्यों नहीं अभी तक?'

'साहब, चला जाऊँगा कल-परसों। आप रखिए ये रुपये।'

क़िफ़ायत ने नोट जेब में डाल लिया, 'अच्छा मैं शाम को लौटा दूँगा तुम्हें।'

कपड़े-बपड़े पहनकर जब बर्मी लड़की नाश्ता कर चुकी तो क़िफ़ायत ने उसे दस रुपये का नोट दिया और कहा, 'ज्ञान साहब ने दिया था कि आपको दे दूँ।'

लड़की ने नोट ले लिया और वशीर को आवाज दी। वशीर आया तो उसने कहा, 'जाओ टैक्सी ले आओ।'

वशीर चला गया तो क़िफ़ायत ने उससे पूछा, 'आप जा रही हैं?'

'जी हाँ।'

यह कहकर वह उठी और वेड रूम में चली गई। वह अपना रूमाल इस्तरी करना भूल गई थी। क़िफ़ायत ने उससे बातें करने का इरादा किया तो क़ी आ गई। रूमाल हाथ में लेकर वह रवाना होने लगी। क़िफ़ायत को

सलाम किया और कहा, 'अच्छा जी, मैं चलती हूँ । ज्ञान को मेरा सलाम बोला देना ।'

फिर उसने तीनों नौकरो से हाथ मिलाये और चली गई । सबके चेहरे पर उदासी छा गई ।

पौने घण्टे के बाद ज्ञान आया । वह कुछ लेकर आया था । आते ही उसने किफायत से पूछा, 'कहाँ हैं वह बर्मा लड़की ?'

'चली गई ।'

'कैसे ? दस रुपये दिये थे तुमने उसे ?'

'हाँ ?'

'तो ठीक है ।' ज्ञान कुर्सी पर बैठ गया ।

किफायत ने पूछा, 'कौन थी यह लड़की ?'

'मालूम नहीं ।'

किफायत सिर से पैर तक आश्चर्य की मूर्ति बन गया । 'बया मतलब ?'

ज्ञान ने उत्तर दिया, 'मतलब यही कि मैं नहीं जानता कौन थी ।'

'भूठ ।'

'तुम्हारी कसम सच कहता हूँ ।'

किफायत ने पूछा, 'कहाँ से मिल गई थी तुम्हें ?'

ज्ञान ने टाँगें मेज पर रख दी और मुस्कराया । 'अजीब दास्तान है यार ! पानी की बाढ़ आने वाली रात मैं शकर के यहाँ चला गया । वहाँ बहुत थी । अन्धेरी स्टेशन से गाड़ी में सवार हुआ तो सो गया । गाड़ी मुझे सीधे चचे गेट ले गई । वहाँ मुझे चौकीदार ने जगाया, 'उठो ।' मैंने कहा, 'भाई, मुझे ग्रांट रोड जाना है ।' चौकीदार हँसा, 'आप तीन स्टेशन आगे चले आये हैं ।' उतरा । दूसरे प्लेटफार्म पर अन्धेरी जाने वाली आम्बिरी गाड़ी खड़ी थी, मैं उसमें सवार हो गया । गाड़ी चली तो फिर मुझे नींद आ गई । सीधा अन्धेरी पहुँच गया ।'

किफायत ने पूछा, 'मगर इसका लड़की से क्या सम्बन्ध ?'

'तुम सून तो सो ।' ज्ञान ने सिगरेट सुलगाया । 'अन्धेरी पहुँचा । यान्त्रिक ज्व

मेरी आँख खुली तो क्या देखना है कि मैं एक छोटी-सी मोडिया के साथ निपटा हुआ हूँ। पानी तो मैं क्या, यह नाम नहीं थी। मैंने पूछा, 'कौन हो तुम?' वह मुस्कराई। मैंने फिर पूछा, 'कौन हो भई तुम?' वह मुस्कराई और कहने लगी, 'तो इसकी देर से मुझे मुझे रहे और यह पूछने हो मैं कौन हूँ?' मैंने जिनका नाम मैं कला, 'सच्चा!' वह हँसने लगी। मैंने दिमाग पर जोर देकर सोचना उचित न समझा और उसे अपने साथ भीन लिया। सुबह तीन बजे तक हम दोनों लोडकामों की एक बेंच पर सोने रहे। साढ़े तीन की पहली गाड़ी आई तो उसमें सवार हो गए। मेरा विचार था कि प्रबन्ध करते उसे कुछ रुपये दूँगा—यहाँ पहुँचे तो पानी का तूताना चाया हुआ था। है ना दिलचस्प सामान ?'

हिलायत ने कहा, 'पानी दिलचस्प है। मगर वह इतने दिन क्यों रही यहाँ ?'

शान ने गिगरेट फाँस पर फेंका, 'वह कहाँ रही, मैंने उसे रखा। प्रसल में वह सो रही कि मेरे पास कुछ था ही नहीं, जो उसे देता। बस दिन गुजरते गये। मैं बहुत शर्मिन्दा था। कल रात मैंने उससे साफ कह दिया, 'देखो भई, दिन बढ़ा जा रहे हैं। तुम ऐसा करो मुझे अपना पता दे दो। मैं तुम्हारा हक चुम्की यहाँ पहुँचा दूँगा। आजकल मेरा हाल बहुत पतला है।'

हिलायत ने पूछा, 'यह सुनकर उसने क्या कहा ?'

शान ने सिर हिलाया। अजीब ही लड़की थी। कहने लगी, 'यह क्या कहती हो,' मैंने तुमसे क्या माँगा है? लेकिन दस रुपये मुझे दे देना। मेरा घर यहाँ से बहुत दूर है; टैक्सी में जाऊँगी। मेरे पास एक पैसा भी नहीं।'

हिलायत ने प्रश्न किया, 'नाम क्या था उसका ?'

शान ने जवाब दिया।

टाँगें भोज पर से हटाई, 'नहीं यार, मैंने उससे नाम नहीं

खुशिया

खुशिया सोच रहा था ।

वनवारी से काले तम्बाकू वाला पान लेकर वह उसकी दुकान के साथ उस पत्थर के चबूतरे पर बंठा था जो दिन के वक्त टायरो और मोटरो के विभिन्न पुजों से भरा होता है । रात को साढ़े आठ बजे के करीब मोटर के पुजों और टायर बेचने वालों की यह दुकान बन्द हो जाती है और यह चबूतरा खुशिया के लिए खाली हो जाता है ।

वह काले तम्बाकू वाला पान धीरे धीरे चबा रहा था और सोच रहा था कि गाढ़ी तम्बाकू मिली पीक उसके दाँतो की रीखों से निकलकर उसके मुँह में इधर-उधर फिमल रही थी और उसे ऐसा लगता था कि उसके विचार दाँतो तने उसकी पीक में धुल रहे हैं । शायद यही कारण है कि वह उसे फेंकना नहीं चाहता था ।

खुशिया पान की पीक मुँह में पुलपुला रहा था और उस घटना के बारे में सोच रहा था जो उसके साथ अभी-अभी घटी, यानी भाष घटे पहले ।

वह उस चबूतरे पर नित्य की भाँति बंठने से पहले सेतवाही की पाँचवीं गली में गया था । मंगलौर से जो नयी छोकरी कान्ता भाई थी, उसी के नुस्खे पर रहती थी । खुशिया से किमी ने कहा था कि वह अपना मकान बदल रही है अतएव इसी बात का पता लगाने के लिए वहाँ गया था ।

कान्ता की सोली का दरवाजा उसने खटखटाया । अन्दर से भावाज भाई, 'कौन है ?' इस पर खुशिया ने कहा, 'मैं खुशिया !'

आवाज दूसरे कमरे से आई थी। थोड़ी देर बाद दरवाजा खुला। खुशिया अन्दर घुसा। जब कान्ता ने दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया, तब खुशिया ने मुड़कर देखा। उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब उसने कान्ता को विलकुल नंगी देखा, विलकुल नंगी ही रामभो क्योंकि वह अपने अंगों को सिर्फ एक तौलिये से छिपाये हुए थी। छिपाये हुए भी तो नहीं कहा जा सकता क्योंकि छिपाने की जिननी चीजें होती हैं वे गव-भी-सब खुशिया की चकित आँखों के सामने थीं।

‘कहो खुशिया, कैसे आए ?में अब नहाने ही वाली थी। बैठो, बैठो...बाहर चाय वाले से अपने लिए एक कप चाय के लिए तो कह आये होते...जानते हो, वह मुझा रामू यहाँ से भाग गया है।’

खुशिया जिसकी आँखों ने कभी औरत को यों अचानक नंगा नहीं देखा था, वेहद घबरा गया। उसकी समझ में न आता था कि क्या कहे। उसकी निगाहें जो एकदम नग्नता से चार हो गयी थीं, वह अपने आपको कहीं छिपाना चाहती थीं।

उसने जल्दा-जल्दी सिर्फ इतना कहा, ‘जाओ...जाओ तुम नहा लो !’ फिर एकदम उसकी जवान खुल गई, ‘पर जब तुम नंगी थीं तो दरवाजा खोलने की क्या जरूरत थी ?...अन्दर से कह दिया होता, मैं फिर आ जाता..... लेकिन जाओ...तुम नहा लो।’

कान्ता मुस्कराई, ‘जब तुमने कहा—मैं हूँ खुशिया, तो मैंने सोचा क्या हर्ज है, अपना खुशिया ही तो है, आने दो...’

कान्ता की यह मुस्कराहट अभी तक खुशिया के दिल-दिमाग में तैर रही थी। इस वकत भी कान्ता का नंगा जिस्म मोम के पुतले की तरह उसकी आँखों के सामने खड़ा था और पिघल-पिघल कर उसके अन्दर जा रहा था।

उसका जिस्म सुन्दर था। पहली बार खुशिया को मालूम हुआ था कि शरीर बेचने वाली औरतें भी ऐसा सुडौल शरीर रखती हैं। उसको उस बात पर हैरत हुई थी। पर सबसे अधिक आश्चर्य उसे इस बात पर हुआ

या कि नग-धड़ंग वह उसके सामने खड़ी हो गई और उसको लाज तक न भाई क्यों ?

इसका जवाब कान्ता ने यह दिया था—“जब तुमने कहा खुशिया है, तो मैंने सोचा क्या हज़ है, अपना खुशिया ही तो है—माने दो ।’

कान्ता और खुशिया एक ही पेशे में शरीक थे । वह उमका दलनाल था इम दृष्टि से वह उसी का था—पर यह कोई कारण नहीं था कि वह उसके सामने नगी हो जाती । कोई मात बात थी । कान्ता के शब्दों में खुशिया कोई और ही धर्म कुरेद रहा था ।

यह धर्म एक ही समय इतना स्पष्ट और इतना अस्पष्ट था कि खुशिया किन्तो खास नतीजे पर नहीं पहुँच सका था । उम समय भी वह कान्ता के नग शरीर को देख रहा था जो बोलको पर मढ़े हुए चमड़े की भाँति तना हुआ था । उसकी खुडकती हुई निगाहों से बिलकुल बेपरवाह । कई बार उस विमूढ स्थिति में भी उसने उमके सःयने-सालोने शरीर पर टोह देने वाली निगाहें गाड़ी थी, पर उसका एक रोझी तक भी न कपर्कपाया था । वस उस सार्वत्रिक पत्थर की मूर्ति के समान वह खड़ी रही जो अनुभूतिहीन हो !

‘भई, एक मढ़े उसके सामने खड़ा था—मढ़े, जिसकी निगाहें कपड़ों में भी औरत के जिस्म तक पहुँच जाती हैं और जो परमात्मा जाने खयाल ही खयाल में जाने कहाँ-कहाँ पहुँच जाता है । लेकिन वह जरा भी न घबराई और—और उमकी आँखें ऐसा समझ लो कि अभी लाँड़ी से धुलकर आई है—उमको घोड़ी-सी लाज तो आनी चाहिए थी । जरा भी मुर्खी दोदों में वेदा होनी चाहिए थी । मान लिमा, कस्वी थी, पर कस्विया यों नगी तो नहीं खड़ी हो जाती ।’

दम धर्म उसे दल्लानी करते ही गए थे और इन दस वर्षों में वह पेशा कराने वाली लडकियों के सारे भेदों से वाकिफ हो चुका था । मिमाल के तीर पर उगे यह मालूम था कि पायथोनी के घालिरी सिरे पर जो छोकरी एक नौजवान लड़के को भाई बना कर रहती है, इसलिए ‘अछूत कन्या’ का रिकांड ‘काहे करता मूरख प्यार प्यार—’ अपने टूटे हुए बाजे पर बनाया करती

हे कि उसे अशोक कुमार से बुरी तरह से डरक है । कई मनचले नौंठे अशोक कुमार से उसकी मुलाकात कराने का भांग्रा देकर अपना उल्लू सीधा कर चुके थे । उसे यह भी मालूम था कि दादर में जो पंजाबिन रहती है, केवल इसलिए कोट-पतलून पहनती है कि उसके एक यार ने उससे कहा था कि तेरी टाँगें तो बिलकुल उस अशोक सिन्धुवा की तरह हैं जिसने 'मराको' उर्फ 'सूने-तमघ्रा' में काम किया था । यह फिल्म उसने कई बार देगी और जब उसके यार ने कहा कि मॉनिंग टिट्टेच इसलिए पतलून पहनती है कि उसकी टाँगें बहुत सुन्दर हैं और उसने उन टाँगों का दो लाख का बीमा करा रखा है तो उसने भी पतलून पहननी शुरू कर दी, जो उसके नितम्बों में फँसकर आती थी और उसे यह भी मालूम था कि मजगाँव वाली दक्षिणी छोकरी सिर्फ इसलिए कॉलेज के गूबगूरत लौंटों को फाँसती है कि उसे एक सूबसूरत बच्चे की माँ बनने का शौक है । उसको यह भी पता था कि वह कभी अपनी इच्छा पूरी न कर सकेगी, इसलिए कि वह बाँझ है, और उस काली मद्रासिन की वादत, जो हर समय कानों में हीरे की बूटियाँ पहने रहती थी, उसे यह बात अच्छी तरह मालूम थी कि उसका रंग कभी सफेद नहीं होगा और वह उन दवाओं पर बेकार पैसा खर्च कर रही है जो वह आये दिन खरीदती रहती है ।

उसको उन सभी छोकरियों का अन्दर-बाहर का हाल मालूम था जो उसके पेशे में शामिल थीं । मगर उसको यह पता न था कि एक दिन कान्ता कुमारी, जिसका असली नाम इतना कठिन था कि उसे वह उम्र भर याद नहीं कर सकता था, उसके सामने नंगी खड़ी हो जाएगी और उसको जिन्दगी के सबसे बड़े ताज्जुब में डाल देगी ।

सोचते-सोचते उसके मुँह में पान की पीक इतनी इकट्टी हो गई थी कि अब वह मुश्किल से छालियों के उन नन्हें-नन्हें रेजों को चबा सकता था जो उसके दाँतों की रीखों में से इधर-उधर फिसलकर निकल जाते थे । उसके तंग माथे पर पसीने की नन्हें-नन्हें बूँदे उभर आईं जैसे मलमल में पनीर को थोरे से दबा दिया गया हो.....उसके पुरुषत्व को धक्का-सा पहुंचता

था जब वह कान्ता के नये जिस्म को अपनी कल्पना में देखता था। उसे महसूस होता था जैसे उसका अपमान हुआ है।

एक दम उसने अपने मन में कहा, 'भई यह अपमान नहीं है तो क्या है' यानी एक छोकरी नग-घडग तुम्हारे सामने खड़ी हो जाती है '... ' तुम खुशिया ही तो हो'... खुशिया न हुआ साला वह बिल्ला ही गया जो उसके विस्तर पर हर समय ऊँघता रहता है' और क्या !'

अब उसे विदबास हो गया कि सचमुच उसका अपमान हुआ है। वह मर्द था और उसको इस बात की प्रज्ञात रूप से भासा थी कि औरतें चाहे शरीफ हों, चाहे बाजारू उसको मर्द ही समझेंगी और उसके साथ अपने बीच वह पर्दा कायम रखेंगी जो एक मुद्दत से चला आ रहा है। वह तो सिर्फ यह पता लगाने के लिए कान्ता के यहाँ गया था कि वह कब तक मकान बदल रही है और कहाँ जा रही है? कान्ता के पास उसका जाना बिल्कुल व्यापार में सम्बन्धित था। अगर खुशिया कान्ता के बारे में सोचता कि जब वह उसका दरवाजा गट-खटायेगा तो वह घन्दर क्या कर रही होगी तो उसको कल्पना में अधिक-से-अधिक इतनी ही बातें आ सकती थी।

—सिर पर पट्टी बाँधे बैठ रही होगी।

—बिल्ले के बालों से पिस्सू निकाल रही होगी।

—उस बाल-सफा पाउडर से अपनी बगलों के बान उड़ा रही होगी जो इतनी बांस भारता था कि खुशिया को नाक बर्दास्त नहीं कर सकती थी।

—पलंग पर झूठी बँटी तास फँचाये पेरोन्स खेलने में व्यस्त होगी।

बस इतनी चीजें थी, जो उसके दिमाग में आती थी। घर में यह किसी को रसती नहीं थी, इसलिए इस बात का प्रयास ही नहीं था करना था। पर खुशिया ने तो यह सोचा ही नहीं था। वह तो बाम में बर्हा गया था कि 'कान्ता' यानी कपड़े पहिने वाली कान्ता, मत्रलय यह कि वह कान्ता ब्रिमको वह हमेशा कपड़ों में देखा करता था, उसके सामने बिल्लुल नंगी खड़ी हो गई—बिल्लुल नगी ही समझो, क्योंकि एक छोटा सा सौन्दर्य सब कुछ तो छिपा नहीं सकता। खुशिया को वह दुःख-देग कर ऐसे महसूस हुआ था जैसे छिपका उसके

निं प्रा गिरा है—

हाथ में रक्त गया है और केल्वे का सूया फिलाल कर उनके माग नंगा हो गया है । नहीं उने कुछ और ही महसूस हय, था जेमे - यह स्वयं न होना । गुजिया मगर वान यही तक ही समाप्त हो जाती तो कुछ भी मगर यहाँ मुसीबत अपने आत्मनय का लिनी-न-लिनी होने से दूर कर देगा । — 'जब तुमने कहा यह था पड़ी थी कि उन वीरों का मे मुक्तता कर कहा थाये'—यह वान उने गुजिया है, तो मेने सोचा, अपना गुजिया ही तो है, वाने चाये जा रही थी ।

। जिस तरह कान्ता

'माली मुक्तता रही थी' यह वान-वान बडबडायातजर आरि थी । यह नंगी थी, उस तरह उसी मुक्तताष्ट गुजिया को नगी तक दिखाई दिया था मुक्तताष्ट ही नहीं, उने कान्ता का जरीर भी उस हय व जेने उस पर रदा फिरो हुआ है ।

पड़ोस की एक औरत

उसे वान-वान वनपन के वे दिन याद आ रहे थे जब ह वाल्टी पानी से भर उससे कहा करती थी, गुजिया धेदा, जा दीड़कर जा, या के बनाये हुए पर्दे के चा । जब वह वाल्टी भर कर लाया करता था वह धोतीरत दे । मेने मुँह पर पीछे से कहा करती थी, अन्दर आकर यहाँ मेरे पास गेती का पर्दा हटा कर नाथुन मला हुआ है । मुझे कुछ सुभाई नहीं देता । वह धुन की भाग में लिपटी वाल्टी उसके पास रख दिया करता था । उस समय साबुकिसी तरह की उथल-हुई नंगी औरत उसे नजर आती थी, पर उसके मन में पुथल पैदा नहीं होती थी ।

ला ! वच्चे और मर्द

'भई मैं उस समय वच्चा था । विल्कुल भोला-भहै । मगर अब तो मैं में बहुत फर्क होता है । वच्चों से कान पदा करता है और अट्ठाईस साल पूरा मर्द हूं मेरी उम्र इस वक्त लगभग अट्ठाईस साल भी नंगी खड़ी नहीं के जवान आदमी के सामने तो कोई बूढ़ी औरत होगी ।'

सारी बातें नहीं थीं

कान्ता ने उसे क्या समझा था ? क्या उसमें वेही कि वह कान्ता को जो एक नौजवान मर्द में होती हैं ? इसमें कोई सन्देह ; किन चोर-दृष्टि से क्या एकाएक नंग-धड़ंग देख कर बहुत घबरा गया था । ले

उसने कान्ता को उन चीजों का जायजा नहीं लिया था जो रोजाना इस्तेमाल के बावजूद घसली हातल पर बापस थी और क्या आश्चर्य के साथ उसके दिमाग में यह सवाल आया था कि दग रुपये में कान्ता बिल्कुल महँगी नहीं और दसहरे के दिन बैंक का बाबू जो दो रुपये की रिप्रायत न मिलने पर बापस चला गया था, बिल्कुल गधा था? और इन सबके ऊपर क्या एक क्षण के लिए उसके सारे पुद्दों में एक अजीब विस्म का तनाव नहीं पैदा हो गया था? और उसने एक ऐसी भगड़ाई नहीं लेनी चाही थी, जिससे उसकी हड्डियाँ तक बटखने लगेँ..... फिर क्या कारण था कि मंगलौर की उस सावली छोकरो ने उसको मद न समझा और सिर्फ... सिर्फ खुशिया रामभ कर उसको अपना सब कुछ देगने दिया?

उसने गुस्से में घ्राकर पान की गाड़ी पीक घूक दी जिसने फुटपाथ पर कई बेल-बूटे बना दिये। पीक घूककर वह उठा और ट्राम में बैठकर अपने घर चला गया।

घर में उसने नहा-धोकर नई धोती पहनी। जिस विल्डिंग में रहता था, उसकी एक दुकान में रोलून था। उसके भन्दर जाकर उसने धाईने के सामने पहले बालों में कंघी की फिर एकाएक कुछ स्याल आया। वह कुर्मी पर बँठ गया और बड़ी गम्भीरता से उसने दाढ़ी मूँढने के लिए नाई से कहा। आज चूँकि वह दूसरी बार दाढ़ी मुँढवा रहा था, इसलिए नाई से कहा, 'भरे भई खुशिया भूल गये क्या? सुबह मीने ही तो तुम्हारी दाढ़ी मूँढी थी।' इस पर खुशिया ने बड़ी गम्भीरता से दाढ़ी पर उल्टा हाथ फेरते हुए कहा, 'खुँटी अच्छी तरह नहीं निकली....' !'

अच्छी तरह खुँटी निकलवा कर और चेहरे पर पाउडर मलवा कर वह मलून से बाहर निकला। सामने टैक्सियो का अड्डा था। बम्बई के शास अन्दाज में उसने 'शी.....शी' करके एक टैक्सी ड्राइवर को अपनी ओर आकर्षित किया और उँगली के इशारे से उसे टैक्सी लाने के लिए कहा।

जब वह टैक्सी में बँठ गया तो ड्राइवर ने घूमकर उससे पूछा—'कहाँ जाना है साहब?'

इन चार शब्दों ने श्रीर विशेष रूप से 'साहब' शब्द ने खुशिया को सचमुच खुश कर दिया। मुस्कराकर उसने बड़े दोस्ताना लहजे में जवाब दिया, 'बता-येंगे। पहले तुम आपेरा हाऊस की तरफ चलो—लैंग्मटन रोड होते हुए.....सामने ?'

ड्राइवर ने मोटर की लाल भंडी का सिर नीचे दबा दिया। 'टन टन' हुई श्रीर टैक्सी ने लैंग्मटन रोड का रुत किया। लैंग्मटन रोड का जब आखिरी सिरा आ गया तो खुशिया ने ड्राइवर को आदेश दिया, 'वायें हाथ मोड़ लो !'

टैक्सी वायें हाथ मुड़ गई। अभी ड्राइवर ने गीयर भी न बदला था कि खुशिया ने कहा, 'यह सामने वाले खम्भे के पास रोक लेना जरा !'

ड्राइवर ने ठीक खम्भे के पास टैक्सी खड़ी कर दी। खुशिया दरवाजा खोलकर बाहर निकला और एक पान वाले की दुकान की ओर बढ़ा। यहाँ से उसने पान लिया और उस आदमी से जो कि दुकान के पास खड़ा था, चन्द वात्ते की ओर उसे अपने साथ टैक्सी पर बिठाकर ड्राइवर से बोला, 'सीधे ले चलो !'

देर तक टैक्सी चलती रही। खुशिया ने जिधर इशारा किया, ड्राइवर ने उधर स्टीयरिंग फिरा दिया। रौनक वाले कई बाजारों से होते हुए टैक्सी एक गली में दाखिल हुई, जिसमें धुंधली-सी रोशनी थी और बहुत कम लोग आ-जा रहे थे। कुछ लोग सड़क पर विस्तर जमाए लेटे थे। उनमें से कुछ बड़े इत्मीनान से चम्पी करा रहे थे। जब टैक्सी उन चम्पी कराने वालों से आगे निकल गई और एक काठ के बंगले-नुमा मकान के पास पहुंची तो खुशिया ने ड्राइवर को ठहरने के लिए कहा, 'बस, यहाँ रुक जाओ !'

टैक्सी ठहर गई तो खुशिया ने उस आदमी से, जिसको वह पान वाले की दुकान से अपने साथ लाया था, कहा 'जाओ—मैं यहाँ इन्तजार करता हूँ !'

वह आदमी मूर्खों की तरह खुशिया की ओर देखता हुआ, टैक्सी से बाहर निकला और सामने वाले लकड़ी के मकान में घुस गया।

खुशिया जमकर टैक्सी के गद्दे पर बैठ गया। एक टाँग दूसरी टाँग पर रखकर उसने जेब से वीड्री निकालकर सुलगाई और एक-दो कश लेकर बाहर

सड़क पर फँक दी। वह ध्रब बढ़ा बेचनी था, इसलिए उसे लगा कि टैंकरी का एंजिन बन्द नहीं हुआ। उसके सीने में चूँकि फडफड़ाहट-सी हो रही थी, इसलिए वह समझा कि ड्राइवर ने बिल बढ़ाने के लिए पेट्रोल छोड़ रखा है। अतः उसने तेजी से कहा—‘यों बेकार एंजिन चालू रखकर तुम कितने पैसों और बढ़ा लोगे?’

ड्राइवर ने घूमकर खुशिया की ओर देखा और कहा, ‘सिठ एंजिन तो बन्द है।’

जब खुशिया को अपनी गलती का एहसास हुआ तो उसकी बेचनी और भी बढ़ गई और उसने कुछ कहने के बदले भ्रोंठ खवाने शुरू कर दिए। फिर एकाएकी सिर पर वह किस्तीनुमा काली टोपी पहन कर, जो अब तक उसकी बगल में दबी हुई थी, उसने ड्राइवर का कंधा हिलाया और कहा, ‘देखो, अभी एक छोकरी आएगी। जैसे ही अन्दर आए तुम मोटर चला देना ‘……समझे?…… घबराने की कोई बात नहीं है, मामला ऐसा-वैसा नहीं है।’

इतने में सामने लकड़ी वाले भकान से दो आदमी बाहर निकले। आगे-आगे खुशिया का दोस्त था और उसके पीछे-पीछे कान्ता, जिसने शोल रंग की साड़ी पहिन रखी थी।

खुशिया भट से उम तरफ को सरक गया जिधर झंघेरा था। खुशिया के दोस्त ने टैंकरी का दरवाजा खोला और कान्ता को अंदर दाखिल करके दरवाजा बन्द कर दिया। उसी समय कान्ता की चकित भावाज सुनाई दी, जो बीस से मिलती-जुलती थी—‘खुशिया तुम?’

‘हाँ मैं……लेकिन तुम्हें रुपये मिल गए हैं न?’ खुशिया की मोटी भावाज बुलन्द हुई—‘देखो ड्राइवर जुहू ले चलो।’

ड्राइवर ने सैल्फ दबाया। एंजिन फडफड़ाने लगा। वह बात जो कान्ता ने कही, सुनाई न दे सही। टैंकरी एक धक्के के साथ धागे बढ़ी और खुशिया

के दोस्त को सड़क के बीच चकित-विस्मित छोड़ उस अर्ध-प्रकाशित गली में गायब हो गई ।

इसके बाद किसी ने खुशिया को मोटरों की दुकान के उस पत्थर के चबू-तरं पर नहीं देगा ।

फ़ोभा वाई

हैदराबाद से गहाव आया तो उसने बम्बई सेण्ट्रल स्टेशन के प्लेटफार्म पर पहला कदम रखते ही हनीफ से कहा, 'देखो भाई, आज शाम को वह मामला ज़रूर होगा। वरना याद रखो, मैं वापस चला जाऊँगा।'

हनीफ को मालूम था कि वह 'मामला' क्या है। अतएव शाम को उसने टैक्सी ली। शहाब को साथ लिया। ग्राण्ट रोड के नाके पर एक दल्लाल को बुलाया और उससे कहा, 'मेरे दीम्त हैदराबाद से भाये हैं। इनके लिए छाकरी चाहिए।'

दल्लाल ने अपने कान से उड़ती हुई बीड़ी निकाली और उसको होठों में दबाकर कहा, 'दकनी चलेगी?'

हनीफ ने शहाब की तरफ सवालिया नज़रों से देखा। शहाब ने कहा, 'नहीं भाई, मुझे कोई मुसलमान चाहिए।'

'मुसलमान?' दल्लाल ने बीड़ी को चूसा—'चलिये!' और यह कहकर वह टैक्सी की अगली सीट पर बँठ गया। ड्राइवर से उमने कुछ कहा। टैक्सी स्टार्टे हुई और विभिन्न बाजारों से होती हुई फ़ोरजेट स्ट्रीट के साथ वाली गली में दाखिल हुई। यह गली एक पहाड़ी पर थी। बहुत ऊँचान थी। ड्राइवर ने गाड़ी को फ़र्स्ट गियर में डाला। हनीफ को ऐसा महसूस हुआ कि रास्ते में टैक्सी रुककर वापस चलना शुरू कर देगी। मगर ऐसा न हुआ। दल्लाल ने ड्राइवर को ऊँचान के ठीक प्राथिरी सिरे पर अहाँ चौक-सा बना था, रुकने के लिए कहा।

हनीफ कभी इस तरफ नहीं आया था। ऊँची पहाड़ी थी जिसके दायीं

तरफ एकदम डलान थी। जिस बिल्डिंग में दल्लाल दो मंजिलें थीं। हालांकि दूसरी ओर की बिल्डिंगें थीं। हनीफ को वाद में मालूम हुआ कि डलान के तीन मंजिलें नीचे थीं जहाँ लिपट जाती थी।

शहाब और हनीफ खामोश बैठे रहे, उन्होंने कोई दल्लाल ने उस लड़की की बहुत प्रशंसा की थी जिसकी में गया था। उसने कहा था, 'वह बड़े अच्छे परिवार तौर पर आपके लिए निकाल कर ला रहा हूँ।'

दोनों सोच रहे थे, यह लड़की कौसी होगी जो जा रही है।

थोड़ी देर के बाद दल्लाल प्रकट हुआ; वह झकेला कहा, 'गाड़ी वापस करो।' और यह कहकर वह गाड़ी एक चक्कर लेकर मुड़ी; तीन-चार बिल्डिंगों से कहा, 'रोक लो।' फिर वह हनीफ से सम्बोधित हुई रही थी, कौसे आदमी हैं। मैंने कहा, 'नम्बर वन।'

दस-पन्द्रह मिनट के बाद टैक्सी का दरवाजा के साथ बंद गई। रात का समय था, गली में हनीफ दोनों उसे अच्छी तरह न देख सके। सीट चलो।

टैक्सी तेजी से उतरने लगी।

हनीफ के पास कोई जगह नहीं थी, जहाँ कोई जैसा तै पाया था, वे डाक्टर खान साहब पास हास्पिटल में नियुक्त था। उसे वहीं दो कमरे मिले आते ही उसे फोन कर दिया था कि वह हनीफ के आयेगा और 'मामला' साथ होगा। चुनावे टैक्सी दल्लाल सी रुपये लेकर ग्राण्ट रोड पर उतर गया।

रास्ते में भी शहाब और हनीफ उस स्त्री को

कोई विशेष बातचीत भी न हुई । जब उसने अपने ठेठ हैररावादी लहजे में पूछा, 'आपका उस्मे गरामी (धुम नाम) ?' तो स्त्री ने उत्तर दिया, 'फोमा बाई ।'

'फोमा बाई ?' हनीफ सोचता रह गया कि यह कैसा नाम है ।'

डाक्टर खान उनकी प्रतीक्षा कर रहा था । सबसे पहले शहाब कमरे में प्रविष्ट हुआ, दोनों गले मिले और एक-दूसरे को खूब गालियाँ दी ।

डाक्टर खान ने जब एक जवान औरत को दरवाजे में देखा तो एकदम ब्यामोस हो गया । 'आइये, आइये ।' उसने अपने सीने पर हाथ रखा । डाक्टर खान आप ?' उसने शहाब की ओर देखा ।

शहाब ने उस स्त्री की ओर दृष्टि डाली । स्त्री ने कहा, 'फोमा बाई ।'

डाक्टर खान ने बढ़कर उससे हाथ मिलाया, आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई । फोमा बाई मुक्कराई, 'मुझे भी खुशी हुई ।'

शहाब और हनीफ ने एक-दूसरे की ओर देखा । डा० खान ने दरवाजा बन्द कर दिया और अपने मिश्रों से कहा, 'आप दूसरे कमरे में चले जाइये, मुझे कुछ काम करना है ।'

शहाब ने जब फोमा बाई से कहा, 'चलिये ।' तो उसने डाक्टर खान का हाथ पकड़ लिया, 'नहीं आप भी तफरीफ लाइये ।'

'आप तशरीफ ले चलिये, मैं आता हूँ ।' यह कहकर डाक्टर खान ने अपना हाथ छोड़ा लिया ।'

शहाब और हनीफ फोमा बाई को अन्दर ले गये । थोड़ी देर बातचीत हुई तो उन्हें मालूम हुआ कि उसकी जुबान मोटी थी, वह 'श' और 'स' नहीं उच्चार सकती थी; उसके बदले उसके मुँह से 'फ' निकलता था । इस प्रकार उसका नाम शोभा बाई था । लेकिन कुछ देर और बातें करने के पदचात उनको पता चला कि शोभा उसका असली नाम नहीं था । वह मुसलमान थी; जयपुर उसका वतन था, जहाँ से वह चार वर्ष हुए भागकर बम्बई चली आई थी । इसने अधिक उसने अपने बारे में न बताया ।

साधारण-सी मुखाश्रुति, धाँस बड़ी नहीं थी; नाक भी सुन्दर थी । ऊपरी

तरफ एकदम ढलान थी। जिस विल्डिंग में दल्लाल दाखिल हुआ, उसकी केवल दो मंजिलें थीं। हालांकि दूसरी शोर की विल्डिंगें सब-की-सब चार मंजिला थीं। हनीफ को वाद में मालूम हुआ कि ढलान के कारण उस विल्डिंग की तीन मंजिलें नीचे थीं जहाँ लिपट जाती थी।

शहाब और हनीफ खामोश बैठे रहे, उन्होंने कोई बात न की। रास्ते में दल्लाल ने उस लड़की की बहुत प्रशंसा की थी जिसको लाने वह उस विल्डिंग में गया था। उसने कहा था, 'वह बड़े अच्छे परिवार की लड़की है। स्पेशल तीर पर आपके लिए निकाल कर ला रहा हूँ।'

दोनों सोच रहे थे, यह लड़की कौसी होगी जो 'स्पेशल तीर पर' निकाली जा रही है।

थोड़ी देर के बाद दल्लाल प्रकट हुआ; वह अकेला था। ड्राइवर से उसने कहा, 'गाड़ी वापस करो।' और यह कहकर वह अगली सीट पर बैठ गया। गाड़ी एक चक्कर लेकर मुड़ी; तीन-चार विल्डिंगें छोड़कर दल्लाल ने ड्राइवर से कहा, 'रोक लो।' फिर वह हनीफ से सम्बोधित हुआ, 'आ रही है। पूछ रही थी, कैसे आदमी हैं। मैंने कहा, 'नम्बर वन।'

दस-पन्द्रह मिनट के बाद टैक्सी का दरवाजा खुला और एक स्त्री हनीफ के साथ बैठ गई। रात का समय था, गली में प्रकाश कम था। शहाब और हनीफ दोनों उसे अच्छी तरह न देख सके। सीट पर बैठते ही उसने कहा, 'चलो।'

टैक्सी तेजी से उतरने लगी।

हनीफ के पास कोई जगह नहीं थी, जहाँ कोई 'मामला' हो सकता। अतः जैसा तै पाया था, वे डाक्टर खान साहब पास चले गये। वह मिलिटरी हास्पिटल में नियुक्त था। उसे वहीं दो कमरे मिले हुए थे। शहाब ने बम्बई आते ही उसे फोन कर दिया था कि वह हनीफ के साथ रात को उसके पास आयेगा और 'मामला' साथ होगा। चुनांचे टैक्सी मिलिटरी हस्पताल पहुंची। दल्लाल सौ रुपये लेकर ग्राण्ट रोड पर उतर गया।

रास्ते में भी शहाब और हनीफ उस स्त्री को भली प्रकार न देख सके;

कोई विशेष बातचीत भी न हुई । जब उमने अपने ठेठ हैररावादी लहजे में पूछा, 'भापका उस्मे गरामी (शुभ नाम) ?' तो स्त्री ने उत्तर दिया, 'फोमा बाई ।'

'फोमा बाई ?' हनीफ सोचता रह गया कि यह कौसा नाम है ।'

डाक्टर खान उनको प्रतीक्षा कर रहा था । सबसे पहले शहाब कमरे में प्रविष्ट हुआ; दोनों गले मिले और एक-दूसरे को खूब गालियाँ दी ।

डाक्टर खान ने जब एक जवान औरत को दरवाजे में देखा तो एकदम सामोस हो गया । 'आइये, आइये !' उसने अपने सीने पर हाथ रखा । 'डाक्टर खान घाप ?' उसने शहाब की ओर देखा ।

शहाब ने उस स्त्री की ओर दृष्टि डाली । स्त्री ने कहा, 'फोमा बाई ।'

डाक्टर खान ने बढ़कर उससे हाथ मिलाया, आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई । फोमा बाई मुस्कराई, 'मुझे भी खुशी हुई ।'

शहाब और हनीफ ने एक-दूसरे की ओर देखा । डा० खान ने दरवाजा बन्द कर दिया और अपने मित्रों से कहा, 'आप दूसरे कमरे में चले जाइये; मुझे कुछ काम करना है ।'

शहाब ने जब फोमा बाई से कहा, 'चलिये ।' तो उसने डाक्टर खान का हाथ पकड़ लिया, 'नहीं आप भी तफरीफ लाइये ।'

'आप तफरीफ ले चलिये, मैं जाता हूँ ।' यह कहकर डाक्टर खान ने अपना हाथ छोड़ा लिया ।'

शहाब और हनीफ फोमा बाई को अन्दर ले गये । थोड़ी देर बातचीत हुई तो उन्हें मालूम हुआ कि उसकी जुवान मोटी थी, वह 'श' और 'र' नहीं उच्चार सकती थी; उसके बदले उसके मुँह से 'फ' निकलता था । इस प्रकार उसका नाम शोमा बाई था । लेकिन कुछ देर और बातें करने के पश्चात उनको पता चला कि शोमा उसका असली नाम नहीं था । वह मुसलमान थी; जयपुर उसका बतन था, जहाँ से वह चार वर्ष हुए भागकर बम्बई चली आई थी । इससे अधिक उसने अपने बारे में न बताया ।

साधारण-सी मुसाकृति, भ्र्राँसों बड़ी नहीं थीं; नाक भी सुन्दर थी । ऊपर

६२

होंठ के ठीक बीच में एक छोटे-से जन्म का निशान था। जब वह बात करती थी तो यह निशान थोड़ा-सा फँस जाता था। गले में वह जड़ाऊ नेकलेस पहने हुए थी; दोनों हाथों में सोने की नूड़ियाँ थीं।

बहुत ही बातूनी स्त्री थी। बैठते ही उसने पधर-उधर की बातें शुरू कर दीं। हनीफ और शहाब केवल 'हूँ-हाँ' करते रहे। फिर उसने उनके बारे में पूछना आरम्भ किया कि वे क्या करते हैं, कहाँ रहते हैं, क्या उम्र है, फादी-फुदा हैं या गैर-फादीफुदा। हनीफ इतना दुबला क्यों है, फहाब ने दो कृत्रिम दाँत क्यों लगाये हैं। गोपन खोता था तो उसका इलाज डॉ० खान से क्यों न कराया। फरमाता क्यों है, फेर क्यों नहीं गाता।

शहाब ने उसे कुछ शेर सुनाये। शोभा ने बड़े जोरों की दाद दी। जब शहाब ने यह शेर सुनाया :

'खेतों को दे लो पानी अब वह रही है गंगा,
फुध फर लो नौजवानों उठती जवानियाँ हैं !'

तो शोभा उछल पड़ी। 'वाह जनाब शहाब वाह ! बहुत अच्छा फेर है। उठती जवानियाँ हैं, वाह वाह !'

इसके बाद शोभा ने अनगिनत शेर सुनाये—विल्कुल बेजोड़, बेतुके। जिनका न सिर था न पैर। शेर सुनाकर उसने शहाब से कहा, 'फहाब फाहब, मजा आया आपको ?'

शहाब ने जवाब दिया, 'बहुत।'

शोभा ने शर्माकर कहा, 'ये फेर मेरे थे। मुझे फायरी का बहुत फीक है।'

शहाब और हनीफ दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा और मुस्करा दिये। इसके बाद सिर्फ एक सही शेर शोभा सुनाया :

'कभी तो मिरे दर्द-दिल को खबर ले,
मिरे दर्द से आफ़ना होने वाले।'

यह शेर हनीफ कई बार सुन चुका था और शायद पढ़ भी चुका था। लेकिन शोभा ने कहा, 'हनीफ फाहब, यह फेर भी मेरा है।'

हनीफ ने खूब प्रशंसा की, 'माफ़ अल्लाह आप तो कमात करती हैं।

शोभा चौकी ! 'माफ़ कीजियेगा, मेरी जुवान में तो कुछ खराबी है, लेकिन आपने क्यों माफ़ अल्लाह के बदले माफ़ अल्लाह कहा ?'

हनीफ और शहाब दोनों बड़े बेइस्तिमार हम पड़े। शोभा भी हंगने लगी। इतने में डाक्टर खान आ गया। उसने अन्दर प्रवेश करते ही शोभा ने कहा, 'क्यों जनाव, इतनी हँसी किस बात पर आ रही है ?'

अधिक हँसने के कारण शोभा की आँखों में आँसू आ गये थे। उसने कमाल में उनको पीछा और डाक्टर खान से कहा, 'एक बात ऐसी हुई थी हम हँस पड़े।'

डाक्टर खान ने भी हँसना शुरू कर दिया।

'शोभा ने उससे कहा, 'आइये, बैठिये। चारपाई की एक ओर सरक कर उसने डाक्टर खान का हाथ पकड़ा और उसे अपने पास बिठा लिया।

फिर दोरी शायरी शुरू हो गई। शोभा ने लम्बी-लम्बी चार बेतुकी गजलें सुनाईं। सबने दाद दी मगर शहाब उक्ता गया। वह 'मामला' चाहता था। हनीफ उसके बदले हुए तैवर देसकर भाग गया, चुनाचिं उमने शहाब से कहा, 'अच्छा भाई, मैं इजाजत चाहता हू। इन्गा अन्नाह बन मुबह मुस्तादान होगी।'

वह यह कहकर कुर्सी पर से उठा। लेकिन शोभा ने उनका हाथ पकड़ लिया, 'नहीं, भाप नहीं जा सकते।'

'हनीफ ने उत्तर दिया, 'मैं भाफी चाहता हूँ। मेरी बीबी इनेजार कर गयी होगी।'

'ओह ! ...लेकिन नहीं। भाप थोड़ी देर और जम्दर बैठें। अभी तो निफं म्यारह बजे हैं। शोभा ने आग्रह किया।

शहाब ने एक जम्हाई ली, 'बहुत बक्त हो गया है।'

शोभा ने मुस्कराकर शहाब की ओर देखा, 'मैं फारी रात आने पर हूँ। शहाब का मनोबिचार दूर हो गया।

हनीफ थोड़ी देर बैठा, फिर दरसव ली और बना गया। दूसरे दिन मुबह

नों बजे के करीब शहाब आया और रात की बात सुनाने लगा, 'अजीबो गरीब औरत थी यह फोभा बाई ! पेट पर बालिशत भर का आपरेशन का निशान था । कहती थी कि यह एक लकड़ी वाले सेठ की रनेल थी । उसने एक फिल्म कम्पनी खोल दी थी; उसके चेकों पर दस्तखत शोभा ही के होते थे । मोटर थी जो अब तक मौजूद है; नीकर-चाकर थे । लकड़ी वाला सेठ उससे ब्रेहद मुहचवत करता था । उसके पेट का आपरेशन हुआ तो उसने एक हजार रुपये यतीमखाने को दिये ।

हनीफ ने पूछा, 'यह लकड़ी वाला सेठ अब कहाँ है? '

शहाब ने जवाब दिया, दूसरी दुनियाँ में टाल खोले बैठा है ।'

औरत खूब थी यह फोभा बाई । मैं दूसरे कमरे में सो गया तो वह डाक्टर खान के साथ लेट गई । सुबह पाँच बजे खान ने उससे कहा कि अब तुम जाओ तो शोभा ने कहा 'अच्छा मैं जाती हूँ । लेकिन ये मेरे जेवर तुम अपने पास रख लो । मैं अकेली इनके साथ बाहर नहीं निकलती ।

हनीफ ने पूछा, 'डाक्टर ने जेवर रख लिये?'

शहाब ने सिर हिलाया, 'हाँ ! पहले तो उसका खयाल था कि नकली हैं मगर दिन की रोशनी में जब उसने देखा तो असली थे ।'

'और वह चली गई?'

'हाँ चली गई । यह कहकर कि वह किसी रोज आकर अपने जेवर वापस ले जायगी ।

'यह तुमने बड़े अचम्भे की बात सुनाई ।'

'खुदा की कसम हकीकत है ।' शहाब ने सिगरेट सुलगाया, 'इसीलिए तो मैंने कहा कि यह फोभा बाई अजीबो-गरीब औरत है ।'

हनीफ ने पूछा, 'वैसे कैसी औरत थी?'

शहाब भेंप-सा गया, 'भई, मुझे ऐसे मामलों का कुछ पता नहीं । यह तुम खान से पूछना; वह एक्सपर्ट है ।'

शाम को दोनों खान से मिले । जेवर उसके पास सुरक्षित थे । शोभा लेने

नहीं आई थी। खान ने बताया, 'मेरा खयाल है शोभा किसी दिमागी सदमे का शिकार है।'

शहाब ने पूछा, 'तुम्हारा मतलब है, पागल है ?'

खान ने कहा, 'नहीं, पागल नहीं है। लेकिन उसका दिमाग यकीनन नार्मल नहीं। वेहद मुखलिस औरत है—एक तड़का है उसका जयपुर में। उसे बराबर दो सौ रुपये माहवार भेजती है। हर तीसरे महीने उससे मिलने जाती है। जयपुर पहुंचते ही चुर्का भोड़ लेती है, वहाँ उसे पर्दा करना पड़ता है।'

हनीफ ने कहा, 'यह तुमने कैसे समझा कि उसका दिमाग नार्मल नहीं।'

खान ने जवाब दिया, 'भई, मेरा खयाल है नार्मल औरत होती तो अपने डेढ़-दो हजार के जेवर एक अजनबी के पाग क्यों छोड़ जाती? इसके मलावा उसे मौफिया के इजेरशन लेने की भावत है।'

शहाब ने पूछा, 'नसा होता है एक किसम का।'

खान ने जवाब दिया, 'बहुत ही खतरनाक किसम का, शराब से भी बदतर।'

'उसकी भावत कैसे पछो उसे ?' शहाब ने मेज पर से पेपर बेट उठाकर दवात पर रख दिया।

'भांगरेसन हुआ तो बिगड़ गया। दई बहुत खान था। उसकी कम करने के लिए डाक्टर मौफिया के इजेरशन देने रहे लगभग दो महीने तक। बस भावत हो गई।' डाक्टर खान ने मौफिया और उसके परिपामों पर एक भाषण सा देना शुरू कर दिया।

एक सप्ताह हो गया किन्तु शोभा न आई। शहाब मौफिस हैदराबाद चला गया था। डाक्टर खान हनीफ के पास जेवर लेकर आया कि खोरी दे भायें। दोनों ने शॉट रोड के नाके पर उम दल्लाब को बहूज तलाश किया जो शहाब और हनीफ को शोभा के मकान के पास ले गया था; मगर वह नहीं मिला। हनीफ को मानुम था कि गली खोरी तो है। डाक्टर खान ने कहा, 'ठीक है, हम पता लगा लेंगे। ये जेवर मैं धरने पास नहीं रखना चाहता, खोरी हो गई तो क्या करूंगा ? वह तो अनोख हैपरवाह औरत है।'

दोनों टैक्सी में वहाँ पहुँच गये। हनीफ ने डाक्टर खान को विर्लिंग बता दी और कहा, 'मैं नहीं जाऊँगा भई, तुम तलाश करो उसे।'

डाक्टर खान अकेला उम विर्लिंग में दाखिल हुआ। एक-दो आदमियों से पूछा मगर शोभा का कुछ पता नहीं चला। नीचे से लिफ्ट ऊपर को आई तो होटल का छोकरा प्यालियां उठाये बाहर निकला। खान ने उससे पूछा तो उसने बताया, 'गबरो निचली मंजिल के आगिरी प्लैट पर चले जाओ।' लिफ्ट के जरिये खान नीचे पहुँचा; आगिरी प्लैट की घंटी बजाई। थोड़ी देर के बाद एक बुढ़िया ने दरवाजा खोला। खान ने उससे पूछा, 'शोभा आई हैं?'

बुढ़िया ने उत्तर दिया, 'हां हैं।'

खान ने कहा, 'जाओ उनसे कहो कि डाक्टर खान आये हैं।'

अन्दर से शोभा की आवाज आई, 'आइये, डाक्टर साहब आइये।'

डाक्टर खान अन्दर दाखिल हुआ। छोटा-सा ड्राइंग रूम धा चमकीले फर्नीचर से भरा हुआ। फर्श पर कालीन बिछे हुए थे। बुढ़िया दूसरे कमरे में चली गई। फौरन ही शोभा की आवाज आई, 'डाक्टर साहब अन्दर आ जाइये, मैं बाहर नहीं आ सकती।'

डाक्टर खान दूसरे कमरे में प्रविष्ट हुआ। शोभा चादर ओढ़े लेटी थी। खान ने उससे पूछा, 'क्या बात है?'

शोभा मुस्कराई। 'कुछ नहीं डाक्टर साहब, तेल-मालिश करा रही थी।'

डाक्टर पलंग के पास कुर्सी पर बैठ गया। उसने जेब से रुमाल निकाला जिसमें जेवर बँधे थे; खोल कर उसे पलंग पर रख दिया। कब तक मैं तुम्हारे इन जेवरों की हिफाजत करता रहूँगा? तुम ऐसी आई कि उधर का रुख तक न किया?'

शोभा हंसी। 'मुझे बहुत काम थे। लेकिन आपने वयों तकलीफ की? मैं खुद आकर ले आती।' फिर उसने बुढ़िया से कहा, 'चाय मंगाओ डाक्टर साहब के लिये।'

डाक्टर ने कहा, 'नहीं, मुझे अब जाना है।'

'कहाँ?'

‘हस्पताल ।’

‘टैक्सी में आये हैं आप ?’

‘हाँ ।’

‘बाहर खड़ी है ?’

डा० ने सर के इशारे से ‘हाँ’ कहा ।

‘तो आप चलिये, मैं आती हूँ ।’ यह कहकर उसने जेवर तकिये के नीचे रख दिए और कमाल डाक्टर खान को दे दिया । डा० खान हनीफ के पास पहुंचा तो उसने पूछा, ‘मिल गई ?’

डाक्टर मुस्काराया, ‘मिल गई, आ रही है ।’

पन्द्रह-बीस मिनट के बाद शोभा ने नेजी से टैक्सी का दरवाजा खोला और अन्दर बैठ गई ।

डा० खान के कमरे में देर तक फिजूल किस्म की शेरबाजी होती रही । संशय-विशय तथा प्रेम-मुहब्बत के असह्य निम्नकोटि के दौर शोभा ने सुनाए और कहा वे सब उसके अपने दौर हैं । डा० खान और हनीफ ने खूब दाद दी । शोभा बहुत खुश हुई और कहने लगी, ‘याकूब फेंक घटो मुझमें फंर सुना करते थे ।’

याकूब सेठ वह लकड़ी वाला सेठ था जिसने शोभा के लिए एक फिल्म कम्पनी खोली थी । डा० खान और हनीफ हँस पड़े; शोभा भी हँसने लगी ।

डाक्टर खान और शोभा की दोस्ती हो गई । शुरू-शुरू में तो वह हफ्ते में दो बार आती थी । अब करीब-करीब रोज आने लगी । रात को आती, सुबह सबेरे जाती । शाम को नियमित रूप से माफिया का इजेक्शन लेती । डाक्टर इजेक्शन लगाने के पहले उसके बाजू पर मुद्र करने वाली दवा लगा देता था । यह ठडी-ठडी चीज उसे बहुत पसन्द थी ।

तीन महीने बीते तो शोभा जयपुर जाने के लिए तैयार हुई । मोटर कंपनी डाक्टर खान के हवाले कर दी कि वह उसका ध्यान रखे । डाक्टर उसे स्टेशन पर छोड़ने गया । देर तक गाड़ी में एक-दूसरे से बातें करते रहे । जब गाड़ी

चलने लगी तो शोभा ने एकदम डा० का हाथ पकड़कर कहा, मुझे क्यों एकदम ऐसा लगा है कि कुछ होने वाला है ?'

डा० खान ने कहा, 'क्या होने वाला है ?'

शोभा के चेहरे ने वहनत बरसने लगी, 'मालूम नहीं मेरा दिल बँठा जा रहा है ।'

'डा० खान ने उसे दम-दिलासा दिया । गाड़ी चल दी; दूर तक शोभा का हाथ हिलता रहा ।

जयपुर से शोभा के दो पत्र आये जिनसे केवल इतना पता चला था कि वह सकुशल पहुंच गई है । जय वापस आयगी तो उसके लिए बहुत उपहार लायगी । उसके बाद एक कार्ड आया जिसमें लिखा था, 'मेरी श्रद्धेरी जिन्दगी में सिर्फ एक दिया था वह कल खुदा ने बुझा दिया; भला हो उसका ।'

हनीफ ने ये शब्द पढ़े तो उसकी आँखों में आँसू आ गये । 'भला हो उसका !' में अपार संताप था ।

वहुत समय व्यतीत हो गया; शोभा का कोई खत न आया । पूरा एक वर्ष बीत गया । डा० खान को उसका कोई पता न चला । शोभा अपनी मोटर उसके हवाले कर गई थी । वह उस बिल्डिंग में गया जिसकी सबसे निचली मंजिल में वह रहा करती थी । फ्लैट पर कोई और ही कब्जा जमाये था एक एक दलाल किस्म का आदमी । डा० खान आखिर थक-हारकर खामोश हो गया । मोटर उसने एक गैरेज में रखवा दी ।

एक दिन हनीफ घबराया हुआ हस्पताल में आया; उसको चेहरा पीला था डा० खान को ड्यूटी से हटाकर वह एक तरफ ले गया और कहा, 'मैंने आज शोभा को देखा है !'

डा० खान ने हनीफ का वाजू पकड़ कर एकदम पूछा, 'कहाँ ?'

'चीपाटी पर ! मैं उसे बिल्कुल न पहचानता क्योंकि वह सिर्फ हड्डियों का ढाँचा थी ।'

डा० खान खोखली आवाज में बोला, 'हड्डियों का ढाँचा ?'

हनीफ ने ठंडी ग्राह भरी . 'शोभा नहीं थी, उमकी छाया थी । आँखें छदर को धँती हुईं, यात बिखरे और धूल भरे; यो चलती थी कि जैसे अपने आपको घगोट रही है । मेरे पास आई और कहा, 'मुझे पाँच रुपये दो ।' मैंने उसे न पहचाना । पूछा, 'क्या करोगी पाच रुपये लेकर ?' बोली, 'मार्फिया का टीका लूँगी ।' एकदम मैंने गौर से उसकी तरफ देखा—उमके ऊपरी होठ पर जहम का निशान मौजूद था । मैं चिल्लाया, 'शोभा !' उसने यकी हुई वीरान आँखों ने मुझे देखा और पूछा, 'कौन हो तुम ?' मैंने कहा, 'हनीफ !' उसने जवाब दिया, 'मैं किसी हनीफ को नहीं जानती ।' मैंने तुम्हारा जिक्र किया कि तुमने उसे बहुत तलाश किया, बहुत ढूँढा । यह सुनकर उसके होठो पर हल्की-सी मुस्कराहट पैदा हुई—और कहने लगी, उससे कहना मत ढूँढ मुझे । मेरी तरफ देखो मैं इतनी मुद्दत से अपना खोया हुआ लाल ढूँढती फिर रही हूँ; यह दूटना बिल्कुल बेकार है । कुछ नहीं मिलता । लाओ पाँच रुपये दो मुझे । मैंने उसे पाँच रुपये दिये और कहा, 'अपनी मोटर तो ले जाओ डा० खान ने ।' वह कहवहे लगाती हुई चली गई ।

खान ने पूछा, 'कहाँ ?'

हनीफ ने जवाब दिया, 'मालूम नहीं; किसी डा० के पास गई होगी ।'

डा० खान ने बहुत तलाश किया मगर शोभा का कुछ पता न चला ।



वादशाहत का खात्मा

टेलिफोन की घण्टी बजी। मनमोहन पाम ही में बैठा था। उसने रिसेवर उठाया और कहा, 'हलो, फोर फोर फोर फाइव वन।' दूमरी ओर से स्त्री की पतली-सी आवाज आई, 'सारी, रींग नंबर। मनमोहन ने रिसेवर रख दिया और किताब पढ़ने में निमग्न हो गया। यह किताब वह लगभग बीस बार पढ़ चुका था, इसलिए नहीं कि उसमें कोई विशेष बात थी बल्कि दफ्तर में, जो बीरान पड़ा था, एक सिर्फ यही किताब थी जिसके अंतिम पन्ने कीड़े खा गये थे।

एक हफ्ते से दफ्तर पर मनमोहन का आधिपत्य था क्योंकि उसका मालिक जो कि उमका दोस्त था कुछ रुपया कर्ज लेने के लिए कहीं बाहर गया हुआ था। मनमोहन के पास चूँकि रहने के लिए कोई जगह नहीं थी। इसलिए फुटपाथ से अस्थायी रूप में वह इस दफ्तर में आ गया था और इस एक सप्ताह में वह दफ्तर की इकलौती किताब लगभग बीस बार पढ़ चुका था।

दफ्तर में वह अकेला पड़ा रहता; नौकरी से उसे नफरत थी। अगर वह चाहता तो किसी भी फिल्म कम्पनी में फिल्म डायरेक्टर के रूप में नौकर हो सकता था, किन्तु वह गुलामी नहीं चाहता था। अत्यन्त निरीह तथा सहृदय व्यक्ति था; धार-दोस्त उसके दैनिक खर्च का प्रबन्ध कर देते थे। यह खर्च बहुत ही कम था : सुबह को चाय की प्याली और दो टोस्ट; दोपहर को दो फूलके और घोड़ी-नी तरकारी, सारे दिन में एक पैकेट सिगरेट और वस।

मनमोहन का कोई सम्बन्धी या नाती नहीं था। वह नितान्त शांतिप्रिय तथा निर्जनता का वातावरण पसंद करता था, था बड़ा साहसी तथा विपदाएँ

सहने वाला— कई दिन तक भूगा रह सकता था उसके बारे में उसके मित्र और तो कुछ नहीं पर उनना यद्यप्य जानते थे कि वह बचपन ही से घर-बार छोड़ कर निकल आया था और एक मुद्दन से बम्बई के फुट-गाथों पर आवाद था। जीवन में उसे केवल एक अभिलाषा थी : स्त्री से प्रेम करने की। वह कहा करता था यदि मुझे किसी स्त्री का प्रेम प्राप्त हो गया तो मेरी सारी जिन्दगी बदल जायगी।

मित्रगण उससे कहते, 'तुम काम फिर भी न करोगे।

मनमोहन आह भर कर जवाब देता, 'काम ? मैं मुजस्सम काम बन जाऊँगा।

दोस्त कहते, तो शुरू कर दो किंगी से इस्क।'

मनमोहन जवाब देता, 'नहीं, मैं ऐसे इस्क का कायल नहीं जो मद की तरफ से शुरू हो।'

दोपहर के खाने का समय निकट आ रहा था। मनमोहन ने सामने दीवार पर क्लाक की ओर देखा; टेलीफोन की घण्टी बजनी शुरू हुई। उसने रिसीवर उठाया और कहा, 'फोर फोर फोर फाइव सेवन।'

'दूसरी ओर से पतली-सी आवाज आई, 'फोर फोर फोर फाइव सेवन ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'जी हाँ।'

'स्त्री की आवाज ने पूछा आप कौन हैं ?'

'मैं मनमोहन, फरमाइये !'

दूसरी तरफ से आवाज आई तो मनमोहन ने कहा, 'फरमाइये किससे बात करना चाहती हैं आप ?'

आवाज ने जवाब दिया, 'आपसे।'

मनमोहन ने कुछ चकित हो पूछा, 'मुझसे ?'

'जी हाँ, आपसे। क्यों आपको कोई आपत्ति है ?'

'मनमोहन सटपटा-सा गया, 'जी ? जी नहीं।'

आवाज मुस्कराई, 'आपने अपना नाम मदन मोहन बताया था ?'

'जी नहीं, मनमोहन।'

'मनमोहन !'

कुछ क्षण शानि मे बीत गये तो मनमोहन ने कहा, आप जाने करना चाहती थी मुझसे ?'

आवाज धाई, 'जी हाँ !'

'तो कीजिए ।'

'कुछे अवकाश के बाद आवाज धाई, ममम् मे नहीं आता क्या बात करूँ ? आप ही शुरू कीजिए ना कोई बात ।'

'बहुत बेहतर !' यह कहकर मनमोहन ने थोड़ी देर सोचा ।

'नाम अपना बता चुका हूँ; अस्थायी रूप से ठिठाना भेरा यह दफ्तर है । पहले फुटपाथ पर सोता था अब एक सप्ताह से इस भाक्ति की बड़ी मेज पर सोता हूँ ।'

आवाज मुस्कराई, 'फुटपाथ पर आप मसहरी लगाकर सोते थे ?'

मनमोहन हँसा, 'इससे पहले कि मैं आपसे बातचीत करूँ मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैंने कभी भूठ नहीं बोना । फुटपाथ पर सोने मुझे एक जमाना हो गया है, यह दफ्तर लगभग एक हफ्ते मे मेरे बच्चे मे है । आज-कल ऐसा कर रहा हूँ ।'

आवाज मुस्कराई, 'कैसे एसा ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'एक किताब मिल गई थी यहाँ से । प्रतिम पाने गुम हैं लेकिन मैं इसे बीग धार पढ चुका हूँ । पूरी किताब कभी हाथ लगी तो मानूँ होगा कि हीरो-हीरोइन के प्रेम का परिणाम क्या हुआ ।'

'आवाज हँसी, आप बड़े दिलचस्प घादमी हैं ।'

'मनमोहन ने बड़े तबल्लुफ से कहा, 'आपको क्या है ।'

आवाज ने कुछ मन्त्रों के बाद पूछा, 'आपके मनोरञ्जन का साधन क्या है ?'

'मनोरञ्जन ?'

'भेरा मतलब है धार करते क्या है ?'

रता हूँ ? कुछ भी नहीं । एक बेकार इन्सान क्या कर सकता है ?
गवारागदी करता हूँ; रात को सो जाता हूँ ।'

। ने पूछा, यह जीवन आपको अच्छा लगता है ?'

। ने सोचने लगा, ठहरिए ! बात दरअसल यह है कि मैंने इस पर
हीं किया अब आपने पूछा है तो मैं अपने आपसे मालूम कर रहा हूँ
दगी मुझे अच्छी लगती है या नहीं ?'

जवाब मिला ?'

प्रकाश के पश्चात् मनमोहन ने जवाब दिया, 'जी नहीं । लेकिन
है कि ऐसी जिन्दगी मुझे अच्छी लगती ही होगी जबकि एक बर्से
र रहा हूँ ।'

ज हँसी तो मनमोहन ने कहा, 'आपकी हँसी बड़ी सुरीली है ।'

ज शरमा गई, शुक्रिया ! और बातचीत का सिलसिला बंद हो

मोहन थोड़ी देर रिसीवर हाथ में लिये खड़ा रहा । फिर मुस्कराकर
दिया और दफ्तर बन्द करके चला गया ।

दिन सुबह आठ बजे जबकि मनमोहन दफ्तर की बड़ी मेज पर सो
लीफोन की घण्टी बजनी शुरू हुई । जेभाइर्या लेते हुए उसने रिसीवर
पर कहा, 'हलो, फोर फोर फोर फाइव सेवन ।'

री और से आवाज आई, 'आदाब अर्ज मनमोहन साहब ।'

दाब अर्ज !' मनमोहन एकदम चौंका, ओह आप ! आदाब अर्ज,
त !'

आज आई, आप शायद सो रहे थे ?'

हाँ । यहाँ आकर मेरी आदतें कुछ विगड़ रही हैं । वापस फुटपाथ पर
बड़ी मुसीबत हो जायगी ।'

आज मुस्कराई, 'क्यों ?'

हाँ सुबह पाँच बजे से पहले-पहले उठना पड़ता है ।'

आवाज हँसी। मनमोहनने पूछा 'कल आपने एकदम टेलीफोन बन्द कर दिया।'

आवाज शरमाई, 'आपने मेरी हँसी की प्रशंसा क्यों की थी?'

मनमोहन ने कहा, 'लो साहब, यह भी अजीब बात कही आपने। कोई चीज खूबसूरत हो तो उसकी तारीफ नहीं करनी चाहिए?'

'विल्कुल नहीं।'

'यह शर्त आप मुझ पर नहीं लगा सकती। मैंने आज तक कोई शर्त अपने ऊपर नहीं लागू होने दी। आप हँसेंगी तो मैं जरूर तारीफ करूँगा।'

'मैं टेलीफोन बन्द कर दूँगी।'

'बड़े शौक से।'

'आपको मेरी नाराजगी का कोई ख्याल नहीं।'

'मैं सबसे पहले अपने आपको नाराज नहीं करना चाहता। अगर मैं आपकी हँसी की प्रशंसा न करूँ तो मेरी रुचि मुझसे नाराज हो जायगी और मेरी यह रुचि मुझे बहुत प्रिय है।'

थोड़ी देर खामोशी रही। इसके बाद दूसरे तिरों से आवाज आई, 'समा कीजिएगा, मैं अपनी शौकरानी से कुछ कह रही थी। हाँ तो आपकी रुचि आपको बहुत प्रिय है... हाँ यह तो बताइए आपको शौक किस चीज का है?'

'क्या मतलब?'

'यानी कोई अभीष्टकोई काम.... मेरा मतलब है आरको आता क्या है?'

मनमोहन हँसा, 'कोई काम नहीं आता; फोटोग्राफी का थोड़ा-सा शौक है।'

'बहुत अच्छा शौक है।'

'इसकी अच्छाई या बुराई के बारे में मैंने कभी नहीं सोचा।'

आवाज ने पूछा, 'कैमरा तो आपके यहाँ बहुत अच्छा होगा?'

मनमोहन हँसा, मेरे पास अपना कोई कैमरा नहीं। दोस्तों से माँग कर

शोक पूरा कर लेता हूँ। अगर मैंने कभी कुछ कमाया तो एक कैमरा मेरी नजर में है, वह खरीदूँगा।'

आवाज ने पूछा, 'कौन-सा कैमरा?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'एग्जैक्ट रिप्लिकस कैमरा मुझे बहुत पसन्द है।'

थोड़ी देर गामोशी रही; उसके बाद आवाज आई, 'मैं कुछ सोच रही थी।'
'क्या?'

आपने न तो मेरा नाम पूछा, 'न टेलीफोन नम्बर मालूम किया।'

'मुझे इसकी आवश्यकता ही न पड़ी।'

'क्यों?'

'नाम आपका कुछ ही हो गया फर्क पड़ता है। आपको मेरा नाम नम्बर मालूम है, वस ठीक है। आप अगर चाहोगी कि मैं आपको फोन करूँ तो नाम और नम्बर बता दीजिएगा।'

'मैं नहीं बताऊँगी।'

'लो साहब, यह भी खूब रहा मैं जब आपसे पूछूँगा ही नहीं तो बताने न बताने का सवाल ही कहाँ पैदा होता है?'

आवाज मुस्कराई, 'आप अजीबो-गरीब आदमी हैं।'

मनमोहन मुस्काया, 'जी हाँ, कुछ ऐसा ही आदमी हूँ।'

चन्द सेकण्ड खामोशी रही, 'आप फिर कुछ सोचने लगीं?'

'जी हाँ, कोई और बात इस वक्त सूझ नहीं रही थी।'

'तो फोन बन्द कर दीजिए, फिर सही।'

आवाज कुछ तीखी हो गई, 'आप बहुत रूखे आदमी हैं। टेलीफोन बन्द कर दीजिए—लीजिए मैं बन्द करती हूँ।'

मनमोहन ने रिसेवर रख दिया और मुस्कराने लगा।

आध घण्टे के बाद जब मनमोहन हाथ-मुह धोकर कपड़े पहन कर बाहर निकलने के लिए तैयार हुआ तो टेलीफोन की घण्टी बजी। उसने रिसेवर

पर और कहा, 'फोर फोर फोर फाइव सेवन।'

आवाज आई, 'मिस्टर मनमोहन !'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'जी हाँ, मनमोहन । फरमाइए ।'

आवाज मुस्काराई, 'फरमाना यह है कि मेरी नाराजगी दूर हो गई है ।'

मनमोहन ने बड़ी विनम्रता से कहा, 'मुझे बड़ी खुशी हुई है ।'

'नास्ता करते हुए मुझे खयाल आया कि आपके साथ बिगाड़ना नहीं चाहिए । हाँ आपने नास्ता कर लिया ?'

'जी नहीं, बाहर निकलने ही वाला था कि आपने टेलिफोन किया ।'

'ओह, तो आप आइए ।'

'जी नहीं, मुझे कोई जल्दी नहीं । मेरे पास पैसे नहीं हैं इसलिए मेरा जवाब है कि आज नास्ता नहीं होगा ।'

'आपकी बातें सुनकर... आप ऐसी बातें क्यों करते हैं ! मेरा मतलब है ऐसी बातें आप इसलिए करते हैं कि आपको दुःख होता है ?'

मनमोहन ने खग्न भर सोचा, 'जी नहीं मेरा यदि कोई दुःख दर्द है तो मैं उसका भावी हो चुका हूँ ।'

'आवाज ने पूछा, 'मे कुछ रुपये आपको भेज दूँ ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'भेज दीजिए, मेरे किनान्तरों में एक आपकी भी वृद्ध हो जायगी ।'

'नहीं मैं नहीं भेजूंगी ।'

'आपकी मर्जी ।'

'मैं टेलिफोन बन्द करती हूँ ।'

'अच्छा ।'

मनमोहन ने रिसीवर रख दिया और मुस्कराता हुआ दफ्तर से निकल गया । रात को दस बजे के करीब वास्तु धाया और कंपड़े बदल कर मेज पर सेट कर सोचने लगा कि यह कौन है जो उसे फोन करती है । आवाज से केवल इतना पता चलता था कि जवान है; हँपी बटून सुगीली है, बानचीत से यह साफ जाहिर है कि विभित्त-मुसंस्कृत है । बहुत देर तक वह उसके बारे में

सोचता रहा। उधर गलाक ने ग्यारह बजाये, उधर टेलिफोन की घण्टी बजी। मनमनोहन ने रिसीवर उठाया, 'हलो !'

दूसरे सिरे से आवाज आई, 'मिस्टर मनमोहन ?'

'जी हां, मनमोहन। फरमाइये।'

'फरमाना यह है कि मैंने आज दिन में कई बार रिंग किया, आप कहाँ गायब थे ?'

'साहब, बेकार हूँ लेकिन फिर भी काम पर जाता हूँ।'

'किस काम पर ?'

'आवारा गर्दी।'

'वापस कब आये ?'

'दस बजे।'

'अब क्या कर रहे थे ?'

'बेज पर लेटा आपकी आवाज से आपकी तस्वीर बना रहा था।'

'बनी ?'

'जी नहीं।'

'बनाने को कोशिश न कीजिए। मैं बड़ी बदसूरत हूँ।'

'माफ कीजिएगा, अगर आप वास्तव में बदसूरत हैं तो टेलिफोन बन्द कर दीजिए। बदसूरत से मुझे नफरत है।'

'आवाज मुस्कराई, 'ऐसा है तो चलिए मैं खूबसूरत हूँ। मैं आपके दिल में नफरत पैदा नहीं करना चाहती।'

'थोड़ी देर खामोशी रही। मनमोहन ने पूछा, 'कुछ सोचने लगी ?'

आवाज चौंकी, 'जी नहीं, मैं आपसे पूछने वाली थी कि.....'

'सोच लीजिए अच्छी तरह।'

'आवाज हँस पड़ी, 'आपको गाना सुनाऊँ ?'

'जरूर।'

'ठहरिए।'

गला साफ करने की आवाज आई; फिर 'गालिव' की यह गजल शुरू हुई :

तुला थीं है गमे दिल.....

सहगल वाली नई धुन थी; आवाज में दर्द घोर निष्ठा थी। जब गजल खत्म हुई तो मनमोहन ने दाद दी, 'बहुत खूब ! जिन्दा रहों।'

दफ़्तर की बड़ी मेज पर मनमोहन के दिल व दिमाग में मारो रात 'गालिव' की गजल शूजनी रही। सुबह जल्दी उठा और टेलिफोन का इन्जतार करने लगा। लगभग ढाई घण्टे कुर्सी पर बँठा रहा, पर टेलिफोन की घण्टी न बजी। जब निराश हो गया तो उसने एक विचित्र कटुता अपने कण्ठ में अनुभव की; उठ कर टहलने लगा। उसके बाद मेज पर लेट गया और कूदने लगा। बड़ी किताब जिसे अनेक बार वह पढ़ चुका था उठाई और पढ़ना शुरू कर दिया। यों ही लेंटे लेंटे शाम हो गई। करीब सात बजे टेलिफोन भी घण्टी बजी। मनमोहन ने रिश्वीवर उठाया और तेजी से पूछा, 'कौन है ?'

वही आवाज आई, 'मैं !'

मनमोहन का स्वर कुछ कटु था, 'इतनी देर से तुम कहां थी ?'

आवाज लरजी, 'बयों ?'

'मैं सुबह से यहां झक मार रहा हूँ, न नास्ता किया है न दोपहर का खाना खाया है। जब कि पैसे मेरे पास मौजूद थे।'

आवाज आई, 'मेरी जब मर्जी होगी टेलिफोन करूँगी।'...आप....'

मनमोहन ने बात काट कर कहा, 'देखो जी, यह सिलसिला बन्द करो। टेलिफोन करना है तो एक समय निश्चित करो। मुझसे प्रतीक्षा नहीं की जाती।'

आवाज मुस्कराई, 'आज की माफी चाहती हूँ, कल से नियमित रूप से सुबह-शाम फोन आया करेगा आपको।'

'पह ठीक है।'

आवाज हँसी, 'मुझे-नालूम नहीं था, आप ऐसे दिग्गड़े दिल हैं।'

मनमोहन मुस्कराया, 'माफ करना इन्तेजार से मुझे बहुत-बहुत कोपत होती है और जब मुझे किसी बात से कोपत होती है तो अपने आपको सजा देना शुरू कर देता हूँ।'

वह कंग ?'

'सुबह तुम्हारा टेलिफोन न आया, चाहिए तो यह था कि मैं चला जाता, लेकिन बँठा दिन भर अन्दर-ही-अन्दर कुढ़ता रहा; बचपना है साफ !'

आवाज हमदर्दी में डूब गई, 'काना मुझसे यह गलती न होती ! मैंने जान-बूझकर सुबह फ़ोन न किया।'

'व्यों ?'

'यह जानने के लिए कि आप इन्तेजार करोगे या नहीं।'

मनमोहन हँसा, 'बहुत चंचल हो तुम। अच्छा अब फ़ोन बन्द करो, मैं खाना खाने जा रहा हूँ।'

'बेहतर, कब तक लौटियेगा ?'

'आधे घण्टे तक।'

मनमोहन आधा घण्टे के बाद खाना खाकर लौटा तो उसने फ़ोन किया। देर तक दोनों बातें करते रहे। इसके बाद उसने 'शालिव' की राजल सुनाई। मनमोहन ने दिल से दाद दी। फिर टेलीफ़ोन का सिल सिला बन्द हो गया।

अब हर रोज सुबह व शाम मनमोहन के पास उसका टेलिफ़ोन आता। घण्टी की आवाज सुनते ही वह टेलिफ़ोन की ओर लपकता। कभी-कभी बातें घण्टों जारी रहतीं, इस दौरान में मनमोहन ने न तो उससे टेलीफ़ोन नम्बर पूछा न उसका नाम। शुरू-शुरू में तो उसने उसकी आवाज की मदद से कल्पना के पर्दे पर उसका चित्र बनाने का यत्न किया था, परन्तु अब तो जैसे वह आवाज ही से सन्तुष्ट हो गया था; आवाज ही शकल थी, आवाज ही रस थी, आवाज ही जिस्म था, आवाज ही आत्मा थी। एक दिन उसने , 'मोहन, तुम मेरा नाम क्यों नहीं पूछते ?'

मनमोहन ने मुस्करा कर कहा, 'तुम्हारा नाम, तुम्हारी आवाज है, जो बहुत सुरीली है ।'

'इसमे क्या शक है ?'

एक दिन वह बड़ा टेढ़ा सवाल कर घंटी, 'मोहन, तुमने कभी किसी लड़की से प्रेम किया है ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'नहीं ।'

'क्यों ?'

मोहन एकदम उदास हो गया, 'इस 'क्यों' का उत्तर कुछ शब्दों में नहीं दे सकता; मुझे अपने जीवन का सारा मतवा उठाना पड़ेगा और अगर कोई उत्तर न मिले तो बड़ा कष्ट होगा ।'

'जाने दोजिए ।'

टेलिफोन का सम्बन्ध स्थापित हुए लगभग एक महीना ही गया । दिन में दो बार निश्चित रूप से उसका फोन आता । मनमोहन के पास अपने दोस्त का खत आया कि कर्जे का बन्दोबस्त हो गया है । सान-माठ रोज में वह बम्बई पहुँचने वाला है । मनमोहन यह पत्र पढ़कर उदास गया । उसका टेलिफोन आया तो मनमोहन ने उससे कहा, 'मेरी दफ्तर की बादशाही घर खन्द दिनों की मेहमान है ।'

उसने पूछा, 'क्यों ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'कर्जे का बन्दोबस्त हो गया है, दफ्तर आबाद होने वाला है ।'

'तुम्हारे किसी और दोस्त के यहाँ टेलीफोन नहीं है ?'

'कई दोस्त हैं त्रिनके टेलीफोन हैं; पर मैं तुम्हें उनका नम्बर नहीं दे सकता ।'

'क्यों ?'

'मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी आवाज कोई और सुने ।'

'फारण ?'

'मैं बहुत ईर्ष्यानु हूँ ।'

वह मुस्कराई, 'यह तो बड़ी सुग्रीवत हुई ।'

'क्या किया जाय ?'

'आगिरी दिन जब तुम्हारी वादशाहत खत्म होने वाली होगी मैं तुम्हें अपना नम्बर बता दूँगी ।'

'यह ठीक है ।'

मनमोहन की गारी उधारी दूर हो गई । वह उस दिन की प्रतीक्षा करते लगा जब दफ्तर में उनकी वादशाहत खत्म हो । अब फिर उसने उसकी आवाज की मदद से अपनी कल्पना के पर्दे पर उसका चित्र बनाने की चेष्टा की । कई चित्र बने; परन्तु वह मन्तुष्ट न हुआ । उसने सोचा, चन्द दिनों की बात है, उगने टेलिफोन नम्बर बता दिया तो मैं उसे देख भी सकूँगा ।' उसका विचार आते ही उसका दिन व दिमाग मुन्न हो जाता । 'मेरी जिन्दगी का वह क्षण कितना महान क्षण होगा जब मैं उसे देख सकूँगा ।'

दूसरे दिन जब उनका टेलिफोन आया तो मनमोहन ने उससे कहा, 'तुम्हें देखने की उत्कण्ठा सजीव हो रही है ।'

'क्यों ?'

'तुमने कहा था कि अन्तिम दिन जब यहाँ मेरी वादशाहत खत्म होने वाली होगी तो तुम मुझे अपना नम्बर बता दोगी ।'

'कहा था ।'

'इसका मतलब यह है कि तुम मुझे अपना पता दे दोगी—यानी मैं तुम्हें देख सकूँगा ।'

'तुम मुझे जब चाही देख सकते हो; आज ही देख लो ।'

'नहीं, नहीं ।' फिर कुछ सोचकर कहा । 'मैं जरा अच्छे वस्त्रों में तुमसे मिलना चाहता हूँ । आज ही एक दोस्त से कह रहा हूँ । वह मुझे सूट सिलवा देगा ।'

वह हँस पड़ी । 'विल्कुल बच्चे हो तुम ! सुनो, जब तुम मुझ से मिलोगे तो एक उपहार दूँगी !'

मनमोहन ने भावुकता के स्वर में कहा, 'तुम्हारे दर्शनी से बढकर और कोई उपहार क्या हो सकता है ?'

'मैंने तुम्हारे लिये ऐक्जिबिटो कैमरा खरीद लिया है ।'

'ओह !'

'इस शर्त पर दूँगी कि पहले मेरा फोटो उतारा ।'

मनमोहन मुस्कराया, 'इस शर्त का फंसला मुलाकात पर करूँगा ।'

थोड़ी देर और बानधीत हुई; उसके बार उधर से बह बोली, 'मैं कल और परसो तुम्हें टेलीफोन नहीं कर सकूँगी ।'

मनमोहन ने विन्ताजनक स्वर में पूछा, 'क्यों ?'

'मैं अपने कुटुम्बियों के साथ बाहर जा रही हूँ; केवल दो दिन तक अनुपस्थित रहूँगी । मुझे क्षमा कर देना ।'

यह सुनने के बाद मनमोहन सारे दिन वपत्र ही में रहा । दूसरे दिन सुबह उठा तो उसे बुखार-सा अनुभव हुआ । उसने सोचा कि यह उदासी शामद इसलिए है कि उसका टेलीफोन नहीं आयेगा । लेकिन दोपहर तक बुखार तेज हो गया; शरीर तपने लगा; आँखों से अंगारे फूटने लगे । मनमोहन बेज पर लेट गया । प्यास बार-बार सताती थी । वह उठता और नन् से मुँह लगाकर पानी पीता । शाम के करीब उसे अपने सीने पर बोझ महसूस होने लगा; दूसरे दिन वह बिल्कुल निडाल था । माँस बड़ी कठिनार्द्र से आता था; सीने की दुःखन बहुत बढ गई थी ।

कई बार उस पर वैहोसी-सी छा गई । बुखार की तेजी में वह घण्टो टेलीफोन पर अपनी प्रिय भावाज के साथ बातें करता रहा । शाम को उसकी हालत बहुत ज्यादा बिगड़ गई; घुँघटाई हुई आँखों से उसने क्लोक की ओर देखा । उसके कानों में अजीबो-गरीब भावाज गूँज रहीं थी जैसे हजारों टेलीफोन बोल रहे हो । सीने में घुँघरु से वज रहे थे—चारों ओर भावाजें-ही-भावाजें थीं, इसलिए जब टेलीफोन की घंटी बजी तो उसके कानों तक उसकी भावाज न पहुँची । बहुत देर तक घंटी बजती रही । एकदम मनमोहन चौका उसके कान सब गून रहे थे । वह नङ्खड़ाता हुआ उठा और टेलीफोन तक

गया; दीवार का सहारा लेकर उसने काँपते हुए हाथों से रिसीवर उठाया और रूखे होठों पर लकड़ी जैसी जीभ फेरकर कहा, 'हलो !'

दूपरे सिरे से वह लड़की बोली, 'हलो, मनमोहन !'

'जरा ऊँचा बोली.....'

मनमोहन ने कुछ कहना चाहा किन्तु वह सब उसके कंठ में रुँधकर रह गया ।

आवाज आई, 'मैं जल्दी आ गई, बड़ी देर से तुम्हें रिग कर रही हूँ, कहाँ थे तुम ?'

मनमोहन का सिर घूमने लगा ।

आवाज आई, 'क्या हो गया है तुम्हें ?'

मनमोहन ने बड़ी मुश्किल से प्रतना कहा कहा, मेरी वादशाहन खत्म होगई है आज ।' उसके मुँह से खून निकला और एक पतली रेखा की भाँति गर्दन तक दीड़ता चला गया ।

आवाज आई, 'मेरा नम्बर नोट कर लो—फ़ाइव नॉट थ्री वन फ़ोर; फ़ाइव नॉट थ्री वन फ़ोर । सुग्रह फ़ोन करना ।' यह कहकर उसने रिसीवर रख दिया । मनमोहन शीघ्र मुँह टेलिफोन पर गिरा—उसके मुँह से खून के बुलबुले फूटने लगे ।

निक्की

तलाक लेने के बाद वह विल्कुल नवीन हो गई थी। अब वह हर रोज का दाता-किनकिल और मार-कुटाई नहीं थी। निक्की बड़े आराम और इतमीनान से अपना गुजर-बसर कर रही थी।

यह तलाक पूरे दस वर्षों बाद हुई थी। निक्की का पति बहुत क्रूर व्यक्ति था—पहले दर्जे का निवट्टू और शराबी-कबाबी। भग-चरस की भी लत थी। कई-कई दिन भंगडखानों में पड़ा रहता था। एक लडका हुआ था, वह पैदा होते ही मर गया। कई वर्ष बाद एक लडकी हुई जो जीवित थी और अब नौ वर्ष की थी।

निक्की से उसके पति गाम को यदि दिलचस्पी थी तो सिर्फ इतनी कि वह उसे मार-पीट सकता था; जो भर के गालियाँ दे सकता था। तबियत में आये तो कुछ घण्टों के लिए घर से निकाल देता था। इसके अतिरिक्त निक्की से उसे और कोई सरोकार नहीं था। मेहनत-मजदूरी की जब थोड़ी-सी रकम निक्की के पास जमा होती थी तो वह उसे जवशमन्ती छीन लेता था।

तलाक बहुत पहले हो चुकी थी; इसलिए पति-पत्नी के निर्वाह की कोई संभावना ही नहीं थी। यह केवल गाम की जिद थी कि मामला इतनी देर लटका रहा, इसके प्रस्ताव एक बात यह भी थी कि निक्की के आगे पीछे कोई भी न था। माँ-बाप ने उसे डोली में ढाङ्कर गाम के सुपुर्द किया और दो मास के अन्दर-अन्दर वे परलोकवासी हो गये। जैसे उन्होंने केवल इसी उद्देश्य के हेतु मृत्यु को टाल रखा था। उन्हें अपनी पुत्री को एक लम्बी मीन के लिए गाम के हवाले करना था। उन्होंने खुद को और ज्यादा दूर कर लिया था।

गाम कैसा है यह निक्की के माँ-बाप भली भाँति जानते थे । उनकी बेटी उम्र भर रोती रहेगी यह भी उन्हें अच्छी तरह मालूम था । मगर उन्हें तो अपने जीवन-काल में एक कर्तव्य पूरा करना था और वह कर्तव्य उन्होंने ऐसा पूरा किया कि सारा भार निक्की के दुर्बल कंधों पर टाल गये ।

तलाक लेने से निक्की का यह मतलब नहीं था कि वह किसी शरीफ आदमी से 'निकाह' करना चाहती थी । दूसरी यादी का उम्र कभी खयाल तक भी नहीं आया था । तलाक होने के बाद वह क्या करेगी, न ही उसके बारे में भी निक्की ने कभी सोचा था । असल में वह हर रोज की बक-बक झकझक से सिर्फ एक सताप की साँस लेना चाहती थी । उसके बाद जो होने वाला था उसे निक्की सह्य सहन करने को तैयार थी ।

लड़ाई-भगड़े का श्रीगणेश तो पहले ही दिन हो गया था जब निक्की दुल्हन बन कर गाम के घर आई थी । लेकिन तलाक का सवाल उस समय पैदा हुआ था जब वह गाम के सुधार के लिए दुआयों माँग-माँग कर लाचार हो गई थी और उसके हाथ अपनी या उसकी मौत के लिए उठने लगे थे । जब यह प्रयास भी निरर्थक सिद्ध हुआ तो उसने अपने पति की मिनत-समाजत शुरू की कि वह उसे ब्रह्म दे और अलग करदे । लेकिन प्रकृति की विडम्बना देखिए कि दस वर्ष के पश्चात् तकिये में एक अघेड उम्र की मीरासन से गाम की आँख लड़ी और एक दिन उसके कहने पर उसने निक्की को तलाक दे दी और बेटी पर भी अपना कोई हक न जनाया हालाँकि निक्की को इस बात का हमेशा धड़का रहता था कि अगर उसका पति विवाह-विच्छेद के लिए सहमत होगया तो वह बेटी कभी उसके हवाले नहीं करेगा । बहरहाल निक्की नचीत होगई और एक छोटी-सी कोठरी किराये पर लेकर चैन के दिन बिताने लगी ।

उसके दस वर्ष उदास खामोजी में व्यतीत हुयेथे । दिल में हर रोज उसके बड़े-बड़े तूफान जमा होते थे परन्तु वह पति के सम्मुख उफ तक नहीं कर सकती थी; इसलिए कि उसे बचपन ही से शिक्षा मिली थी कि पति के सामने बोलना ऐसा पाप है जो कभी क्षमा किया ही नहीं जाता । अब वह स्वतंत्र थी; इस-
 ति थी कि अपनी दस वर्ष की भड़ास किसी-न-किसी तरह

निकाले । भतः पड़ोसियों से उसकी भवसर लड़ाई-भिड़ाई होने लगी । मामूली तू-तू, मै-मै होती जो गालियों की जग में तय्योल हो जाती । निक्की पहने जितनी खामोश थी अब उसकी उननी ही तेज छुवान चलनी थी । मिनटा-मिनटी में अपने प्रतिद्वंद्वी की सातों पीढ़ियाँ घुनकर रख देनी—ऐसी-ऐसी गालियाँ और सठनियाँ देती कि शत्रु के छत्रके छूट जाते ।

धीरे-धीरे सारे मुहल्ले पर निक्की की छाक बैठ गई । यहाँ कारोबार वाने मंद रहते थे जो सुबह-सवेरे उठकर काम पर निकल जाते और रात को देर से घर तोरते । सारे दिन में धौरतों में लड़ाई-भगडा होता । उससे वे मंद बिल्कुल भलग-भलग रहते थे । उनमें से शायद किसी को पता भी नहीं था कि निक्की कौन है और मुहल्ले की सारी धौरतें उससे क्यों दबती हैं ?

बर्खा कातकर बच्चों के लिए गुड्डे-गुड्डियाँ बनाकर और इसी तरह के छोटे-मोटे काम करके वह अपने निर्वाह के लिए कुछ-न-कुछ पँदा कर लेती थी । तलाक लिये लगभग एक वर्ष हो चला था । उसकी बेटी भोली अब ग्यारह के लगभग थी और बड़ी द्रुत गति से युवावस्था को पहुँच रही थी । निक्की को उसकी शादी-ब्याह की बड़ी चिन्ता थी । उसके अपने जेवर थे जो एक-एक करके गाम में बट कर लिये थे—एक केवल नाक की कील शेष रह गई थी; वह भी धिम-धिसाकर आधी रह गई थी । उसे भोली का पूरा दहेज बनाना था और उसके लिए काफी रुपया दरकार था । शिसा उसने अपनी धोर से ठीक दी थी—कुरान खत्म करा दिया था । उसे मामूली अक्षर-ज्ञान था । खाना पकाना खूब आता था । घर के दूमरे काम-काज भी भली प्रकार जानती थी । चूँकि निक्की को अपने जीवन में बड़ा बटु अनुभव हुआ इसलिए उसने भोली को पति की आज्ञा-पालन का कभी संकेत में भी उपदेश न दिया था । वह चाहती थी कि उसकी बेटी समुराल में छपरछट पर बँठी राज करे ।

माँ के साथ जो कुछ बीता था उस विपदा का सारा हाल भोली को मालूम था । परन्तु पड़ोसियों के साथ जब निक्की की लड़ाई होनी थी तो वे पानी पी-पीकर उसे कोसती थी कि और यह खाना देनी थीं कि उसे तलाक दी गई है । जिसे पति ने बेवज्र इन कारण से भलग किया था कि उस बेचारे का

नाक से दम कर रगा था और बहुत-सी बातें अपनी माँ के चरित्र तथा स्वभाव के बारे में वह सुनती थी परन्तु वह मूक रहती थी। बड़े-बड़े मार्कों की लड़ाइयाँ होनीं किन्तु वह काम नमंटे अपने काम में लगी रहती।

जब नारे मुहल्ले पर निारही थी धारू बैठ गई तो कई स्त्रियों ने उसके रोव में जाकर उसके पास खाना जाना खूब कर दिया, कई उसकी सहेलियाँ बन गईं। जब उनकी अपनी किसी पटोमिन से लड़ाई होती तो निवकी साथ देती और उसकी सहायता महायत्न करती। उसके बदले में उसे कमीत्र के लिए कपड़ा मिल जाया करता था। कभी फल कभी मिठाई और कभी-कभी कोई भोली के लिए गूठ भी मिलवा देता था। लेकिन जब निवकी ने देखा कि हर दूसरे-तीसरे दिन उसे मुहल्ले की किमी-न-किसी औरत की लड़ाई में भाग लेना पड़ना है और उसके काम-काज में बाधा होनी है तो उसने पहले दबी जुबान में, फिर खुले घट्यों में अपना पारिश्रमिक मांगना प्रारंभ कर दिया और धीरे-धीरे अपनी फ्रीस भी निश्चित कर ली। मार्कों की जंग हो तो पच्चीस रुपये; दिन अधिक लगे तो चालीस। मामूली लटपट के केवल चार रुपये और दो जून खाना। मध्यम श्रेणी की लड़ाई हो तो पन्द्रह रुपये और किसी की सिफारिश हो तो वह कुछ रिशायत भी कर देती थी।

अब चूँकि उसने दूसरों की ओर से लड़ना अपना पेशा बना लिया था। इसलिए उसे मुहल्ले की तमाम स्त्रियों और उनकी बहू-बेटियों के समस्त निराणय याद रखने पड़ते थे। उनकी सारी वंशावली ज्ञान करके अपनी स्मृति में सुरक्षित रखनी पड़ती थी। उदाहरण के लिए उसे मालूम था कि ऊँची हवेली वाली सीदागर की पत्नी जो अपनी नाक पर मसखी नहीं बैठने देती एक मोची की बेटा है, उसका बाप शहर में लोगों के सूते गाँठता फिरता है, और उसका पति जो जनाव शेरव साहब कहलाता है, मामूली कसाई था, उसके बाप पर एक रण्डी मेहरवान ही गई थी, वह उसी के गर्भ से था, और यह ऊँची हवेली उस वेश्या ने अपने यार की बनाकर दी थी।

किस लड़की का किसके साथ इश्क है; कौन किसके साथ भाग गई थी; कौन कितने गर्भपात करा चुकी है, इसका हिसाब सब निवकी को मालूम

था। तमाम सूचना प्राप्त करने में वह काफी मेहनत करती थी और कुछ कष्टाता उसे अपने मुवक्तियों से मिल जाता था। उसे अपनी सूचना के साथ मिलाकर वह ऐसे-ऐसे बम बनाती कि स्पर्धा के छत्रके छूट जाते थे। होशियार बकीलों की भाँति वह सबसे भारी घाघात उसी समय लगाती थी, जब सोहा पूरी तरह लाल हो जाता। अतएव उनका यह घाघात सोलह घाने निर्णयारमक सिद्ध होता था।

जब वह अपने मुवक्तिकन के साथ किसी मोर्चे पर जाती थी तो घर से पूर्णतया कील-काँटों में बँस होकर जाती थी। ताने, महनों, गालियाँ और सटनियों को प्रभावनाली बनाने लिए विभिन्न वस्तुओं का प्रयोग करती थी। उदाहरणार्थ पिमा हुआ जूता, पट्टी हुई कमीज, बिमटा, फुकेनी आदि-आदि। कोई उपमा-विशेष देनी हो या कोई विशेषतम संकेत की आवश्यकता हो तो इस उद्देश्य के लिए जरूरी चीजें घर ही से लेकर चली जाती थी।

कभी-कभी ऐसा भी होता कि आज वह जनते के लिए खैरों से लड़ी है तो दो-दोई महाने के पश्चात् उसी खैरों से डबल कीम लेकर उसे जरते में लडना पड़ता था। ऐसे मोर्कों पर वह घबराती नहीं थी। उसे अपनी कला में इतना दक्षता प्राप्त हो गई थी और उस कला की प्रैक्टिस में वह इतनी ईमानदार थी कि यदि कोई फीस देना तो वह अपनी भी घजिबगी बिखर देती।

निक्की घब निदिचन्त थी। हर महाने उसे अब इतनी धामदनी होने लगी थी कि उसने बचाकर अपनी बेटी भोली का दहेज बनाना शुरू कर दिया था। थोड़े ही घसों में इतने गहने पाते और कपडे-लत्ते हो गये थे कि वह किसी भी समय अपनी बेटी को डोली में डाल सकती थी।

अपनी मिलाने वानियों से वह भोली के लिए कोई अच्छा-मा बर तलाश करने की बात कई बार कह चुकी थी। गुरु-गुरु में तो उसे कोई इतनी जल्दी नहीं थी लेकिन जब भोली सोलह वर्ष की हो गई—लोटा-की-लोटा, बदा-पाठ की पूर्णिक अच्छी थी, इसलिए चौदहवें वरम ही में पूरी जवान औरत बन

गई थी। मगहमें में तो ऐसा लगता था कि वह उसकी छोटी बहन है। अतएव प्रब निवकी को दिन-रान उसके बियाह की चिन्ता मताने लगी।

निवकी ने बड़ी दीड़-भूप की। कोई नाफ नो इन्कार नहीं करता था। मगर दिन से शामी नो नही भरता था। उसने महमूम किया कि हो-न-हो लोग उगमे दरते हैं। उसकी यह विशेषता कि लड़ने की कला में वह अपना मानी नहीं रगतो थी दरममन उसकी वाचक बन रही थी। कुछ घरों में तो वह खुद ही कुछ न बोगती क्योंकि उसकी किसी औरत की उसने कमी बोलती बन्द कर दी थी; दिन-पर-दिन चढ़ते जा रहे थे और घर में पहाड़-सी जवान घेटी कुंवारी घेटी थी।

निवकी को अपने पेश से अब घृणा होने लगी थी। उसने सोचा कि ऐसा नीच काम क्यों उसने अपनाया, परन्तु वह क्या करती? मुहल्ले में आराम चैन की जगह पंथा करने के लिए उसे पद्योमियों का सामना करना ही था। अगर वह न करती तो उसे दबकर रहना पडता। पहले पति के जूते खाती थी, फिर इनकी जूतियां गती। यह विचित्र बात थी कि वर्षों दबेल रहने के बाद जब उसने अपना भुका हुआ सिर उठाया और विरोधी शक्तियों का सामना करके उन्हें परास्त किया, ये शक्तियां भुककर उसकी सहायता की भिखारिणी बनीं कि वे दूसरी शक्तियों को परास्त करे और उसे इस सहायता की और कुछ इस प्रकार प्रवृत्त किया गया कि उसे चसका ही पड़ गया।

इसके बारे में वह सोचती तो उसका दिल न मानता था, उसने सिर्फ भोली के कारण इस पेशे को जिसे अब कुकर्म समझने लगी थी, अपनाया था। यह भी कुछ कम अजीब बात नहीं थी। निवकी को रुपये देकर किसी औरत पर उंगनी रख दी जाती थी और उससे कहा जाता था कि वह उसकी सातों पीढ़ियां पुन डाले। उसके पूर्वजों की सारी कमजोरियां, अतीत के मलबे से कुरेद-कुरेद कर निकाले और उसके अस्तित्व पर ढेर कर दे। निवकी यह काम बड़ी ईमानदारी से करती। वे गालियां जो उसके मुँह में ठोक नहीं बैठती थीं, अपने मुँह से चिठाती। उनकी बहू-बेटियों के दोषों पर

पदें डालकर वह दूसरों की बहू-बेटियों में कीड़े डालती। गन्दी-से-गन्दी गालियाँ घपने उन मुक्किलों के कारण छुद भी खाती। पर अब जब कि उसकी बेटी के विवाह का प्रश्न उठ खड़ा हुआ था, वह कमीनी, नीच और अधम बन गई थी।

एक-दो बार तो उसके जी में आई कि मुहल्ले की उन तमाम औरतों को, जिन्होंने उसकी बेटी को रिश्ता देने से इन्कार कर दिया था, बीच चौराहे में एकत्र करे और ऐसी गालियाँ दे कि उनके दिल के कानों के पदें फट जायें। मगर वह सोचती कि मगर उसने ऐसी गलती कर दी तो बेचारी भोली का भविष्य बिल्कुल अंधकारमय हो जायगा।

जब वह चारों ओर से निराश हो गई तो निक्की ने शहर छोड़ने का विचार कर लिया। अब उसके लिए निर्णय यहाँ रास्ता था जिससे भोली के विवाह की कठिन समस्या हल हो सकनी थी। अतः उसने एक दिन भोली से कहा, 'बेटी, मैंने सोचा है कि अब किसी और शहर में जा रहें।'

भोली ने चौंककर पूछा, 'क्यों माँ ?'

'बस अब यहाँ रहने को जगह नहीं चाहता। निक्की ने उसकी ओर ममता-भरी दृष्टि से देखा और कहा, 'तेरे व्याह की फिक्र में धुनी जा रही हूँ। यहाँ बँस मण्डे नहीं चढेगी। तेरी माँ की सब नीच समझते हैं।'

भोली काफी सयानी थी, फौरन निक्की का मतलब समझ गई। उसने केवल इतना कहा, 'हाँ माँ !'

निक्की भी इन दो शब्दों से बहुत दुःख पहुँचा। बड़े दुःखी स्वर में उसने भोली से प्रश्न किया, 'क्या तू भी मुझे नीच समझती है ?'

भोली ने उत्तर न दिया और धाटा घूँघने में व्यस्त हो गई।

उस दिन निक्की ने अजीब बातें सोचीं : उसके प्रश्न पूछने पर भोली कुछ क्यों हो गई थी ? क्या वह उसे वास्तव में नीच समझती है ? क्या वह इतना भी न कह सकती थी, 'नहीं माँ !' क्या यह याप के खून का अक्षर था ? बात मे-से-शात निबल जाती थीर वह बुरी तरह उसमें उलझ जाती। उसे वीते हुए वर्ष याद आते—व्याही जिन्दगी के दस वर्ष—जिसका एक-एक दिन

मार-गीट और गाली-गनोज से भरा था। फिर वह अपनी नजरों के सामने तलाक-शुदा जिन्दगी के दिन लाती। उनमें भी गानियाँ-ही-गालियाँ थीं जो वह पत्नों के लिए दूसरों को देनी रहती थी। चक-ठारकर वह कभी कभी कोई सहारा ढूँढने लगती, और सोचती, 'बग़ा ही अच्छा होता कि वह तलाक न लेती। आज बेटी का ब्रोन्क गाम के कंधों पर होता। निखट्टू था, पल्ले दर्जे का जानिम मगर बेटी के लिए जरूर कुछ-न-कुछ करता। यह उसकी कम-हिम्मती की पराजय थी।

पुरानी मारें और उनके दबे हुए दर्दे अब आदिस्ता-आहिस्ता निक्की के जोड़ों में उभरने लगे। पहले उसने कभी उफ तक न की थी, पर अब उठते-बैठते हाय-हाय करने लगी। उसके कानों में हर वक्त एक शोर-सा बरपा होने लगा जैसे उनके पर्दों पर वे तमाम गालियाँ और सठनियाँ टकरा रही हैं जो अनगिनत लड़ाइयों में उगने इस्तमाल की थीं।

उम्र उसकी ज्यादा नहीं थी; चालीस के लगभग थी। मगर अब निक्की को ऐसा महसूस होता था कि बूढ़ी हो गई है; उसकी कमर जवाब दे चुकी है। उसकी जुवान जो कंधी की तरह चलती थी, अब बन्द हो गई है। भोली से घर के काम-काज के बारे में मामूली-सी बात करते हुए उसे परिश्रम करना पड़ता था।

निक्की बीमार पड़ गई और चारपाई के साथ लग गई। शुरू-शुरू में तो वह इस बीमारी का मुकाबिला करती रही। भोली को भी उसने खबर न होने दी कि अन्दर-ही-अन्दर कौन सी बीमक उसे चाट रही है। लेकिन एकदम वह ऐसी निडाल हुई कि उससे उठा तक न गया। भोली को बहुत चिन्ता हुई। उसने हकीम को बुलाया जिसने नब्ज देखकर बताया कि फिक्र की कोई बात नहीं पुराना बुखार है इलाज से दूर हो जाएगा।

इलाज बाकायदा होता रहा। भोली आज्ञाकारी पुत्री की नार्ई मा की यथाशक्ति सेवा-सुश्रुपा करती रही जिससे निक्की के दुःखी दिल को काफी संतोष होता था किन्तु रोग दूर न हुआ। बुखार पहले से तेज हो गया और धीरे-धीरे निक्की की भूख गायब हो गई जिसके कारण वह बहुत ही दुबल और कमजोर हो गई।

स्त्रियों में एक ईश्वरदत्त गुण होता है कि रोगियों की सूरत देखकर ही पहचान लेती है कि वह कितने दिनों की मेहमान है। एक-दो घोरतों जब बीमार-पुर्णों के लिए निक्की के पास आईं तो उन्होंने अनुमान लगाया कि वह मुश्किल से दस रोज़ निक्की के पास रुकने के लिए तैयार हो सकती है।

कोई बीमार हो, मरणासन्न हो तो स्त्रियों के लिए एक अच्छे-सासे मनोरंजन की सामग्री मिल जाती है। घर से बन-सँवर कर निकलती हैं और मरीज के सिरहाने बैठकर अपने सारे स्वर्गीय कुटुम्बियों को याद करती हैं। उनकी बीमारियों का जिक्र होता है। वह तमाम इलाज बयान किये जाते हैं जो ता इलाज साबित हुए थे। फिर बातचीत का दख पलट कर कमीजों के नये डिजाइनों की तरफ आ जाता है।

निक्की ऐसी बातों से बहुत घबराती थी लेकिन वह खुद चूँकि मरीजों के सिरहाने ऐसी ही बातें करती रही थी इसलिए विवश हो उसे यह बकवास सुननी पड़ती थी। एक दिन जब मुहल्ले की बहुत-सी स्त्रियाँ उसके घर में एकत्र हो गईं तो इस अनुभव ने उसे बहुत व्याकुल किया कि अब उसका वक्त आ चुका है। उनमें से हरेक के चेहरे पर यह फैसला लिखा हुआ था कि निक्की के दरवाजे पर मौत दस्तक दे रही है। जो स्त्री जाती अपने साथ यह खटखट लाती। तंग आकर कई बार निक्की के जी में आई कि कुण्डी खोल दे और खटपट करने वाले फरिश्ते को भन्दर बुला ले।

इन बीमार-पुर्णों की सबसे बड़ा अफसोस भोली का था। निक्की से वे बार-बार इसका जिक्र करती कि हाय इस बेचारी का क्या होगा? दुनिया में बेचारी की सिर्फ एक माँ है, वह भी चली गई तो उसका क्या होगा। फिर वह भी भुल्लाह मियाँ से दुआ करती कि वह निक्की की जिन्दगी में कुछ दिनों की वृद्धि करदे ताकि वह भोली की घोर से सन्तुष्ट हो कर मरे।

निक्की को अच्छी तरह मालूम था कि यह दुआ बिल्कुल झूठी है। उन्हें भोली का इतना खयाल होता तो वे उसके रिश्ते से इन्कार क्यों करतीं? आफ

इन्कार नहीं किया था; इसलिए कि यह दुनियादारी के नियमों के विरुद्ध था परन्तु किसी ने ग़ामी नहीं भरी थी।

वह छोटा-सा कमरा जिसमें निम्नी चारपाई पर पड़ी थी बीमार-पुस्त श्रीरतों से भरा हुआ था। भोली ने उनके बैठने का प्रबन्ध ऐसा मालूम होता है पहले ही से कर रहा था। पीड़ियाँ कम थीं, इसलिए उसने जज़ूर के पत्तों की चटार्ई बिछा दी थी। भोली के इस इन्जाम से निम्नी का बड़ा सदमा पहुँचा था मानो वह अन्य स्त्रियों की भाँति उसकी मृत्यु के स्वागत के लिए तत्पर थी।

बुन्दार तेज था, दिमाग तपा हुआ था। निक्की ने ऊपर-तले बढ़त-सी कपट-प्रद बातें सोचीं तो बुन्दार और तेज हो गया और उन पर बेहोशी छा गई। जल्दी-जल्दी देजोड़ बातें करने लगी। बीमार-पुस्त श्रीरतों ने शय्यपूर्ण दृष्टि से एक दूसरी की ओर देखा। वे जो उठकर जाने वाली थीं निक्की का अन्त-काल समीप देखकर बैठ गईं।

निक्की बके जा रही थी; ऐसा प्रतीत होता था मानो वह किसी से लड़ रही है। मैं तेरी हिश्त-पुस्त को अच्छी तरह जानती हूँ। जो कुछ तूने मेरे साथ किया है वह कोई दुश्मन के साथ भी नहीं करता। मैंने अपने पति की दस बरस गुलामी की। उसने मार-मार कर मेरी खाल उधेड़ दी पर मैंने उफ तक न की। अब तूने... अब तूने मुझ पर यह जुल्म शुरू किए हैं।' फिर वह कमरे में एकत्रित स्त्रियों को फटी-फटी नजरों से देखती, 'तुम यहां क्या करने आई हो?... नहीं, नहीं, मैं किसी फीस पर लड़ने के लिए तैयार नहीं...' तुम में से हरेक के दोष वही हैं—पुराने—सदियों के पुराने। जो कीड़े फामा में हैं वही तुम सब में हैं। जो बुरी बीमारी फातो के घर वाले को लगी है वही जनते के घर वाले को चिमटी हुई है। तुम सब कोढ़ी हो, और यह कोढ़ तुमने मुझे भी दे दिया है। लानत हो तुम सब पर खुदा की—खुदा की—खुदा...' और वह हँसने लगी। 'मैं उस खुदा को भी जानती हूँ—उसकी हिश्त-पुस्त को अच्छी तरह जानती हूँ। यह क्या दुनिया बन गई है तूने? यह दुनिया जिसमें गाम हैं, जिसमें फामा है जो अपने पति को छोड़कर दूसरों के विस्तर

गरम करती है; और मुझे फीस देती है। बीस रुपये गिनकर मेरे हाथ पर रखती है कि मैं नूर फिशा की पुरानी चारानी का पोल खोलूँ और नूर फिशा मेरे पास आती है कि निक्की से पाँच ज्यादा लो, जाधो अमीना से लड़ो। वह मुझे सताती है। यह क्या चक्कर चलाया हुआ है तूने अपनी दुनियाँ में?... मेरे सामने...अरा मेरे सामने था।'

आवाज निक्की के कण्ठ से निकले लगी। थोड़ी देर के बाद घुंघरू बजने लगा। शरीर के तनाव से वह छटपटा रही थी। वह बेहोशी की हालत में चिल्ला रही थी, 'गाम, मुझे न मार ! ओ गाम...ओ खुदा, मुझे... न मार...ओ खुदा...ओ गाम !'

ओ खुदा, ओ गाम बड़बड़ाती आखिर निक्की बीमार-पुस्तं औरतो के अनुमानानुसार भर गई। भोली, जो स्त्रियों की आतिथ्य-परायणता में व्यस्त थी, पानी का ग्लास हाथ से गिराकर घड़ाघड़ सिर पीटने लगी।

शादी

जमोल को अपना 'शेफर लाइफ टाइम' कलम भरम्भत के लिए देना था ।
उतने टेलिफोन टायरेक्टरों में शेफर कम्पनी का नम्बर तलाश दिया ।
फोन करने से मालूम हुआ कि उनके एजेंट मेमनं डी० जे० संमूल है जिनका
दफ्तर ग्रीन होटल के समीप स्थित है ।

जमोल ने टैक्सी भी और फोटों की घोर धन दिया । घेन होटल पहुँच
कर उसे मेसर्स डी० जे० संमूल का दफ्तर तलाश करने में दिक्कत न हुई,
विस्तृत पाग था मगर तीसरी मंजिल पर ।

लिफ्ट के जरिए जमोल वहाँ पहुँचा । कमरे में दालिस होने ही लकड़ी की
धीवार भी छोटी-गी तिड़की के पंखे उसे एक सुदूर एनो-इण्डियन लकड़ी
नजर आई जिसकी छतियाँ ससाधारण रूप से उभरी हुई थीं । जमोल ने कलम
लग विटकी के अक्षर दालिस कर दिया और मुँह से कुछ न बोला । लकड़ी
ने कलम उभारे हाथ में ले लिया । खीनकर एक नजर देखा और एक बिट
पर मुद्रा जित कर जमोल के हवाले कर दी मुँह से वह भी कुछ न बोली ।

जमोल ने बिट देखा; कलम की रमीद भी । चलने ही वाला था कि पन्ट
पर उसने मडकी से पूछा, 'दम-धारह रोज तक तैयार हो जाएगा, मेरा
सवाल है ।'

लकड़ी बड़े ओर में हँसी । जमोल कुछ निश्चिन्ता-सा हो गया, मैं भापकी
रह हँसी का मतलब नहीं समझा ।

मडकी ने लकड़ी के माथ मुँह लगा कर कहा, 'मिस्टर, घाबलन वार
वार, यह वलम अमरीका जायगा । तुम भी महीने के बाद तपास करना ।'

जमील बोलवा गया, 'नो महीने ?'

बिहारी ने अपने कंठे हुए बायो वावा गिर हिलाया; जमील ने निपट का मन किया ।

यह नो महीने का गिनगिना पूरा था ! नो महीने ? इतनी मुद्दत के बाद तो औरत मलमूयना बख्ता पैदा करके एक तरफ रग देती है । नो महीने— नो महीने तक उस छोटी-सी चिट की गँभाने रगो । और यह भी कौन निश्चित रूप से कह सकता है कि नो महीने तक आदमी माद रग सकता है कि उसने एक कलम मरम्मत के लिए दिया था । हो सकता है इस दौरान में वह कमबख्त मर-मर ही जाय ।

जमील ने सोचा, यह सब ढकोसना है । कलम में मामूली-सी खराबी थी कि उसका फ़ोटो जख़रत में ज्यादा ख़ाती ख़ण्डाई करता था; इसके लिए उसे अमरीका के अस्पताल में भेजना नरामर जानबजाजी थी । मगर फिर उसने सोचा—बिनात भेजो जी उस कलम पर अमरीका जाये या अफ़्रीका । इसमें शक नहीं उसने यह ब्लेक मार्केट से एक ही पचहत्तर रुपये में खरीदा था । मगर उसने एक साल उसे खूब इस्तेमाल भी तो किया था—हजारों पृष्ठ काले कर डाले थे । अतः वह निराशा से एक दम आशावान बन गया था और आशावान बनते ही उसे खयाल आया कि वह फ़ोटों में ही और फ़ोटों में अनगिनत शराब की दूकानें हैं । बिहारी तो जाहिर है नहीं मिलेगी लेकिन फ्रांस की बेहतरीन क्विक् ब्रांडी तो मिल जयगी । चुनांचे उसने करीब वाली शराब की दुकान का रुख किया ।

ब्रांडी की एक बोतल ख़रीद कर वह लौट रहा था कि ग्रीन होटल के पास आकर रुक गया । होटल के नीचे क़द्दे-आदम शीशों का बना हुआ क़ालीनों का शोरूम था । यह जमील के दोस्त पीर साहब का था ।

उसने सोचा चलो अन्दर चलें । चुनांचे कुछ क्षणों के बाद ही वह शोरूम में था और अपने मित्र पीर साहब से, जो उम्र में उससे काफी बड़ा था, हँसी-मजाक की बातें कर रहा था ।

ब्रांडी की बोतल बारीक कागज में लिपटी दबीज ईरानी कालीन पर

मेटी हुई थी। पीर साहब ने उनकी ओर संकेत करते हुए जमीन से कहा, 'यार, इस दुल्हन का घूँघट तो खोलो; जरा इससे छेड़गानी तो करो।'

जमीन मत्तलब समझ गया, 'तो पीर साहब, ग्लाम और मोडे मँगवाइए, फिर देखिए क्या रंग जमता है।'

फौरन ग्लाम और ठण्डे सोडे आ गए। पहला दौर हुआ, दूसरा दौर शुरू होने ही वाला था कि पीर साहब के एक गुजराती दोस्त अन्दर चले आए और बड़ी बेतकलुफी से कालीन पर बैठ गये। मयोगदान होटल का छोटा-सा दो के बजाय तीन भ्वास उठा लाया था। पीर साहब के गुजराती दोस्त ने बड़ी साफ़ उर्दू में कुछ उधर उधर की बातें की और ग्लाम ने यह बड़ा पैग टालकर उसे सोडे से लबालब भर लिया। तीस-चार मध्मे-सम्ये घूँट लेकर उन्होंने रुमाल से धरना मुँह साफ़ किया, 'निगरेट निगालो यार।'

पीर साहब ने सानो ऐब सार्ई धे मगर बड़ निगरेट नहीं पीने थे। जमीन ने जेब से अपना सिगरेट बैग निकाला और कालीन पर रख दिया और साय ही साइटर।

इस पर पीर साहब ने जमीन से उस गुजराती दोस्त का परिचय कराया 'मिस्टर नटवर लाल, आप मोतियों की दुकानों करने हैं।'

जमीन ने क्षण भर के लिए मोचा—फोदलो की दुकानों धे तो दुकान का मुँह काला होता है, मोतियों की दुकानों में ...

पीर साहब ने जमीन की ओर देगते हुए कहा, मिस्टर जमीन—मगरून मौन-साइटर।'

दोनों ने हाथ मिलाया और ब्राँडी का नया दौर शुरू हुआ और ऐसा शुरू हुआ कि बोतल खाली हो गई।

जमीन ने इसमें सोचा, 'मह कमबख्त मोतियों का दुकान बनना का पंनि वाला है। मेरी प्यार और गुरूर की शारी ब्राँडी चढ़ा गया। नृदा करे इंगे मोतियाबिन्द हो !'

लेकिन ज्योंही आखिरी दौर के पैग ने जमीन के घट में धरने रहने

जमाने उसने नटवर लान को माफ कर दिया। और घंत में उससे कहा, 'मिस्टर नटवर लान उठिए, एक बोतल और हो जाय।'

नटवर पीनन उठा अपने सफ़ाई उगले की शिलवटें ठीक कीं, धोती की लांग ठीक की और कहा, 'चलिए !'

जमील पीर साहब से संबोधित हुआ, 'हम अभी हाजिर होते हैं।'

जमील और नटवर ने बाहर निकल कर टेन्गी ली और शराब की दूकान पर पहुँचे। जमील ने टेन्गी रोकी मगर नटवर ने कहा, 'मिस्टर जमील, यह दूकान ठीक नहीं। सारी चीजें महँगी बचता है।' यह कह कर वह टेन्गी नटवर से संबोधित हुआ, 'कोलावा चलो।'

कोलावा पहुँच कर नटवर जमील को शराब की एक छोटी-सी दूकान में ले गया। जो ब्रांटी जमील ने फ़ाँटे से ली वह तो न मिल सकी; एक दूसरी मिल गई जिसकी नटवर ने बहुत तारीफ़ की कि नम्बर वन चीज है।

वह नम्बर वन चीज सरीद कर दीनों बाहर निकले; पास ही में बार थी, नटवर रुक गया। 'मिस्टर जमील, क्या खयाल है आपका एक-दो पेग यहीं से पीकर चलते हैं।'

जमील को कोई एतराज नहीं था इसलिए कि उसका नशा समाप्त होने वाला था; अतः दोनों बार के अन्दर दाखिल हुए। अचानक जमील को खयाल आया कि बार वाले तो कभी बाहर की शराब पीने की इजाजत नहीं दिया करते। 'मिस्टर नटवर आप यहाँ कैसे पी सकते हैं? ये लोग इजाजत नहीं देंगे।'

नटवर ने जोर से आँख मारी, 'सब चलता है।'

और यह कह कर वह एक केविन के अन्दर घुस गया, जमील भी उसके पीछे हो लिया। नटवर ने बोतल संगीन तिपाई पर रखी और बँरे को आवाज दी। जब वह आया तो उसे भी आँख मारी, देखो दो सोडे शॉजर्स ठण्डे और दो ग्लास एकदम साफ़।

बँरा यह हुक्म सुन कर चला गया और फ़ौरन सोडे और ग्लास हाजिर

कर दिये । इस पर नटवर ने उसे दूसरी छाजा दी । फ़स्ट क्लास चिप्स और टोमाटो सॉस और फ़स्ट क्लास बटलेस ।

बैरा बना गया । नटवर जमील की घोर देल कर ऐमे ही मुस्कराया । बोटल का बॉक निवाला और जमील के ग्लास में उससे पूछे बिना एक डबल डाल दिया—सुर उगसे कुछ ज्यादा । सोडा हल हो गया तो दोनों ने अपने ग्लास टकराये ।

जमील प्यासा था, एक ही साँस में उसने आधा ग्लास खत्म कर दिया सोडा चूँकि बहुत ठण्डा और तेज था इसलिए फूँ-फूँ करने लगा ।

दन-पन्द्रह मिनट के बाद चिप्स और बटलेस आगये । जमील खुबह घर में नास्ता करके निकला था; लेकिन ब्राण्डी ने उसे भूख लगा दी । चिप्स गरम गरम थे बटलेस भी । वह पिल पड़ा, नटवर ने उसका साथ दिया । अताएव दो मिनट में दोनों प्लेटें साफ़ ।

दो प्लेटें और भेंगवाई गई । जमील ने अपने लिए चाप्स भी भेंगवाये । दो घण्टे इसी प्रकार व्यतीत हो गये । बोटल की तीन चौथाई गायब हो चुकी थी, जमील ने सोचा कि अब पीर साहब के पास जाना बेकार है ।

नगे सूत्र जम रहे थे; सुरर सूत्र घुट रहे थे । नटवर और जमील दोनों हवा के घोड़े पर सवार थे । ऐमे सवारों को आम तौर पर ऐसी चादियों में जाने की बड़ी इच्छा होती है जहाँ इन्हे नग्न शरीर वाली सुन्दर युवतियाँ मिले, वे उन्हें हाथ बाँध कर घोड़े पर बिठाएँ और यह जा वह जा ।

जमील का दिल थ दिमाग इस समय किमी ऐमी ही वादी के बारे में मोच रहा था जहाँ उसकी किसी ऐमी लवग्रस्त औरत से मुठभेड़ हो जाये जिसे वह अपने तपके हुए सीने के साथ भीच ले—इस जोर से कि उसकी हड्डियाँ तर चटल जायें ।

जमील को इतना तो मालूम था कि वह ऐमी जगह पर है—मनलव है ऐसे इलाके में है जो अपने ब्रबिलम् (बेड्यालय) के कारण सारे बम्बई में प्रसिद्ध है । जिन्हें ऐयासी करना होती है वे इधर ही का रुख करते हैं । शहर से भी जिस लड़की को लुक-छिप कर पेशा करना होता है यही आती है ।

उस सूचना के आधार पर उगने नटवर से कहा, 'मैंने कहा...वह...वह... मेरा मतलब है अगर कोई छोकरी-बोकरी नहीं मिलती ?'

नटवर ने स्लाश में एक बड़ा पैग उँडेला और हँसा, 'मिस्टर जमील, एक नहीं हजारों हजारों हजारों।'

वह हजारों की गणना जारी रखती अगर जमील ने उसकी बात काटी न होती। 'उन हजारों में से आज एक ही भिन्न जाये तो हम नमर्से कि नटवर भाई ने कमाल कर दिया।'

नटवर भाई मजे में थे; भूमकण कहा, 'जमील भाई, एक नहीं हजारों। नलो इसे खत्म करो।'

दोनों ने बोटल में जो कुछ बना था आधे घंटे के अन्दर-अन्दर खत्म कर दिया। बिल अदा करने और बँरे को तगड़ी टिप देने के बाद दोनों बाहर निकले। अन्दर अन्येरा था बाहर धूप नमकारही थी। जमील की आँखें चौंधिया गईं। एक क्षण के लिए कुछ नजर न आया। धीरे-धीरे उसकी आँखें नेज रोशनी की आदी हुईं तो उसने नटवर से कहा, 'चलो भाई।'

नटवर ने ऐयाशी लेने वाली नजरों से जमील की ओर देखा। 'माल-पानी है ना ?'

जमील के होठों पर नशीली मुस्कराहट पैदा हुई। नटवर की पसलियों में कुहनी से टहोका देकर उसने कहा, 'बहुत ! नटवर भाई बहुत !' और उसने जेब से पाँच नोट सी-सी के निकाले, क्या इतने काफी नहीं ?'

नटवर की बाँछें खिल गईं, 'काफी। बहुत ज्यादा हैं। चलो आओ पहले एक बोटल खरीद लें, वहाँ जरूरत पड़ेगी।'

जमील ने सोचा कि बात बिल्कुल ठीक है वहाँ, जरूरत नहीं पड़ेगी तो क्या किसी मस्जिद में पड़ेगी। अतः फौरन एक बोटल खरीद ली गई। टैक्सी खड़ी थी; दोनों उसमें बैठ गये और उस वादी में विचरण करने लगे।

सेकड़ों बाथेलज थे—उनमें से बीस-पच्चीस को जाँचा-परखा गया मगर जमील को कोई औरत पसंद न आई। सब मेकअप की मोटी और शोख

तहों के अन्दर छिपी हुई थी। जमील चाहता था कि ऐसी लड़की मिले जो मरम्मत-शुदा मकान मालूम न हो। जिसे देखकर यह एहसास न हो कि जगह-जगह उखड़े हुए प्लास्टर के टुकड़ों पर बड़े धनाडोपन से गुर्सी और चूना लगाया गया है।

नटवर तंग आ गया; उसके सामने जो भी धीरता आती वह जमील का कथा पकड़ कर कहता, 'जमील भाई चलेगी ?'

मगर जमील भाई उठ खड़ा होता, 'हाँ चलेगी धीर हम भी चलेंगे।'

दो जगहें धीर देखी गईं; मगर जमील को मायूसी का मुँह देसना पड़ा। वह सोचता था कि इन धीरतों के पास कौन आता है जो मूषर के गोस्त के सूखे हुए टुकड़ों की तरह दिखाई देवती हैं। उनकी अदार्ण कितनी घृणित हैं, उठने-बैठने का ढंग कितना घबरील है और कहने का ये प्राइवेट है—यानी ऐसी औरतें जो चोरी-छिपे पेशा करती हैं। जमील की समझ में नहीं आता था कि यह पदां है कहाँ जिसके पीछे ये धन्धा करती हैं ?

जमील सोच ही रहा था कि अब प्रोग्राम क्या होना चाहिए कि नटवर ने टैक्सी रूकवाई और उतर कर खना गया क्योंकि एकदम उसे एक जरूरी काम याद आ गया था।

अब जमील धकेला था, टैक्सी तास मील को घण्टा की रफ्तार से खन रहो था। उम समय साइं सात बज चुके थे। उमने ट्रायवर से पूछा, 'यहाँ कोई भइया मिलेगा ?'

ड्रायवर ने जबाब दिया, 'मिलेगा जनाब।'

'तो चलो उमके पास।'

ड्रायवर ने दो-तीन मोड घुमे और एग पहाडी बगलानुगा बिन्टिंग के पास गाडी राइो कर दी; दो-तीन बार हानं बाजाया।

जमील का गिर नसे के कारण वोभिन हो रहा था धाँसों के सामने धुंध-मां छाई हुई थी, उसे मानूम नहीं कैसे और किन तरह ? मगर अब उमने जरा दिमाग को भटका तो उमने देखा कि बट एक पावें पर बैठा है और उमरे पाठ

ही एक जवान लड़की, जिगकी नाक की पुलंग पर एक छोटी सी फुन्सी थी, अपने काटे हुए बालों में कंघी कर रही थी।

जमील ने उसे गौर से देखा। सोचने ही वाला था कि वह यहाँ कैसे पहुँचा गया उसके चेतन ने उसे मनाह दी कि, 'देखो वह सब बहुत है।' जमील ने सोचा, 'यह ठीक है लेकिन फिर भी उमने अपनी जेब में हाथ डाल कर अन्दर-ही-अन्दर नोट गिन कर थोड़ा पच्ची हर्ट निपाई पर बाँटी की सालिम बोल देता कर अपना इत्मीनान कर दिया कि सब कुछ ठीक है। उसका नशा कुछ नीचे उतर गया।

उठ कर वह उम कटे बालों वाली लड़की के पास गया, और तो कुछ समय में न आया; मुस्कराकर उमने कहा, 'कहिए मिजाज कैसा है?'

उस लड़की ने कंघी भंज पर रखी और कहा, 'कहिए आपका कैसा है?'

ठीक हूँ।' यह कह कर उमने उस लड़की की कमर में हाथ डाला, 'आपका नाम?'

'बता तो चुकी एक बार। आपको मेरा ख्याल है यह भी याद न रहा होगा कि आप टैक्सी में यहाँ आये हैं। जाने कहाँ-कहाँ घूमते रहे होंगे कि विल अड़तीस रुपये बना जो आपने अदा किया। और एक शस्स जिसका नाम शायद नटवर था, आपने उसे वैशुमार गालियाँ दीं।

जमील अपने अन्दर डूब कर सारे मामले की तह तक पहुँचने की कोशिश करने ही वाला था कि उसने सोचा था कि फिलहाल इसकी जरूरत नहीं। मैं भूल जाया करता हूँ; या यूँ समझिए कि मुझे बार-बार पूछने में मजा आता है। वह सिर्फ इतना याद कर सका कि उसने टैक्सी वाले का विल जो कि अड़तीस रुपये बनाता था, अदा किया था।

लड़की पलंग पर बैठ गई। 'मेरा नाम तारा है।'

जमील ने उसे लिटा दिया और उससे कृत्रिम प्यार करने लगा। थोड़ी देर के बाद उसे प्यास लगी तो उसने तारा से कहा, 'दो ठण्डे सोडे और ग्लास।'

तारा ने ये दोनों चीजें फौरन हाजिर कर दीं। जमील ने बोतल खोली; अपने लिए एक पैग डाल कर उसने दूसरा तारा के लिए डाला। फिर दोनों पीने लगे।

तीन पैग पीने के बाद जमील ने महसूस किया कि उसकी हालत बेहतर हो गई है। तारा को चूमने चाटने के बाद उसने सोचा कि अब मामला हो जाना चाहिए। 'कपड़े उतार दो।'

'सारे?'

'हां, मारे।'

तारा ने कपड़े उतार दिये और लेट गई। जमील ने उसके नगे शरीर को एक नजर देखा और यह राय कायम की कि अच्छा है। उसके साथ ही विचारों का एक तांता बंध गया। जमील का 'निकाह' हो चुका था; उसने अपनी पत्नी को दो तीन बार देखा था।

उसका बदन कैसा होगा? क्या वह तारा की तरह उसके एक बार कहने पर अपने सारे कपड़े उतार कर उसके साथ लेट जायगी? क्या वह उसके साथ ब्रांडी पियेगी? क्या उसके बाल कटे हुए हैं?

फिर फौरन उसका अन्त करण जाग जिसने उसे धिक्कारा। 'निकाह' का यह मतलब था कि उमकी शादी हो चुकी थी, केवल एक अवस्था शेष थी कि वह अपनी गुमराज जाये और तडकी का हाथ पकड़ कर ले आये। क्या उसके लिए यह उचित था कि एक बाजारी औरत को अपनी आगोश की शोभा बनाये।

जमील यहूत लज्जित हुआ और उमकी लज्जा के कारण उसकी शायें भुँदना शुरू हो गईं और वह सो गया। तारा भी थोड़ी देर के बाद स्वप्निल मगार में विचरने लगी।

जमील ने कई झुट्ट, उट्ट-पटांग मपने दये। कोई दो घण्टे के बाद जब वह एक बहुत ही भव्यवना सपना देख रहा था कि वह हड़बड़ा के उठ बैठा। जब अच्छी तरह धाँसँ खुली तो उसने देखा कि यह एक अपरिचित कमरे में है और उसके साथ एक सर्वथा नग्न लड़की लेटी है। लेकिन थोड़ी देर के बाद

घटनाएँ धीरे-धीरे उसके मग्निपक की धुँध को नीर कर प्रकट होने लगीं ।

वह गुद भी निषट नगा था; बीगनाहट में उसने उल्टा पाजामा पहन लिया । लेकिन उसे उसका एहसास न हुआ । कुर्ता पहन कर उसने अपनी जेबें टटोलीं; नोट सबके-सब मौजूद थे । उसने सोडा बोला और एक पेग बना कर लिया । फिर उसने तारा को हँसि में भिभोड़ा, 'उठो ।'

तारा आंगें मलनी उठी । जमीन ने उसने कहा, 'कपड़े पहन लो ।'

तारा ने कपड़े पहन लिए—बाहर गहरी शाम रात बनने की तैयारियाँ कर रही थी । जमीन ने सोना, 'ग्रन्थ कून करना ही चाहिए ।' लेकिन नह तारा से पूछना चाहता था, क्योंकि बहुत सी बातें उसके दिमाग से निकल गई थीं, 'क्यों तारा, जब हम लेटे—मेरा मतलब है जब मैंने तुमसे कपड़े उतारने के लिए कहा तो उसके बाद क्या हुआ ?'

तारा ने जवाब दिया, कुछ नहीं, आपने अपने कपड़े उतारे और मेरे बाजू पर हाथ फेरते-फेरते सो गये ।'

'वस ?'

'हाँ, लेकिन सोने से पहले आप दो-तीन बार बड़बड़ाये और कहा, मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ ।' यह कह कर तारा उठी और अपने बाल सँवारने लगी ।

जमील भी उठा । पाप का विचार दवाने के लिए उसने डबल पेग अपने हलक में जल्दी-जल्दी उँडेला । बोटल को कागज में लपेटा और दरवाजे की ओर बढ़ा ।

तारा ने पूछा, 'चले ?'

'हाँ, फिर कभी अऊँगा ।' यह कह कर वह लोहे की पेचदार सीढ़ियों से नीचे उतर गया । बड़े बाजार की ओर उसके कदम उठने ही वाले थे कि हार्न बजा; उसने मुड़ कर देखा तो एक टैक्सी खड़ी थी । उसने कहा चलो अच्छा हुआ यहीं मिल गई; पैदल चलने की तकलीफ से बच गये ।

उसने ड्राइवर से पूछा, 'क्यों भई, खाली है ?'

ड्राइवर ने जवाब दिया, 'खाली है का क्या मतलब ? खगो हुई है ।'

'तो फिर?' यह कहकर जमील मुड़ा; लेकिन ड्राइवर ने उसे पुकारा । 'किधर जाना है सेठ ?'

जमील ने जवाब दिया, 'कोई धीर टैक्सी देखता हूँ ।'

ड्राइवर बाहर निकल आया, 'मस्तक गो नड़ी किरेसा है ?' यह टैक्सी तुमने ही तो ले रखी है ।'

जमील बोखला गया, 'मैंने ?'

ड्राइवर ने धड़े खेंवार स्वर में उससे कहा, 'हाँ, तूने ? छात्ता दारू पीकर सब कुछ भूल गया ?'

इस पर तू-तू मैं-मैं शुरू हुई । इधर-उधर में लोग इकट्ठे हो गये । जमील ने टैक्सी का दरवाजा खोला धीरे धन्डर बँठ गया, 'बत्ती ।'

ड्राइवर ने टैक्सी खलाई, 'किधर ?'

जमील ने कहा, 'पुलिस स्टेशन ।'

ड्राइवर ने इस पर न जाने क्या बाही-तवाही बकी । जमील मोव में पड़ गया । जो टैक्सी उमने ली थी, उसका बिल जो कि घड़तीम खण्डे का था, उसने घटा कर दिया था । अब यह नई टैक्सी कहा में खान टपकी ? हार्मोनिक वह नये की हालत में था, मगर वह निश्चित रूप में वह मक्ता था कि यह वह टैक्सी नहीं थी धीरे न यह वह ड्राइवर है जो उसे यहाँ लया था ।

पुलिस स्टेशन पहुँचे; जमील के कदम बहून चुगी तरह महगड़ा रहे थे । सब-इन्स्पेक्टर जो कि उस वक्त ह्यूटी पर था पीरत भाव गया कि मामला क्या है । उसने जमील को कुर्सी पर बँठने के लिए कहा ।

ड्राइवर ने अपनी दास्तान शुरू करदी जो विस्तृत चलन थी । जमील निश्चय ही उसका सफटन करता, किन्तु उसमें प्रथिक बोलने की हिम्मत नहीं थी । सब-इन्स्पेक्टर से सम्बोधित होकर उसने कहा, 'जवाब मेरी मुसल्ल में नहीं छाता यह क्या बिस्ता है । जो टैक्सी मैंने ली थी, उसका चिराया मैंने

अद्वैतम रूपमें अदा कर दिया था । अब मालूम नहीं यह कौन है और मुझसे कैसा किया नांगता है ?'

ड्राइवर ने कहा, 'हूपर, इन्स्पेक्टर बहादुर, यह कार पीलेला है ।' और सबूत के तौर पर उमने जमील की ब्रांशी की बोटल मेज पर रख दी ।

जमील भुँभना गया । 'मरे भई, कौन मूषर कहता है कि मैंने नहीं पी । नवाल तो यह है कि आप वहाँ में तनरीफ ने अये ?'

सब-इन्स्पेक्टर जरीफ आदमी था । किराया ड्राइवर के हिमाव से बयालीस रुपये बनता था । उसने पन्द्रह रुपये में कैसला कर दिया । ड्राइवर बहुत चौंका-चिल्लाया, मगर सब-इन्स्पेक्टर ने उसे डाँट-डाँटकर घाने से निकलाया दिया । फिर उमने एक सिपाही ने कहा कि वह दूसरी टैक्सी बुलाये, टैक्सी आई तो उसने एक सिपाही जमील के माग कर दिया कि वह उसे घर छोड़ आये । जमील ने लड़गड़ते स्वर में उसका बहुत-बहुत शुक्रिया अदा किया और पूछा, 'जनाव क्या यह ग्राण्ट रोड पुलिस स्टेशन है ?'

सब-इन्स्पेक्टर ने जोर का कहकहा लगाया और पेट पर हाथ रखते हुए कहा, 'मिस्टर, अब साबित हो गया कि तुमने खूब पी रखी है । यह कोलावा पुलिस स्टेशन है । जाओ अब घर जाकर सो जाओ ।'

जमील घर जाकर खाना चाये और कपड़े उतारे बिना सो गया । ब्रांशी की बोटल भी उसके साथ सोनी रही ।

दूसरे रोज वह दस बजे के करीब उठा । जोड़-जोड़ में दर्द था; सिर में जैसे बड़े-बड़े बजनी पत्थर थे; मुँह का स्वाद खराब । उसने उठकर दो-तीन ग्लास फ्रूट-साल्ट के पिये; चार पाँच प्याले चाय के । कहीं शाम को जाकर तबीयत ठीक हुई और उमने खुद को बीती हुई घटनाओं के बारे में सोचने के योग्य समझा ।

बहुत लम्बी जजीर थी; इनमें से कुछ कड़ियाँ तो साबुन थीं, मगर कुछ गायब । घटनाओं का सिलसिला शुरू से लेकर ग्रीन होटल और वहाँ से कोलावा तक बिल्कुल साफ था । उसके बाद जब नटवर के साथ खास वादी की सैर शुरू हुई थी, मामला गडमड हो जाता था । चंद भलकियाँ दिखाई

देती थीं—बड़ी स्पष्ट, किन्तु फौरन प्रस्पष्ट परछाइयों का क्रम शुरू हो जाता था।

वह कैसे उस लड़की के घर पहुँचा, उसका नाम जमील की स्थिति से फिसलकर न जाने किस सड़ू में जा गिरा था। उसकी शक्ति व सूरत उसे अलबत्ता बड़ी अच्यो तरह याद थी।

वह उसके घर कैसे पहुँचा था, वह जानना बहुत महत्वपूर्ण था। यदि जमील की स्मरण शक्ति उसकी सहायता करती तो बहुत-सी चीजें साफ हो जाती। परन्तु प्रयत्न करने पर भी वह किसी परिणाम तक न पहुँच सका।

और यह टैक्सिमी का क्या सिलसिला था। उसने पहली को तो छोड़ दिया था, मगर दूसरी कौनों से टपक पड़ी थी।

सोच-सोच कर जमील का दिमाग टुकड़े-टुकड़े हो गया। उसने महसूस किया कि जितने भारी पत्थर उसमें पड़े थे सब आपस में टकरा-टकराकर धूर हो गये हैं।

रात को उसने झोंडों के तीन पैग पिये, घोड़ा-सा हल्का खाना खाया और बीती हुई घटनाओं के बारे में मोचना-मोचना सो गया।

वह टुकड़े जो गुम हो गये थे उनको तनाश करना अब जमील की व्यस्तता बन गया था। वह चाहता था कि जो कुछ उस दिन हुआ वह हू-बहू उसकी घाँसों के सामने था जब और रोज-रोज की यह मगज-पच्ची दूर हो। इसके अलावा उसे इस बात का भी दुःख था कि उसका पाप अपूरा रह गया। वह सोचना था कि यह अपूरा पाप जायेगा किस साते में? वह चाहता था कि इस एक बार उसकी भी पूर्ति हो जाय।

मगर बहुत तलाश करने के बाजूद वह पगड़ी बँगलों जैना मकान जमील की घाँसों से ओझल रहा, जब वह यक़र हार गया तो उसने एक दिन सोचा कि यह सब हवाव ही तो नहीं था?

मगर हवाव कैसे हो सकता था? हवाव में घादमी इतने रुपये खर्च नहीं करता। उस रोज कम-से-कम ढाई सौ रुपये खर्च हुए थे।

पीर साह्य में उसने नटवर के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि वह उस रोज के बाद दूसरे दिन ही समुद्र पार करती चला गया है—सायद मोतियों के मिलाने में जमील ने उस पर हज़ार सानों भेजी और अपनी तलाश मुक्त कर दी।

उसने जब अपनी स्मरणा भक्ति पर बहुत जोर दिया तो उसे बंगले की दीवार के साथ पीनल की एक प्लेट नजर आई उस पर कुछ लिखा था; सायद डाक्टर-डाक्टर वंराम जी... आगे न जाने क्या ?

एक दिन कोनावा की गलियों में चलते-चलते अन्त में वह एक ऐसी गली में पहुँचा जो उसे जानी-पहचानी मालूम हुई। दोनों ओर उसी किस्म की श्रंगलानुमा इमारतें थीं। हर इमारत के बाहर छोटे छोटे पीतल के बोर्ड लगे हुए थे—किसी पर चार, किसी पर पाँच, किसी पर तीन।

वह इधर-उधर गौर से देखता चला जा रहा था, मगर उसके दिमाग में वह लत घूम रहा था जो मुबह उसकी रास के यहाँ से आया था कि 'श्रव इन्तेजार की हद हो गई है, मेने तारीख निश्चित कर दी है। आकर अपनी दुल्हन को ले जाओ।'।

और वह इधर एक अपूर्ण पाप को पूरा करने के प्रयत्न में मारा-मारा फिर रहा था। जमील ने कहा, 'हटाओ जी इस वक्त फिरने दो मारा-मारा। एक दम उसने अपने दाहिने हाथ पीनल का छोटा-सा बोर्ड देखा। उस पर लिखा था— डाक्टर एम. वंराम जी एम. डी.।

जमील कांपने लगा। यह वही बिल्डिंग, बिल्कुल वही, वही बल खाती हुई आहनी सीढ़ियाँ। जमील बेधड़क ऊपर चला गया, उसके लिए श्रव हर चीज जानी-पहचानी थी। कारीडोर से निकल कर उसने सामने वाले दरवाजे पर दस्तक दी।

एक लड़के ने दरवाजा खोला—उसी लड़के ने जो उस रोज सोडा और बर्फ लाया था। जमील ने हीठों पर कृत्रिम मुस्कान पंदा करते हुए उससे पूछा, 'बेटा, बाई जी हैं ?'

लड़के ने 'हाँ' में सिर हिलाया, 'जी हाँ।'।

'जाओ, उनमें कहीं, कोई साहब मिलने आये हैं।' जमील के स्वर में बेतकलुफी थी।

लड़का दरवाजा भेड़कर घन्दर चला गया।

घोड़ी देर बाद दरवाजा खुला और तारा आई। उसे देखते ही जमील ने पहचान लिया कि वही लड़की है। मगर अब उसकी नाक पर फुंसी नहीं थी, 'नमस्ते !'

'नमस्ते ! कहिए, मित्राज कैसे हैं ?' यह कहकर उसने अपने कटे हुए बालों को एक हल्का-सा झटका दिया।

जमील ने उत्तर दिया, 'अच्छे हैं ?' मैं पिछले दिनों बहुत व्यस्त रहा, इन्हीं आन न गया। कहीं फिर क्या इरादा है ?'

तारा ने बड़ी गम्भीरता से कहा, 'माफ़ कीजिए, मेरी शादी हो चुकी है।'

जमील बीखला गया, 'शादी ? कब ?'

तारा ने उसी गम्भीरता से उत्तर दिया, 'जी आज ही सुबह। आइए मैं आपकी अपने पति से मिलऊँ।'

जमील चकरा गया और कुछ कहे-सुने बिना खटाखट नीचे उतर गया। सामने टैक्सी खड़ी थी, जमील का दिन थागा भर के लिए निरचल-सा हो गया था। तेज कदम उठाना वह बड़े बाजार की तरफ निकल गया।

घबराते-घबराते जमील को जाते देखकर डाइबर ने खोर से कहा, 'मेठ साहब, टैक्सी ?'

जमील ने झुंझलाकर कहा, 'नहीं, कमबख्त शादी !'

महमूदा

मुस्तकीम ने महमूदा को पहली बार अपनी शादी पर देखा। आरसी मुसहफ की रसम घदा हो रही थी कि अचानक उमे दो बड़ी-बड़ी, असाधारण रूप से बड़ी आँखें दिखाई दीं। वे महमूदा की आँखें थीं जो अभी तक कुँवारी थीं।

मुस्तकीम औरतों और लड़कियों के झुरमुट में घिरा था। महमूदा की आँखें देखने के बाद उसे जरा अनुभव न हुआ कि आरसी मुसहफ की रसम कब शुरू हुई और कब खत्म हुई। उसकी दुल्हन कौसी थी यह बताने के लिए उसे मौका दिया गया मगर महमूदा की आँखें उसकी दुल्हन और उसके बीच एक काले मलमली पर्दे की भाँति बाधक हो गईं।

उसने खोरी-खोर कई बार महमूदा की ओर देखा; उसकी हम उम्र लड़कियाँ सब चहचहा रही थीं। मुस्तकीम से बड़े जोरो पर छेड़खानी हो रही थी, मगर वह अलग-अलग खिड़की के पास घुटनों पर ठोड़ी जमाये सामोश बैठे थीं। उसका रंग गहरा था, बाल तस्त्रियों पर लिखने वाली स्याही की भाँति काले तथा चमकीले थे। उसने सीधी माँग निकाल रखी थी जो उसके अण्डाकार चेहरे पर बहुत जँवती थी। मुस्तकीम का अनुमान था कि इसका कद छोटा है; अतः जब वह उठी तो उसका प्रमाण भी मिल गया।

उसका निवास बहुत साधारण था। दुपट्टा जब उसके तिर से टुकड़ा और फाँस सरु जा पहुंचा तो मुस्तकीम ने देखा कि उसका सोना बहुत ठोस और

• एक प्रथा जिसके अनुसार दुल्हन के भँगूडे में एक बड़े सीसे वाली भँगूठी पहनाते हैं जिसमें दुल्हा को दुल्हन की मूरत दिखाई जाती है।

मजबूत है। भरा-भरा जिसम, लीगी नाक, लीड़ी पेगानी, छोटा-सा मुँह और आँखें—जो देखने को सबसे पहले दिखाई देती थीं।

मुस्तकीम अपनी दुःखन को घर ले आया। दो-तीन मास बीत गये। वह लुता थी इनकिये कि उसकी पत्नी मुन्दर तथा मुचड़ थी। लेकिन वह महमूदा की आँखें न भूल सका था। उसे यैर्मा महमूम होता था कि वह उसके दिल व दिमाग पर छा गई है।

मुस्तकीम को महमूदा का गाम मालूम नहीं था। एक दिन उसने अपनी बीवी कुलसूम से यों ही पूछा, 'वह लड़की कौन थी हमारी शादी पर जब आरस्तो मुनहफ की गम्म अदा हो रही थी। वह एक कोने में लिङकी के पास बैठी थी?'

कुलसूम ने जवाब दिया, 'मैं क्या कह सकती हूँ? उस वक्त कोई लड़कियाँ थीं मालूम नहीं आप किसके चारे में पूछ रहे हैं?'

मुस्तकीम ने कहा, 'वह... वह जिसकी ये बड़ी-बड़ी आँखें थीं।'

कुलसूम समझ गई, 'ओहो, आपका मतलब महमूदा से है! हाँ, वास्तव में उसकी आँखें बहुत बड़ी हैं लेकिन बुरी नहीं लगती। गरीब घराने की लड़की, बहुत कम बोलने वाली और शरीफ। कल ही उसकी शादी हुई है।'

मुस्तकीम को सहसा एक धक्का लगा, 'उसकी शादी हो गई कल?'

'हां, मैं कल वहीं तो गई थी। मैंने आपसे कहा नहीं था कि मैंने उसे एक अँगूठी दी है।'

'हां, हाँ मुझे याद आ गया। लेकिन मुझे यह मालूम नहीं था कि तुम जिस सहेली की शादी पर जा रही हो वही लड़की है, बड़ी-बड़ी आँखों वाली। कहाँ शादी हुई है उसकी?'

कुलसूम ने गिलोरी बनाकर अपने पति को देते हुए कहा, 'अपने अजीजों में। खोविन्द उसका रेलवे वर्कशाप में काम करता है, डेढ़ सौ रुपये माहवार तनख्वाह है। सुना है बेहद शरीफ आदमी है।'

मुस्तकीम ने गिलोरी कल्ले के नीचे दवाई, 'चलो अच्छा हो गया। लड़की भी जैसा कि तुम कहती हो शरीफ है।'

कुलसूम से न रहा गया उसे आश्चर्य हो रहा था कि उसका पति महमूदा से इतनी दिलचस्पी क्यों ले रहा है । 'ताजनुव है कि आपने उसे सिर्फ एक नजर देखने पर भी याद रखा ।'

मुस्तकीम ने कहा, 'उसकी आँखें कुछ ऐसी हैं कि आदमी उन्हें भूल नहीं सकता । क्या मैं भूट बोल रहा हूँ ।'

कुलसूम दूसरा पान बना रही थी । थोड़े-से अवकाश के बाद वह अपने पति से सम्बोधित हुई, 'मैं इसके बारे में कुछ नहीं कह सकती, मुझे तो उसकी आँखों में कोई आकर्षण दिखाई नहीं देता । मर्द न जाने किन निगाहों से देखते हैं ।'

मुस्तकीम ने यही उचित समझा कि इस विषय पर अब आगे बात-चीत नहीं होनी चाहिये । अब उत्तर में वह मुस्कराकर उठा और अपने कमरे में चला गया । इतवार की छुट्टी थी सदा की भाँति उसे अपनी पत्नी के नाम मँटिनी को देखने जाना चाहिये था मगर महमूदा का जिज्ञासु चरित्र उमने मस्तिष्क को बेभ्रम बना लिया था ।

उसने धाराम कुरी में सेटकर तिराई पर से एक बिताव उठाई जिसे वह दो बार पढ़ चुका था । दगने पहला पन्ना निकाला और पढ़ने लगा परन्तु अक्षर गठमड होकर महमूदा की आँखों में बन जाते । मुस्तकीम ने सोचा, शायद कुलसूम ठीक कहती थी कि उसे महमूदा की आँखों में कोई आकर्षण नजर नहीं आता, हो सकता है किनी और मर्द को भी नजर न आये । एक मित्र मैं हूँ जिसे दिखाई दिया है । पर क्यों ? मैंने ऐसा कोई इरादा नहीं किया था; मेरी ऐसी कोई इच्छा नहीं थी कि वे मेरे लिए आकर्षक बन जायें । एक क्षण को तो बात थी—बस मैंने एक नजर देखा और वे मेरे दिल के सिमा पर छा गईं, शरीर न उन आँखों का शेर है, न मेरी आँखों का जितने मैंने उन्हें देखा ।'

इसके बाद मुस्तकीम ने महमूदा के विषय के बारे में सोचना आरम्भ किया, 'शेणई उचमी मारी, पत्नी अच्छा हुआ । लेकिन दोस्त यह क्या मान है कि तुम्हारे दिन में हल्की-सी टीम उठती है; क्या तुम चाहते हो कि उनकी

शादी न हो ? सदा कुंवारी रहे क्योंकि तुम्हारे दिन में उससे शादी करने की इच्छा तो कभी उत्पन्न नहीं हुई, तुमने उनके बारे में कभी एक क्षण के लिए भी नहीं सोचा फिर यह जलन कौसी ? इतनी धेर तुम्हें उसे देखने का कभी विचार नहीं आया पर अब तुम क्यों उसे देखना चाहते हो । और यदि कभी उसे देना भी लो तो क्या कर लोगे ? उसे उठाकर अपनी जेब में रखा लोगे ? उसकी दड़ी-बड़ी आंखों कोनकर अपने बटुमें में छान लोगे ? बोलो ना क्या करोगे ?

मुस्तकीम के पास इसका कोई जवाब नहीं था । असल में उसे मालूम ही नहीं था कि वह क्या चाहता है । यदि कुछ चाहता भी है तो क्यों चाहता है ?

महमूदा की शादी हो चुकी थी और वह भी केवल एक दिन पहले यानी उन समय जबकि मुस्तकीम पुस्तक पढ़ रहा था महमूदा निश्चय ही दुल्हनों के लिवास में या तो अपने भैंके या अपनी समुराल में शर्मिंद-लजाई बंठी थी । वह चुद शरीफ थी, उसका पति भी शरीफ था; रेलवे वर्कशाप में नौकर था और डेढ़ सौ रुपये मासिक वेतन पाता था । बड़ी गुणी की बात थी । मुस्तकीम की हार्दिक इच्छा थी कि वह गुन रहे—आजीवन सुखी रहे । लेकिन उसके दिल में जाने क्यों एक टीम-भी उठती जो उसे ब्याकन कर देती थी ।

मुस्तकीम अन्त में इस नतीजे पर पहुंचा कि यह सब बकवास है । उसे महमूदा के बारे में बिल्कुल कुछ नहीं सोचना चाहिये । दो वर्ष व्यतीत हो गये; इस दौरान में उसे महमूदा के बारे से कुछ मालूम न हुआ और न उसने कुछ मालूम करने का प्रयत्न किया यद्यपि वह और उसका पति बंबई में डोंगरी की एक गली में रहते थे । मुस्तकीम हालांकि डोंगरी से बहुत दूर माहिम में रहता था लेकिन अगर वह चाहता तो बड़ी आसानी से महमूदा को देख सकता था ।

एक दिन कुलसूम ही ने उससे कहा, 'आपकी उस बड़ी-बड़ी आंखों वाली महमूदा के नसीब बहुत बुरे निकले ।'

चींकरकर मुस्तकीम ने चिंतित स्वर में पूछा, 'क्यों क्या हुआ ?'

कुलसूम ने गिलोरी बनाते हुए कहा, 'उसका खाबिन्द एकदम मौलवी हो गया है ।'

उसके क्या हुआ ?

‘आप मुन तो लीजिए । वह हर वक्त मजहब की बातें फग्या-गहता है लेकिन वही ऊटपटांग किस्म की । बजीफे करता है, चिल्ले काटता है और महमूदा को मजबूर करता है कि वह भी ऐसा ही करे । फकीरो ने पाग घण्टों बंठा रहता है—घरवार से बिल्कुल गाफिल हो गया है । दाढ़ी बढ़ाई है, हाथ में हर वक्त तस्वीह होती है, काम पर कभी जाता है कभी नहीं जाता । कई-कई दिन गायब रहता है; वह बेवारी कुडनी रहती है । घर में खाने को कुछ होता नहीं इसलिए फाके करती है और जब उससे शिकायत करती है तो आगे से जवाब यह मिलता है—‘फाकाकसी अल्लाह तबारक ताला को बहुत प्यारी है ।’ कुलसूम ने सब कुछ एक सांस में कहा ।

मुस्तकीम ने पनदनियाँ से थोड़ी-सी छालियाँ उठाकर मुँह में डालीं, ‘कही दिमाग तो नहीं चल गया उसका ?’

कुलसूम ने कहा, ‘महमूदा का तो यही खयाल है । खयाल क्या उसे तो यकीन है । गले में बड़े-बड़े मनको वाली माला डाले फिरता है; कभी-कभी सफेद रंग का चोला भी पहरता है ।’

मुस्तकीम गिलोरी लेकर अपने कमरे में चला गया और आराम कुर्सी में लेटकर सोचने लगा, ‘महमूदा हो गया, ऐसा पति तो बड़ा दुखदाई होता है । गरीब किस मुसीबत में फँस गई । मेरा खयाल है कि पागलपन के काटाएँ उसके पति के अन्दर धुरू ही से मौजूद होंगे जो अब एकदम उभर आये हैं । लेकिन सवाल यह है कि अब महमूदा क्या करेगी । उसका तो यहाँ कोई रिस्तेदार भी नहीं । कुछ शादी करने लाहौर से आये थे और वापस चले गये थे । क्या महमूदा ने अपने भाँ-बाग को लिखा होगा ? नहीं, नहीं उसके मा-बाग तो जैसा कि कुलसूम ने एक बार कहा था उसके बचपन ही में भर गये थे; शादी उसके बचा ने की थी । डोगरी, डोगरी में शायद उसकी जान-महचान का कोई हो । लेकिन नहीं अगर जान-महचान का कोई हाँता तो वह फाके क्यों करती ? कुलसूम क्यों न उसे अपने यहाँ ले आये । पागल हूये हैं मुस्तकीम, होना के नालून लो ।’

मुस्तकीम ने एक बार फिर इरादा किया कि वह महमूदा के बारे में नहीं

सोचेगा, इसलिए कि उससे कोई लाभ नहीं होगा बेकार-मगजपागी थी।

बहुत दिनों के बाद कुलसुम ने एक रोज उसे बताया कि महमूदा का पति जिसका नाम जलील था करीब-करीब पागल हो गया है।

मुस्तकीम ने पूछा, 'क्या मतलब ?'

कुलसुम ने जवाब दिया, 'मतलब यह कि वह अब रात को एक सेकण्ड के लिये नहीं सोता। जहाँ रात है वहाँ घण्टों-गामोश रात रहता है। महमूदा करीब रोती रहती है। मैं कल्प उमके पास गई थी। बेचारी को कई दिन का फागल था। मैं बीम रुपये दे आई क्योंकि मेरे पास इतने ही थे।'

मुस्तकीम ने कहा, 'बहुत अच्छा किया तुमने। जब तक उसका पति ठीक नहीं होता कुछ-न-कुछ दे आया करो ताकि करीब को फाकों की नीवत तो न आये।'

कुलसुम ने कुछ सोच-विचार के बाद कुछ विचित्र स्वर में कहा, 'असल में बात कुछ और है।'

'क्या मतलब ?'

'महमूदा का खयाल है कि जमील ने महज एक टोंग रचा रखा है। वह पागल-वागल हरगिज नहीं। बात यह है कि वह.....'

'वह क्या ?'

'वह श्रीरत के काबिल नहीं।.....यह कमजोरी दूर करने के लिए वह फकीरों और सन्यासियों से टोने-टोटके लेता रहता है।'

मुस्तकीम ने कहा, 'यह बात तो पागल होने से ज्यादा अफसोसनाक है। महमूदा के लिये तो यह समझो कि घरेलू जिन्दगी एक खिला (शून्य) बनकर रह गई है।'

मुस्तकीम अपने कमरे में चला गया और महमूदा की दुर्दशा के बारे में सोचने लगा। ऐसी स्त्री का जीवन क्या होगा जिसका पति सर्वथा निष्क्रिय है। कितनी उमंगें होंगी उसके हृदय में; उसके जीवन ने कितने कँपकँपा देने वाले स्वप्न देखे होंगे। उसने अपनी सहेलियों से क्या कुछ नहीं सुना होगा? कितनी निराशा हुई होगी बेचारी को जब उसे चारों ओर शून्य-ही-शून्य दिखाई

दिया होगा, ? उसने अपनी गोद हरी करने के बारे में भी कई बार सोचा होगा । जब डोंगरी में किसी के यहाँ बच्चा होने की सूचना उसे मिली होगी तो बेचारी के दिल पर एक घूँसा-मा लगा होगा । अब क्या करोगी ? ऐसा न हो कही आत्महत्या कर ले । दो वर्ष तक उसने किसी को यह राज न बयाया परन्तु उसका सीना फट पड़ा । खुदा उसके हाल पर रहम करे ।

बहुत दिन गुजर गये । मुस्तकीम और कुलसूम छुट्टियों में पंचगनी घने गये । वहाँ ठाई महीने रहे । वापस आये तो एक मास के पश्चात् कुलसूम के यहाँ लड़का पैदा हुआ; वह महमूदा के घर न जा सकी । लेकिन एक दिन उसकी एक सहेली जो महमूदा को जानती थी उसे बधाई देने आयी । उसने बातों-बातों में कुलसूम से कहा, 'कुछ मुना तुमने ? वह महमूदा है ना बड़ी-बड़ी आँखों वाली ?'

कुलसूम ने कहा, 'हाँ हाँ, डोंगरी में रहती है ।'

'खाविन्द की बेपरवाही ने गरीब को बुरी बातों पर मजबूर कर दिया है ।' कुलसूम की सहेली की आवाज में दर्द था ।

कुलसूम ने बड़े दुःख भरे स्वर में पूछा, 'कौसी बुरी बातों पर ?'

'अब उसके यहाँ गैर मर्दों का आना-जाना हो गया है ।'

'भूठ !' कुलसूम का दिल धक-धक करने लगा ।

कुलसूम की सहेली ने कहा, 'नही कुलसूम, मैं भूठ नहीं कहती । मैं परगो उससे मिलने गई थी, दरवाजे पर दस्तक देने ही वाली थी कि अंदर से एक नौजवान मर्द जो मेमन मालूम होता था बाहर निकला और तेजी से नीचे उतर गया । मैंने तब उससे मिलना मुनासिब न समझा और वापस चली आई ।'

'यह तुमने बहुत बुरी खबर सुनाई । खुदा उसे गुनाह के रास्ते से बचाये रहे । ही सकता है वह मेमन उसके खाविन्द का का कोई दोस्त हो; कुलसूम ने खुद को धोखा देते हुए कहा ।

उसकी सहेली मुस्कराई, 'दोस्त छोरो की तरह दरवाजा खोलकर आना नहीं करते ।'

कुलसूम ने अपने पति से बात की तो उसे बहुत दुःख हुआ । वह कभी नहीं रोया था लेकिन कुलसूम ने जब उसे यह दर्दनाक बात बताई कि महमूदा पाप-मार्ग पर जा रही है तो उसकी आँखों में आँसू आ गये । उसने उगी ससय निश्चय कर लिया कि महमूदा उनके गह्रां रहोगी । अतः उसने अपनी पत्नी से कहा, 'यह बड़ी भयानक बात है । तुम ऐसा करो, अभी जाओ और महमूदा को यहाँ ले आओ ।'

कुलसूम ने बड़े स्तोत्र से कहा, 'मैं उसे अपने घर में नहीं रल सकती ।'

'क्यों ?' मुस्तक्रीम के स्वर में विस्मय था ।

'बस मेरी मर्जी । वह मेरे घर में क्यों रहे ? इसलिए कि आपको उसकी आँखें पसन्द हैं ?'-कुलसूम के बोलने का ढंग बहुत विपरीत और व्यंग्यपूर्ण था ।

मुस्तक्रीम को बहुत क्रोध आया, किन्तु वह उसे पी गया । कुलसूम से बहस करना व्यर्थ था । अब केवल यही हो सकता था कि वह कुलसूम को निकाल कर महमूदा को ले आये । पर वह ऐसा कदम उठाने के बारे में सोच ही नहीं सकता था । मुस्तक्रीम की नियत बिल्कुल नेक थी और उसे खुद इसका एहसास था । असल में उसने किसी गंदे दृष्टिकोण से महमूदा को देखा ही नहीं था । हाँ उसकी आँखें उसे जरूर पसन्द थीं, इतनी कि वह बयान नहीं कर सकता था ।

वह पाप के मार्ग पर अग्रसर हो चुकी थी । 'अभी उसने सिर्फ कुछ कदम उठाये थे; उसे विनाश के गड्ढे से बचाया जा सकता था । मुस्तक्रीम ने कभी नमाज नहीं पढ़ी थी, कभी रोजा नहीं रखा था, कभी खैरात नहीं दी थी । खुदा ने उसे कितना अच्छा मौका दिया था कि वह महमूदा को गुनाह के रास्ते पर से घसीट कर ले आये और तलाक़ वगैरहा दिलवाकर उसकी किसी और से शादी कर दे । मगर वह यह सवाव का काम नहीं कर सकता था, इसलिए कि वह अपनी बीबी का दबेल था ।

बहुत देर तक मुस्तक्रीम का अन्तःकरण उसे भिड़कता रहा । एक-दो वार उसने यत्न किया कि उसकी पत्नी सहमत हो जाय, पर जैसा कि मुस्तक्रीम को मालूम था ऐसे प्रयत्न निरर्थक थे ।

मुस्तकीम का विचार था कि और कुछ नहीं तो कुलसूम महमूदा से मिलने जरूर जायेगी। मगर उसे निराशा हुई। कुलसूम ने उस रोज के बाद महमूदा का नाम तक न लिया।

अब क्या हो सकता था, मुस्तकीम खामोश रहा।

लगभग दो वर्ष बीत गये। एक दिन घर में निकलकर मुस्तकीम ऐसे ही दिल बहलाने के लिए फुटपाथ पर चहल-कदमी कर रहा था कि उसने कसाइयों की विहिंडिंग की आउण्ड फ्लोर की खोली के बाहर बड़े पर महमूदा की आंखों की झटका देखी। मुस्तकीम दो कदम आगे निकल गया था; फौरन मुड़कर उसने गौर से देखा—महमूदा ही थी। वही बड़ी-बड़ी आंखें थी, वह एक यद्दन के साथ जो उस खोली में रहती थी, बातें करने में व्यस्त थी।

इस यद्दन को सारा माहिम जानता था, अर्धे उन्न की श्रोत थी। उसका काम ऐयाश मर्दों के लिए जवान लड़कियाँ उपलब्ध करना था। उसकी अपनी दो जवान लड़कियाँ थी जिनसे वह पेशा कराती थी। मुस्तकीम ने जब महमूदा का चेहरा बड़े ही बेहूदा तरीके से मंकअप किये हुए देखा तो वह लरज उठा। अधिक देर तक यह दुखद दृश्य देखने की शक्ति उसमें न थी; वहाँ में फौरन चल दिया।

घर पहुँचकर उसने कुलसूम से इस घटना का जिक्र न किया, क्योंकि अब जरूरत ही नहीं रही थी। महमूदा अब पूर्णतया शरीर बेचने वाली श्रोत बन चुकी थी। मुस्तकीम के सामने जब भी उसका बेहूदा, कामोत्तेजक रूप से मंकअप किया हुआ चेहरा आता तो उसकी आंखों में धाँसू आ जाते। उसका अन्तःकरण उससे कहता, 'मुस्तकीम, जो कुछ तुमने देखा है, उसके कारण तुम हो। क्या हुआ था यदि तुम अपनी धीवी की कुछ दिनों की नाराजगी बरदास्त कर लेते। ज्यादा-से-ज्यादा इस भ्रम में बह भँके चली जाती। मगर महमूदा की जिन्दगी उस मदगी से तो बच जाती जिसमें वह इस समय धँसी हुई है। क्या तुम्हारी निश्चय नैक नहीं थी? अगर तुम सच्चाई पर थे और सच्चाई पर रहते तो कुलसूम एक-न-एक दिन अपने आप ठीक हो जानी। तुमने बड़ा जुल्म

किया, बहुत बड़ा पान किया ।'

मुस्तक़ीम अब क्या कर सकता था ? कुछ भी नहीं । पानी सिर से गुजर चुका था । निद्रियां गाना गेन चुग गई होंगी । अब कुछ नहीं हो सकता था । मरते हुए, रोगी को अन्तिम समय प्रायोजन मुँधाने वाली बात थी ।

थोड़े दिनों के बाद बम्बई का बानावरण साम्प्रदायिक दंगों के कारण बड़ा भयंकर हो गया था । बेटवारं के कारण देन के चारों ओर, विनाग और लूट का बाजार गर्म था । लोग पढ़ापढ़ हिन्दुस्तान छोड़कर पाकिस्तान जा रहे थे । कुलसुम ने मुस्तक़ीम को मजबूर किया कि वह भी बम्बई छोड़ दे । अतः जो पहला जहाज मिला, उसकी सीटें बूक कराके मियां-बीबी कराची पहुंच गये और छोटा-मोटा कारोबार शुरू कर दिया ।

छाई बरसा बाद इस कारोबार में उन्नति होने लगी । इसलिए मुस्तक़ीम ने नौकरी का विचार त्याग दिया । एक रोज शाम को दूकान से उठकर वह टहलता-टहलता सदर जा निकला । जी चाहा कि एक पान चाये; बीस-तीस कदम के फासले पर उसे एक दूकान नजर आई जिस पर काफी भीड़ थी । आगे बढ़कर वह दूकान के पास पहुंचा; क्या देखता है कि महमूदा बंठी पान लगा रही है; झुलसे हुए चेहरे पर उसी क्रिस्म का भद्दा मेकअप है, लोग उससे गंदे-गंदे मजाक कर रहे हैं और वह हँस रही है । मुस्तक़ीम के होश व हवास गायब हो गये । करीब था कि वहां से भाग जाये कि महमूदा ने उसे पुकारा, 'इधर' आओ दूल्हा मियां, तुम्हें एक फस्ट क्लास पान खिलायें । हम तुम्हारी आदी में शरीक थे ।'

मुस्तक़ीम विल्कुल पथरा गया ।

शांति

दो नो पॅरोशियन डेअरो के बारह बड़े धारियो वाले छाते के नीचे कुर्सियों पर बंठे चाय पी रहे थे। उधर समुद्र था जिसकी लहरों की गुनगुनाहट सुनाई दे रही थी। चाय बहुत गर्म थी, इसलिए दोनों अहिस्ता-अहिस्ता घूंट भर रहे थे। सामने मोटी भँवों वाली यहूदन की जानी-पहचानी सूरत थी, यह बड़ा गोल-भटोल चेहरा, लीली नाक, मोटे-मोटे बहुत ही ज्यादा मुर्सी लगे होंठ। शाम को हमेशा दरवाजे के साथ वाली कुर्सी पर बंठी दिखाई देती थी; मकबूल में एक नजर उस पर डाली और बलराज से कहा, 'बंठी है जाल फेंकने।'

बलराज मोटी भँवों की ओर देखे बिना बोला, 'फेंस जायगी कोई-न-कोई मछली।'

मकबूल ने एक पेस्टरी मुँह में डाली, 'यह कारोबार भी अजीब कारोबार है। कोई दूकान खोल कर बंठती है, कोई चल-फिर कर सौदा बेचती है और कोई इस तरह रेस्तोरानों में ग्राहक के इतजार में बंठी रहती है। शरीर बेचना भी एक आर्ट है और मेरा खयाल है कि मुश्किल आर्ट है। यह मोटी भँवों वाली कैसे ग्राहक का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है? कैसे किसी मर्द को यह बतलाती होगी कि वह बिकाऊ है?'

बलराज मुस्कराया, 'किसी दिन मुक्त निकालकर कुछ देर यहाँ बंठी। तुम्हें मालूम हो जायगा कि निगाहों-ही-निगाहों में क्योंकर सौदे होते हैं। इस जिम्म का भाव कैसे चुकता है?' यह कह कर उसने एकदम मकबूल का हाथ पकड़ा, 'उपर देखो उधर।'

मकबूल ने मोटी गहूँदन की तरफ देखा, बलराज ने उसका हाथ दबाया, नहीं यार उधर कोने के छाते के नीचे देखो ।'

मकबूल ने उधर देखा, एक सुबली-पतली, गोरी-चिट्टी लड़की कुर्सी पर बैठ गयी थी—बाल कटे हुए थे, नाक-नासा ठीक था, हल्के पीले रंग की जाजंट की साड़ी पहने हुए थी । मकबूल ने बलराज से पूछा, 'कोन है यह लड़की ?'

बलराज ने उस लड़की की ओर देगते हुए जवाब दिया, 'अमां वही है जिसके बारे में तुमसे कहा था कि बड़ी अजीबो-गरीब लड़की है ।'

मकबूल ने कुछ देर सोचा फिर कहा, 'कोन-सी यार ? तुम तो जिस लड़की से भी मिलते हो अजीबो-गरीब ही होती है ।'

बलराज मुस्कराया, 'यह बड़ी रामुल-मास है । जरा गौर से देखो ।'

मकबूल ने गौर से देखा । कटे हुए बालों का रंग भूसला था; हल्के वसंती रंग की साड़ी के नीचे छोटी आस्तीनों वाला ब्लाउज, पतली-पतली बहुत ही गोरी बांहें । लड़की ने अपनी गर्दन मोड़ी तो मकबूल ने देखा कि उसके बारीक होठों पर सुर्खी फैनी हुई-सी थी । 'भैं और कुछ तो नहीं कह सकता मगर तुम्हारी इस अजीबो-गरीब लड़की को सुर्खी इस्तेमाल करने का सलीका नहीं है । अब और गौर से देखा है तो साड़ी की पहनावट में भी खामियां नजर आई हैं; बाल सँवारने का अन्दाज भी सुथरा नहीं ।'

बलराज हँसा, 'तुम सिर्फ खामियां ही देखते हो, अच्छाइयों पर तुम्हारी निगाह कभी नहीं पड़ती ।'

'मकबूल ने कहा, जो अच्छाइयाँ हैं वह वयान फर्मा दीजिए । लेकिन पहले यह बता दीजिए कि आप उस लड़की को व्यक्तिगत रूप से जानते हैं या ...'

लड़की ने जब बलराज को देखा तो मुस्कराई । मकबूल रुक गया, मुझे जवाब मिल गया । अब आप देवी जी की खूबियां बता दीजिए ।'

'सबसे पहली खूबी इस लड़की में यह है कि बहुत स्पष्टवादी है । कभी झूठ नहीं बोलती । जो नियम उसने अपने लिए बना रखे हैं उनका बर्दा

नियमितता से, पालन करती है पसंनल हाइजिन का बहुत खयाल रखती है; मुहब्बत-बुहब्बत की कायल नही—इस मामले में दिल उसका बर्क ।'

बलराज ने चाय का प्रेतिम घूँट पिया, 'कहिए क्या खयाल है ?'

मकबूल ने लड़की को एक नजर देखा, 'जो खूबियाँ तुमने बताई हैं एक ऐसी औरत में नही होनी चाहिये जिसके मर्द सिर्फ इस खयाल से भाते हैं कि वह उनसे वास्तविक नहीं तो कृत्रिम प्रेम अवश्य करेगी । खुदफरेबी में अगर यह लड़की किसी मर्द की मदद नहीं करती तो मैं समझता हूँ बड़ी बेवकूफ है ।'

यही मीने मोबा था । मैं तुम्हें क्या बताऊँ वह स्वेपन की हद तक स्पष्ट-वादी है । उससे बातें करो तो कई बार धक्के-ने लगते हैं । 'एक घटा हो गया तुमने कोई काम की बात नही की, मैं चली ।' और यह जा वह जा । तुम्हारे मुँह से शगव की बू आती है, जाओ चले जाओ । साडी की हाथ मत लगाओ, मँली हो जायगी ।' यह कहकर बलराज ने सिगरेट सुलगाया । 'अजीबो-गरीब लड़की है; पहली दफा जब उससे मुलाकात हुई तो मैं वाई गाँड चकग गया । छुटते ही मुझे कहा, 'फिपटी में एक पंखा कम नही होगा । जेब में हैं तो चलो बर्ना मुझे और काम है ।'

मकबूल ने पूछा, नाम क्या है उसका ?'

'शाति बताया उमने, कश्मीरन है ।'

मकबूल भी कश्मीरी था, चौक पड़ा, 'कश्मीरन !'

'तुम्हारी हमबतन !'

मकबूल ने लड़की की और देखा । नाक-नकशा साफ कश्मीरियों का था । 'यहाँ कैसे आई ?'

'मानूम नही ।'

'कोई रिश्तेदार है उसका ?' मकबूल लड़की में दितचस्पी लेने लगा ।

'वहाँ कश्मीर में कोई हो तो मैं कह नही सकता, यहाँ बम्बई में अकेली रहती है ।' बलराज ने सिगरेट ऐस्ट्रे में दवाया, 'हानंबी रोड पर एक होटल है । वहाँ उसने एक कमरा किराये पर ले रखा है । यह मुझे एक दिन यों ही सयोग से मानूम हो गया, बर्ना वह अपने ठिकाने का पता किसी को नहीं देती ।'

जिससे मिलना होता है, यहाँ पॅरीजियन डेवरी में चला आता है। शाम को पूरे पाँच बजे आती है यहाँ।'

मकबूल कुछ देर मामोस रहा। फिर वंदे को डगारे से बुयांवा और उसने विल लाने के लिए कहा। इस दौरान में एक गृध्रपोस नीजवान आया और उस लड़की के पास बानी कुर्सी पर बैठ गया। दोनों बातें करने लगे। मकबूल बलराज से सम्बोधित हुआ, उससे कभी मुलाकात करनी चाहिए।'

बलराज मुस्कराया, जम्द-जम्द, लेकिन इस वक्त नहीं, व्यस्त है। कभी आ जाना शाम को यहाँ और साथ बैठ जाना।'

मकबूल ने विल चुकाया; दोनों दोस्त उठकर चले गये।

दूसरे दिन मकबूल अकेला आया और चाय का आर्डर देकर बैठ गया। ठीक पाँच बजे वह लड़की बस से उतरी और पसं हाथ में लटकाये मकबूल के पास से गुजरी। चाल भट्टी थी; जब वह कुछ दूर कुर्सी पर बैठ गई तो मकबूल ने सोचा—'इसमें कामोत्तेजना तो नाम को भी नहीं। आश्चर्य है इसका कारोबार किस प्रकार चलता है। लिपस्टिक कैसे वेहूदा ढंग से इस्तेमाल की है इसने? साड़ी की पहनावट आज भी सामियों से भरी है।'

फिर उसने सोचा कि उससे कैसे मिले। उसकी चाय मेज पर आ चुकी थी, बर्ना उठकर यह उस लड़की के पास जा बैठता। उसने चाय पीना शुरू कर दी। इस दौरान में उसने एक हल्का-सा इशारा किया। लड़की ने देखा; कुछ संकोच के पश्चात् उठी और मकबूल के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गई। मकबूल पहले तो कुछ घबराया, लेकिन फौरन ही संभलकर लड़की से सम्बोधित हुआ, 'चाय शौक फर्मायेंगी आप?'

'नहीं।'

उसके जवाबों के इस संक्षेप में रक्षता थी। मकबूल ने कुछ देर खामोस रहने के बाद कहा, 'काश्मीरियों को तो चाय का बड़ा शौक होता है।'

लड़की ने बड़े रूखे ढंग से पूछा, 'तुम चलना चाहते हो मेरे साथ?'

मकबूल को जैसे किसी ने ओंघे मुँह गिरा दिया। घबराहट में वह केवल 'तना' कह सका, 'हाँ।'

‘सड़की ने कहा, फिफटी स्पीज—यस घोर नो ?’

यह दूसरा रस्ता था, मगर मकबूल ने कदम जमा लिये । ‘बतिये :’

मकबूल ने चाय का बिल अदा किया । दोनों उठकर टैंक्सी स्टैण्ड की ओर चले । रास्ते में उसने कोई बात नहीं की, सड़की भी खामोश रही । टैंक्सी में बैठे तो उसने मकबूल से पूछा, कहीं जायेगा तुम ?’

मकबूल ने जवाब दिया, ‘जहा तुम ले जाओगी ?’

‘हम कुछ नहीं जानता, तुम बोलो किधर जायेगा ?’

‘मकबूल को कोई और जवाब न सूझा तो कहा, ‘हम कुछ नहीं जानता ।’

सड़की ने टैंक्सी का दरवाजा खोलने के लिए हाथ बढ़ाया, तुम कैसा आदमी है, राली पीली जोर करता है ।’

मकबूल ने उसका हाथ पकड़ लिया, ‘मैं मजाक नहीं करता । मुझे तुमसे सिके बातें करनी हैं ।’

वह बिगड़कर बोली, ‘क्या ? तुम तो बोला था फिफटी स्पीज यस ?’

मकबूल ने जेब में हाथ डाला और दस-दस के पाच नोट निकाल कर उसकी तरफ बढ़ा दिये । ‘यह लीजिए, धवराती क्यों हैं ?’

उसने नोट ले लिये, ‘तुम जायेगा कहाँ ?’

मकबूल ने कहा, ‘तुम्हारे घर ।’

‘नहीं ।’

‘क्यों नहीं ?’

‘तुमको भोला है नहीं । उधर ऐसी बात नहीं होगी ।’

मकबूल मुस्कराया, ‘ठीक है ऐसी बात उधर नहीं होगी ।’

यह कुछ चकित-भी हुई । ‘तुम कंभा आदमी है ?’

‘जैसा मैं हूँ, तुमने बोला फिफटी स्पीज यस कि नो । मैंने कहा यस और नोट तुम्हारे हवाले कर दिये । तुमने बोला उधर ऐसी बात नहीं होगा; मैंने कहा बिल्कुल नहीं होगी । अब और क्या कहनी हो ?’

सड़की सौचने लगी । मकबूल मुस्कराया, ‘देखो दाहि, बात यह है—कल तुम्हें देता; एक दोस्त ने तुम्हारी कुछ बातें सुनाई, मुझे पसंद आई । आज

मैंने तुम्हें पकड़ लिया। अब तुम्हारे पर चलते हैं, वहाँ तुम से कुछ देर बातें करूँगा और चला जाऊँगा। क्या तुम्हें यह मंजूर नहीं?’

‘नहीं, यह लो अपने फाटी रोज।’ लड़की के चेहरे पर कुंभलाहट थी।

‘तुम्हें कम फाटी रोज की पट्टी है। रुपये के अलावा भी दुनिया में और बहुत सी चीजें हैं। लो ड्राइवर को अपना एड्रेस बताओ। मैं शरीफ आदमी हूँ तुम्हारे साथ कोई धोखा नहीं करूँगा।’

मकबूल की बातों में वास्तविकता थी। लड़की उससे प्रभावित हुई। उसने कुछ संकोच के बाद कहा, ‘लो ड्राइवर हार्नबी रोड।’

‘तैयारी चली तो उसने नोट मकबूल की जेब में डाल दिये।’ ये मैं नहीं लूँगी।’

मकबूल ने ज़िद न की। ‘तुम्हारी मर्जी।’

टैक्सी एक पांच मंजिला इमारत के सामने रुकी। पहली और दूसरी मंजिल पर मसासताने थे; तीसरी, चौथी और पांचवीं मंजिल होटल के लिए सुरक्षित थी। बड़ी संकीर्ण तथा श्रद्धिखारी जगह थी। चौथी मंजिल पर सीढ़ियों के सामने वाला कमरा शांति का था। उसने पर्स से चाबी निकाल कर दरवाजा खोला। बहुत कम सामान था—लोहे का एक पलंग जिस पर उजली-सी चादर बिछी थी। कोने में एक ड्रेसिंग टेबल, एक स्टूल जिस पर टेबल फैन; और चार ट्रंक थे जो पलंग के नीचे रखे थे।

मकबूल कमरे की सफाई से बहुत प्रभावित हुआ। हर चीज साफ-पुथरी थी। तकिये के गिलाफ आम तौर पर मँले होते हैं, मगर उसके दोनों तकियों पर वेदाग गिलाफ चढ़े हुए थे। मकबूल पलंग पर बैठने लगा तो शांति ने उसे रोका, ‘नहीं, इधर बैठने का इजाजत नहीं। हम किसी को अपने बिस्तर पर नहीं बै ने देता। कुर्सी पर बैठो।’ यह कहकर वह खुद पलंग पर बैठ गई। मकबूल मुस्कराकर कुर्सी पर टिक गया।

शांति ने अपना पर्स तकिये के नीचे रखा और मकबूल से पूछा :

‘बोलो क्या बातें करना चाहते हो?’

मकबूल ने शांति की तरफ गौर से देखा और कहा, 'पहली बात तो यह है कि तुम्हें होंठों पर लिपस्टिक लगाना बिल्कुल नहीं आती ।'

शांति ने बुरा न माना; सिर्फ इतना कहा, 'मुझे मालूम है ।'

'उठो मुझे लिपस्टिक दो । मैं तुम्हें सिखाता हूँ ।' यह कहकर मकबूल ने अपना रुमाल निकाला ।

शांति ने उससे कहा, 'ड्रेसिंग टेबल पर पड़ा है, उठा लो ।'

मकबूल ने लिपस्टिक उठाई; उसे खोलकर देखा, 'इयर प्रायो मैं तुम्हारे होठ पोंछूँ ।'

'तुम्हारे रुमाल से नहीं मेरा लो ।' यह कहकर उसने टूंक धोला और एक धुला रुमाल मकबूल को दिया ।

मकबूल ने उसके होंठ पोंछे । बड़ी नफामत से नई सुर्ती उन पर लगाई । फिर कपड़े से उसके बाल ठीक किये और कहा, 'लो अब आईने में देखो ।'

शांति उठकर ड्रेसिंग टेबल के सामने खड़ी हो गई । बड़े गौर से उसने अपने होंठों और बालों को देखा और पसन्दीदा नजरों से वह तन्दीली महसूस की और पलटकर मकबूल से सिर्फ इतना कहा, 'सब ठीक है ?'

फिर पलंग पर बैठकर पूछा, 'तुम्हा कोई बीबी है ?'

मकबूल ने जवाब दिया, 'नहीं ।'

कुछ देर खामोशी रही । मकबूल चाहता था धातें हों, इसलिए उसने बात छोड़ी । 'इतना तो मुझे मालूम है कि तुम कश्मीर की रहने वाली हो । तुम्हारा नाम शांति है, यही रहती हो । यह बताओ कि क्रिप्टी स्पीड का मामला क्यों शुरू किया ?'

शांति ने बेतकलुफी से जवाब दिया, 'मेरा फादर थोनागर में डाक्टर है । मैं वहीं हॉस्पिटल में नर्स थी । एक लड़के ने मुझे खराब कर दिया । मैं भागकर इधर को आ गई । यहाँ हमको एक घादमी मिला, वह हमको क्रिप्टी स्पीड दिया । बीता, 'हनारे घायल बतों । हम गया, बस काम खानू हो गया ।

हम यहाँ होटल में था गया। पर हम इधर किसी में बात नहीं करता—सब रफ़्टी लोग हैं, हम किसी को इधर आने नहीं देते।’

मकवूल ने कुरेंद कुरेंद कर सारी घटनाएँ भातूम करना उचित न समझा। कुछ और बातें कीजिसने उसे पता चला कि शांति को वासना से कोई रूचि नहीं थी। जब इनका शिक्र आया, तो उसने बुरा-सा मुँह बनाकर कहा, ‘आई डोण्ट लाउक। एट्रज वेट।’

उसके नजदीक फिफ्टी सर्ज का मामला एक कारोवारी मामला था। श्रीनगर के अस्पताल में जब किसी लड़के ने उसे साराव किया तो जाते समय उसे दस रुपये देना चाहे। शांति को बहुत गुस्सा आया। उसने नोट फाड़ दिया। इस घटना या उसके हृदय पर यह प्रभाव हुआ कि उसने नियमित रूप से यह कारोवार शुरू कर दिया। पचास रुपये फीस सुद-ब-सुद मुकरेंद हो गई। अब आनन्द का प्रदन ही नहीं उठता था, क्योंकि नर्स रह चुकी थी, इसलिए बहुत गावधान रहती थी।

एक वर्ष हो गया था, उसे बम्बई आये हुए। इस दौरान में उसने दस हजार रुपये बचा लिये होते, मगर उसे रैस खेलने की लत पड़ गई। पिछली रैसों पर उसके पाँच हजार रुपये उड़ गये। लेकिन उसे विश्वास था कि वह नई रैसों में जरूर जीतेगी।

‘हम अपना लॉस पूरा कर लेगा।’

उसके पास कौड़ी-कौड़ी का हिसाब मौजूद था। सौ रुपये रोजाना लेती थी जो फौरन बैंक में जमा करा दिये जाते थे। सौ से ज्यादा वह नहीं कमाना चाहती थी। उसे अपने स्वास्थ्य का बड़ा ख्याल था।

दो घण्टे गुजर गये तो उसने अपनी घड़ी देखी और मकवूल से कहा, ‘अब तुम जाओ। हम खाना खायेगा और सो जायेगा।’

मकवूल उठकर जाने लगा तो उसने कहा, ‘बातें करने आओ तो सुबह के टाइम आओ। शाम के टाइम हमारा नुकसान होता है।’

मकवूल ने ‘अच्छा’ कहा और चल दिया।

दूसरे दिन सुबह दस बजे के करीब मकबूल शांति के पास पहुंचा । उसका खयाल था कि वह उसका भाना पण्ड न करेगी; लेकिन उसने थोड़ी नागवारी जाहिर न की । मकबूल देर तक उसके पास बैठा रहा । इस दौरान में शांति को सही ढंग से साढ़ी पहननी सिखाई । लड़की बुद्धिमान थी जल्दी सीख गई ।

कपड़े उसके पास काफी ताशान में धीरे अच्छे थे । ये सब-के सब उसने मकबूल को दिखाये । उसमें बचपन था न बुढ़ापा, जवानो भी नहीं थी । वह जैसे कुछ मनते-बनते एक दम रुक गई थी । एक ऐसे स्थान पर ठहर गई थी जिसकी जलवायु और मौसम का निश्चय नहीं हो सकता । वह खूबसूरत थी न बद्सूरत, धीरत थी न सड़की; पूल थी न कसी, छाछा थी न तना । उसे देख कर कभी-कभी मकबूल को बहुत उत्थान होती थी । वह उसमें वह विटु देखना चाहता था जहाँ उसने सब कुछ मिश्रित कर दिया था ।

शांति के सम्बन्ध में धीरे धीरे जानने के लिए मकबूल ने उसने हर दूसरे तीगरे रोज मिलना शुरू कर दिया । वह उसकी कोई धाव-भगत नहीं करती थी । लेकिन अब उसने अपने माफ-गुपरे बिस्तर पर बैठने की आज्ञा दे दी थी । एक दिन मकबूल को बहुत आश्चर्य हुआ जब शांति ने उससे कहा 'तुम' 'कोई सड़की मांगता ?'

मकबूल लेंटा हुआ था, चौककर उठा, 'क्या कहा ?'

शांति ने कहा, 'हम पूछती तुम कोई सड़की मांगता तो हम साकर देता ।'

मकबूल ने उससे जालूम लिया कि यह बँठे-बँठे क्या खयाल था, क्यों उसने यह प्रश्न किया तो वह मौन हो गई । जब मकबूल ने आग्रह किया तो शांति ने बताया कि मकबूल उसे एक बेकार धीरत समझता है । उसे ताज्जुब है कि मर्द उसके पास क्यों घाते हैं जबकि वह इतनी टंडी है । मकबूल उससे सिर्फ बातें करता है धीरे चला जाता है । वह उसे मिलीना समझता है । आज उसने सोचा—मुझ जैसी सारी धीरतें तो नहीं । मकबूल को धीरत की जरूरत है क्यों न वह उसे एक भोगादे ।

मकबूल ने पहली बार शांति की आँसो में आँसू देते । एकदम वह उठी

श्रीर चिल्लाने लगी, 'हम कुछ भी नहीं है जाओ नने जाओ । हमारे पास क्या माता है ? जाओ ।'

मकबूल ने कुछ नहीं कहा, रामोधी ने उठा श्रीर नला गया ।

नगातार एक हफ्ते तक यह पंरोशिवन डेपरी जाता रहा मगर शांति दिगार्ई न दी । अंत में एक दिन मुचन उसने उसके होटल का रस किया । शांति ने दरवाजा गोल थिया मगर कोई बात न की । मकबूल कुर्सी पर बैठ गया । शांति के होंठों पर मुर्गी पुराने भट्टे डंड से लगी थी; बालों का हाल भी पुराना था । साड़ी की पहनावट तो श्रीर भी ज्यादा भोंठी थी । मकबूल उससे संबोधित हुआ, 'मुझमें नाराज हो तुम ?'

शांति ने उत्तर न दिया श्रीर पलंग पर बैठ गई । मकबूल ने कठोर स्वर में पूछा, 'भूल गईं जो मैंने सिगयाया था ?'

शांति चुप रही । मकबूल ने क्रोध में कहा, 'जवाब दो वरना याद रखो माहंगा ।'

शांति ने केवल इतना कह, 'मारो ।'

मकबूल ने उठकर एक जोर का चांटा उसके मुंह पर जड़ दिया । शांति विलविला उठी । उसकी चकित आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे । मकबूल ने जेब से अपना हमाल निकाला, गुस्से में उसके होंठों की भट्टी सुर्खी पोंछी उसने विरोध किया लेकिन मकबूल अपना काम करता रहा । लिपस्टिक उठा कर नई सुर्खी लगाई—कंधे से उसके बाल सँवारे । फिर उसे डाँटकर कहा, 'साड़ी ठीक करो अपनी ।'

शांति उठी श्रीर साड़ी ठीक करने लगी । एकदम उसने फूट-फूटकर रोना शुरू कर दिया । श्रीर रोते-रोते विस्तर पर गिर पड़ी । मकबूल थोड़ी देर चुप रहा । जब शांति का रोना जब कुछ कम हुआ तो उसके पास जाकर उसने कहा, 'शांति, उठो । मैं जा रहा हूँ ।'

शांति ने तड़पकर करवट बदली श्रीर चिल्लाई, 'नहीं-नहीं' । तुम नहीं जा सकते ।' श्रीर दोनों बाजू फैलाकर दरवाजे के बीच में खड़ी हो गई । 'तुम मे मार डालूँगी ।'

वह कांप रही थी। उसका सीना जिसके वारे में मकबूल ने कभी गौर नहीं किया था जैसे गहरी नींद से उठने की कोशिश कर रहा था। मकबूल के चकित नेत्रों के सम्मुख शांति ने तले ऊपर धड़ी तेजी से कई रंग बदले। उसकी भीगी घ्रांति चमक रही थी। सुर्खों लगे बारीक होंठ हल्के-हल्के कांप रहे थे। एकदम भांगे दडकर मकबूल ने उसे अपने सीने से भींच लिया।

दोनों पलंग पर बंठे तो शांति ने अपना सिर न्योढ़ाकर मकबूल की गोद में डाल दिया। उसके घ्रांति बन्द होने ही में न घाते थे; मकबूल ने उसे प्यार किया। रोना बन्द करने के लिए कहा तो वह घ्रांतुओं में झटक कर बोली, 'उधर श्वेतनगर में... एक घ्रादमी ने... हमको मार दिया था... पर एक घ्रादमी ने... हमको जिन्दा कर दिया।'।

दो घण्टे के बाद जब मकबूल जाने लगा तो उसने जेब से पचास रुपये निकाल कर शांति के पलंग पर रखे और मुस्कराकर कहा, 'तो अपने फिपटो रुपयज।'।

शांति ने बड़े गुस्से और ग्लानि से नोट उठाये और फेंक दिये।

फिर उसने तेजी से अपनी ड्रॉइंग टेबल का एक दरार खोला और कहा, 'इधर घ्रामी, देखो यह क्या है?'

मकबूल ने देखा सी-सी के कई नोटों के टुकड़े पड़े थे। मुट्ठी भर कर शांति ने उठाये और हवा में उछाले, 'हम ये नहीं मागता।'।

मकबूल मुस्कराया; होले से उसने शांति के गाल पर छोटी मो चपत लगाई और पूछा, 'अब तुम क्या मागता है?'

शांति ने जवाब दिया, 'तुमको।'। यह कहकर वह मकबूल के साथ चिंमन गई और रोना शुरू कर दिया।

मकबूल ने उसके बाल सँवारते हुए बड़े प्रेम से कहा :

'रोओ नहीं, तुमने जो मागा है वह तुम्हें मिला गया है।'।

राम खिलौवन

खटमल भारने के बाद मैं ट्रंक में पुराने कागजात देख रहा था कि सईद भाईजान की तसवीर मिल गई। मेज पर एक सालो फ्रेम पड़ा था, मैंने उस चित्र को उभो में लगाया और कुर्सी पर बैठकर धोबी की प्रतीक्षा करने लगा।

हर इतवार को मुझे इसी तरह इन्तेजार करना पड़ता; क्योंकि शनिवार की शाम को मेरे कपड़ों का स्टॉक खरम होना जाता था— मुझे स्टॉक तो नहीं कहना चाहिए इसलिए कि मुफलिसी के इस जमाने में मेरे पास सिर्फ इतने कपड़े थे जो मुश्किल से छ-सात दिन तक मेरी इज्जत बचाये रख सकते थे।

मेरी शादी की बातचीत हो रही थी और हम तिलसिले में पिछले दो तीन इतबारों से मैं माहिम जा रहा था। धोबी शरीफ भादमी था, यानी घुलाई न मिलने के बावजूद हर इतवार को ब्राह्मणदशी के साथ पूरे दस बजे मेरे कपड़े ले आता था। लेकिन फिर भी मुझे सटका था कि ऐसा न हो कि मेरे वैसे न देने की मजबूरी से तग आकर किसी दिन मेरे कपड़े चोर-बाजार में बेच दे और मुझे अपनी शादी की बातचीत में बिन कपड़ों के हिस्सा लेना पड़े और जो जाहिर है कि बहुत ही बुरी बात होती।

खोली में मरे हुए सटमलों की बहुत ही घिनौनी बू फैली हुई थी मैं सोच रहा था कि उसे किस तरह दबाऊँ कि धोबी आ गया। 'साब सलाम।' कहके उसने अपनी गठरी खोली और मेरे गिनती के कपड़े मेज पर रख दिये। ऐसा करते हुए उसको नजर सईद भाईजान की तसवीर पर पड़ी।

जातिवत्तर बहुत बड़ा खादमी होता—उपर कोनावा में रहता होता। जब मरना तो हमको एक पगड़ी, एक धोती और एक कुर्ता दिया जाता। तुमरा साम भी एक दिन बड़ा खादमी बनता।'

मैं अपनी पत्नी को गमवीर गाया किया मुना चुका था कि गरीबी के जमाने में कियनी दरियाजिमी में घोबी ने मेरा माग दिया था। जब दे दिया, लो दे दिया उसने कभी हिंसावा की ही न थी। लेकिन मेरी पत्नी को कुछ गमप बाद यह अिकापन पैदा हो गई कि यह हिंसाव नहीं करना। मैंने उससे कहा, 'आर बरम मेरा काम करता रता है, उसने कभी हिंसाव नहीं किया।'

उत्तर मिला, 'हिंसाव क्यों करता? पैसे हुगने-चोगुने वसूल कर लेता होगा।'

'यह कैसे?'

'आर नहीं जानते। जिनके घरों में पत्नियाँ नहीं होतीं उन्हें ऐसे लोग बेवकूफ बनाना जानते हैं।'

समयम हर मास घोबी से मेरी बीबी की सटार होती थी कि यह कपड़ों का हिंसाव खलग अपने पास क्यों नहीं रखाता। वह बड़ी सादगी से सिर्फ इतना कहता, 'वेगम साव, हम हिंसाव जानन नाहीं। तुम झूठ नहीं बोलेगा। साइद शालिम बालिदटर जो तुम्हारे साव का भाई होता, हम एक बरस उसक काम किया होता। वेगम साव बोलता—'घोबी तुम्हारा इतना पैसा हुमा।' हम बोलता, 'ठीक है।'

एक महीने ढाई सौ कपड़े धुनाई में गये। मेरी बीबी ने उसकी परीक्षा के लिए उससे कहा, 'घोबी इस महीने साठ कपड़े हुए।'

उसने कहा, 'ठीक है वेगम साव, तुम झूठ नहीं बोलेगा।'

मेरी पत्नी ने साठ कपड़ों के हिंसाव से जब उसको दाम दिये तो उसने

पैसे छूकर सलाम किया और चलने लगा। मेरी पत्नी ने उसे

! साठ नहीं, ढाई सौ कपड़े थे। लो अपने दाकी रुपये;
था।

घोबी के केवल इतना कहा, 'बेगम साय, तुम झूठ नहीं बोलोगे।' बाकी रुपये अपने मापे के साथ सूकर सामान बिया धोर चला गया।

बिवाह के दो वर्ष पश्चात् मैं दिल्ली चला गया। डेढ़ वर्ष वही रहा। फिर वापस बम्बई आ गया और माहिम में रहने लगा। तीन महीने के अन्दर हमने चार घोबी बदले क्योंकि वे बहुत बेईमान और भगड़ानू थे। हर घुलार्द पर भगड़ा लड़ा हो जाता था—कभी कपड़े कम निकलते थे, कभी घुलार्द बहुत बुरी होती थी। हमें अपना पुराना घोबी याद आये लगा। एक रोज जब कि हम विल्कुल बिना घोबी के रह गये थे वह अचानक आ गया और कहने लगा, 'माद को हमने एक दिन बस में देना। हम बोला ऐसा कैसे? साज तो दिन्नी बना गया।' हमने उधर भईसल्ला में तपास किया। छापा वाला बोला, 'उधर माहिम में तपास करो।' बाजू वाली पाली में साब का दोस्त होता। उससे पूछा और आ गया।

हम बहुत गुग हुए और हमारे कपड़ों के दिन हँसी-मुन्नी गुजरने लगे।

कौन्स सत्तास्त्र हई तो शराब-बन्दी का कानून लागू हो गया। अफ्रेंजो शराब मिलनी थी लेकिन देगी शराब की लिबाई और त्रिकी विल्कुल बन्द हो गई। निम्नानवे प्रतिगत घोबी शराब के आदी थे। दिन भर पानी में रहने के बाद पाब-पापपाश शराब उनके जीवन का अंग बन चुकी थी। हमारा घोबी बीमार हो गया। उस बीमारी का इलाज करने उस अहरीली शराब से किया जो अर्धे सन से बनता था शिपे-चोरी बिकनी थी। पहिलाम मह निकला कि उसके पेट में बड़ी खतरनाक गड़बड़ पैदा हो गई जिसने उसे मौत के दरवाजे तक पहुँचा दिया।

मैं बहुत व्यस्त था। सुबह छः बजे परंसे निकलता था और रात को दस-गाड़े दम बजे लौटता था। मेरी बीबी को जब इस खतरनाक बीमारी का पता चला तो वह टैक्सी लेकर उसके घर गई। नौकर और दोफर की सहायता से उसे गाड़ी में बिठाया और डाक्टर के पास ले गई। डाक्टर बहुत प्रभावित हुआ और उसने फीम लेने से इन्कार कर दिया। लेकिन मेरी बीबी ने कहा, 'डाक्टर साहब, आप सारा सबाब नहीं ले सकते।'।

डानटर मुस्कराया, 'सो घाघा-घाघा कर सीजिए ।'

डानटर ने घाघी काम खोजा कर सी ।

घोषी का नियमित रूप में इलाज हुआ । पेट की तकनीक कुछ इन्जेक्शनों से ही दूर हो गई । भगवान् भी, पोस्टिक दवाइयों के प्रयोग से धीरे-धीरे महम हो गई । कुछ पत्नीयों के बाद वह बिल्कुल ठीक-ठाक था और उठते-बैठते होने लगा देता था; भगवान् साव को गाइड जनिम जानिडटर बनाये । उपर कीचारे में साव रहने को ज्ञायें । चाचा नोक हों । बहुत-बहुन पैसा हो । वेगम साव घोषी को लेने चाचा--मोटर में ! उपर किले में (फोर्ट) बहुत बड़े टागटर के पास ले गया जिमके पास वेग होता... भगवान् वेगम साव को पुन रसे !

कई वर्ष व्यतीत हो गये । इस दौरान में कई राजनीतिक क्रांतियाँ आईं । घोषी निरन्तर हर जनिवार को आता रहा । उसका स्वास्थ्य अब बहुत अच्छा था । इतना समय बीतने पर भी वह हमारा एहतान नहीं भूल था । हमेशा दुयाएँ देता था । शराब बिल्कुल छूट चुकी थी । शुरू में वह कभी-कभी उसे याद किया करता था, पर अब नाम तक न लेता था । सारा दिन पानी में रहने के बाद थकान देर करने के लिए अब उसे दारू की आवश्यकता नहीं होती थी ।

परिस्थितियाँ बहुत बिगड़ गईं । देश-विभाजन हुआ तो हिन्दू-मुस्लिम दंगे शुरू हो गये । हिन्दुओं के इलाके में मुसलमान और मुसलमानों के इलाकों में हिन्दू दिन के प्रकाश और रात्रि के अंधकार में मारे जाने लगे । मेरी पत्नी लाहौर चली गई ।

जब स्थिति और ज्यादा बिगड़ी तो मैंने घोषी से कहा, 'देखो घोषी अब तुम काम बन्द कर दो । यह मुसलमानों का मुहल्ला है । ऐसा न हो कोई तुम्हें मार डाले ।'

घोषी मुस्कराया, 'साव, अपन को कोई नहीं मारता ।'

हमारे मुहल्ले में भी दुर्घटनाएँ हुईं, परन्तु घोषी बराबर आता रहा ।

इतवार को मैं घर में बैठा अखबार पढ़ रहा था । खेलों के पृष्ठ पर

क्रिकेट के मैदानों का स्कोर दर्ज था और पहले पृष्ठ पर दशों के शिकार हिन्दुओं तथा मुसलमानों के भाँकड़े। मैं उन दोनों की भयानक सभ्रानता पर गौर कर रहा था कि घोड़ी घा गया। कापी निकाल कर मैने कपड़ों की पड़ताल शुरू की तो घोड़ी ने हँस-हँसकर वातें शुरू कर दी। 'साइद शालिम बालिस्टर बहुत अच्छा घादमी होता। यहाँ से चला जाता तो हमको एक पगड़ी, एक घोड़ी और एक कुर्ता दिया होता। तुम्हारा बेगम सब भी एक दम अच्छा घादमी होना। बाहर घाम गया है ना? ... अपने मुल्लूक मे? उधर कागच लिखो तो हमारा सलाम बोली।' 'मोटर लेकर घाया हमारी खोली में।' 'हमको इतना जुनाब आया होना। डाक्टर ने मुई लगाया, हम एकदम ठीक हो गया। उधर कागच लिखो तो हमारा सलाम बोली। योनो रामखिनावन खोनता है हमको भी कागच लिखो'.....'

मैने उसकी बात काट कर जरा तेजी से कहा, 'घोड़ी, दाख शुरू कर दी?'

घोड़ी हँसा, 'दाख? दाख कहाँ मिलती है साब?'

मैने और कुछ कहना उचित न समझा। उसने मैने कपड़ों की गठरी बनाई और सलाम करके चला गया।

कुछ दिनों में स्थिति और भी अधिक खराब हो गई। लाठीर से तार-पर-तार माने लगे कि सब कुछ छोड़ो और जल्दी चले घामो। मैने मनिवार के दिन इरादा कर लिया कि इतवार को चल दूँगा। लेकिन ठुम्हे मुवह सवेरे निरुत जाना था। कपड़े घोड़ी के पास थे। मैने सोचा कपड़ों से पहले-गहले उसके यहा जाकर ले आऊँ। घत. लाम को विक्टोरिया लेकर महालक्ष्मी रवाना हो गया।

कपड़ों के वक्त में अमो एक घण्टा रोप था। इसलिए यतायात आरंघ था। टामे चल रही थी। मैरी विक्टोरिया पुल के पास पहुँची तो एकदम शोर हुआ। लोग घेघाधुंघ भागने लगे। ऐसा मानूम हुआ जैसे सीढ़ी की लड़ाई हो रही है। भीड़ छंटो तो देखा दूर मट्टियों के पास बहुत से घोड़ी काठियाँ हाथ में लिए नाच रहे हैं और तरह-तरह की भावाजें निकाल रहे हैं।

मुझे ऊपर ही जाना था । बेचिन बिचड़ोरिया याने मे ऊपर कर दिया । मैंने उमरी किराया क्या किया और पैसा न बन पड़ा । जब घोड़ियों के पास पहुँचा तो वह मुझे देगाकर गामोश हो गये ।

मैंने सामे बटकर एक घोड़ी से पूछा, 'रामखिलावन कहाँ रहता है ?'

एक घोड़ी जिसके साथ मे जाती थी, झूलता हुआ उस घोड़ी के पास आया जिसने मैंने प्रश्न पूछा था, 'जवा पूछत है ?'

'पूछत है रामखिलावन कहाँ रहता है ?'

गराब से चुत घोड़ी ने करीब-करीब मेरे ऊपर नउकर पूछा, 'तुम कौन है ?'

'मैं ? रामखिलावन मेरा घोड़ी है ।'

'रामखिलावन तुम्हारा घोड़ी है, तू किस घोड़ी का बच्चा है ?'

एक चिल्लाया, 'हिन्दू घोड़ी का या मुसलमान घोड़ी का ।'

सारे घोड़ों जो गराब के नये में चूर थे, मुझे तानते और लाठियां घुमाते मेरे इर्द-गिर्द एकत्र हो गए । मुझे केवल उनके एक प्रश्न का उत्तर देना था— मुसलमान हूँ या हिन्दू ? मैं बहुत भयभीत हो गया । भागने का सवाल ही पैदा नहीं होता था, क्योंकि मैं उनमें घिरा हुआ था । पास कोई पुलिस वाला भी नहीं था, जिसे मदद के लिए पुकारता । और कुछ समय में न आया तो बेजोड़ शब्दों में उनसे बातचीत आरम्भ कर दी । 'रामखिलावन हिन्दू है... हम पूछता है, वह किधर रहता है ?... उसकी खोली कहाँ है ?... दस बरस से वह हमारा घोड़ी है ।... बहुत बीमार था, हमने उसका इलाज कराया था... हमारी बेगम... हमारी बेगम साहब यहाँ मोटर लेकर आई थीं...'' यहाँ तक मैंने कहा तो मुझे अपने ऊपर बहुत तरस आया । दिल-ही-दिल में बहुत लज्जित हुआ कि : 'इन्सान अपनी जान बचाने के लिये कितनी नीची सतह पर उतर आता है, इस अनुभव ने मुझे साहस प्रदान किया और फिर मैंने उससे कहा, 'मैं मुसलमीन हूँ ।'

'मार डालो, मार डालो !' का शोर बुलन्द हुआ ।

घोड़ी जो कि राराब के नदी में घुस था, एक घोर देखकर चिल्लाया,
'टहरो ! इसे रामखिलावन मारेगा !'

मैंने पलटकर देखा । रामखिलावन मोटा डण्डा हाथ में लिये लडखड़ा
रहा था । उसने मेरी घोर देखा घोर मुसलमानों की अपनी भाषा में
गालियाँ देना शुरू कर दीं । डण्डा फिर तक उठाकर गालियाँ देना हुआ वह
मेरी तरफ बढ़ा, मैंने आशा के स्वर में कहा, 'रामखिलावन !'

रामखिलावन दहाड़ा, 'घुस कर वे रामखिलावन के...'

मेरी अन्तिम आशा टूट गई । जब वह मेरे समीप था पहुँचा तो
मैंने हँसे हुए-कण्ठ से धीरे से कहा, 'मुझे पहचानते नहीं रामखिलावन ?'

राम खिलावन ने प्रहार करने के लिए डण्डा उठाया । एकदम उसकी
आँखें मुकड़ीं, फिर फँलीं, फिर मुकड़ीं । डण्डा हाथ से गिराकर उसने करीब
आकर मुझे गौर से देखा घोर पुकारा, 'माव !' फिर वह अपने साँपियों से
सम्बोधित हुआ, 'यह मुसलमीन नहीं । यह मेरा साव है । बेगम साव का
साव ।' यह मोटर लेकर भागा था 'डाक्टर के पास ले गया था, जिमने
मेरा जुल्माव ठीक किया था ।'

रामखिलावन ने अपने साँपियों को बहुत समझाया, किन्तु वे न माने ।
सब धारावी थे । नू-नू मैं-मैं शुरू हो गई । कुछ घोड़ी रामखिलावन की तरफ
हो गये और हाया-पाई पर नौबत आ गई । मैंने मौका ठीक समझा और वहाँ
से खिसक गया ।

दूसरे रोज मुझ ही बजे के करीब मेरा सामान तैयार था । केवल
अहाज के टिकटों की प्रतीक्षा थी जो एक मित्र ब्लैक मार्केट से खरीदने
गया था ।

मैं बहुत बेचैन था । दिल में तरह-तरह के विचार उबल रहे थे । दिन
चाहता था कि जल्दी टिकट आ जायें और मैं बन्दरगाह की तरफ चल दूँ ।
मुझे ऐसा अनुभव होता था कि अगर देर हो गई तो मेरा पलैट मुझे अपने
बन्दर कैंद कर लेगा ।

दरवाजे पर दस्तक हुई। मैंने मोना टिकट घ्रा गये। दरवाजा खोला तो बाहर खोपी गड़ा था।

‘माव मर्याम !’

‘मर्याम !’

‘मैं अन्दर घ्रा जाऊँ ?’

‘घ्रायो !’

यह मामोजी ने अन्दर दागिन हुआ। गठरी मोलकर उसने कपड़े निकाल कर पलंग पर रगे। मोती ने शपथी घ्रागें पोंछी और रुमाँ-सा होकर कहा, ‘घ्राप जा रहे हैं साव ?’

‘हाँ !’

उसने रोना शुरू कर दिया, ‘माव मुझे माफ कर दो। यह सब दारू का कनूर था और दारू... दारू आजकल मुपत मिलती है।... सेठ लोग बाँटता है कि पीकर मुसलमीन को मारो।... मुपत की दारू कौन छोड़ता है साव।... हमको माफ कर दो।... हम कियेला घा।... साइद शालिम बालिस्टर हमारा बहुत मेहरवान होता।... तुम्हारा वेगम साव हमारा जान बचाया होता।... जुल्लाव से हम मरता होता।... वह मोटर लेकर आता... डाक्टर के पास ले जाता। इतना पैसा सारच करता। तुम मुलुक जाता वेगम साव से मत बोलना। रामखिलावन...’

उसकी आवाज गले में रूँघ गई। गठरी की चादर कंधे पर डालकर चलने लगा तो मैंने रोका, ‘ठहरो रामखिलावन !’

लेकिन वह धोती की लाँग संभालता तेजी से बाहर निकल गया।

औरत ज्ञात

महाराजा 'ग' ने रेमकोर्स पर भगोक की मुलाकात हुई। उसके बाद दोनों अभिन्न मित्र बन गये।

महाराजा 'ग' को रेम के छोड़े पालने का सौक ही नहीं सख्त था। उसके पस्तबल में अच्युती-मे-अच्युती नम्ल को छोड़ा मौजूद था और महल में जिनके गुंबद रेमकोर्स से साफ दिखाई देते थे, भांति-भाति की आश्चर्यजनक वस्तुएँ थीं।

भगोक जब पहली बार महल में गया तो महाराजा 'ग' ने कई घण्टे व्यतीत करके उसे अपनी तपाम अनुगलब्ध वस्तुएँ दिखाईं। इन वस्तुओं को एकत्र करने में महाराजा की सारे सत्तार का दौरा करना पड़ा था; प्रत्येक देश का शोना-कोना छानना पड़ा था। भगोक बहुत प्रभावित हुआ; घतः अपने तक्षण महाराजा 'ग' के जयन-स्तर की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

एक दिन भगोक घोड़ों के टिप लेने के लिए महाराजा के पास गया तो वह डाक कम में फिल्म देख रहा था। उसने भगोक को वहीं बुनवा लिया। सिक्सटीन मिनिमीटर फिल्म थी जो महाराज ने स्वयं अपने कमरे से ली थी। जब प्रोजेक्टर बला तो पिछली देव पूरी-की-पूरी पर्दे पर दीड़ गई। महाराजा का छोड़ा इन रेम में बन धाया था।

इन फिल्म के बाद महाराजा ने भगोक की फर्माइन पर और कई फिल्म दिखाईं। स्वीटजरलैंड, पेरिस, न्यूयार्क, हॉन्गू चू लू, हवाई, कश्मीर की घाटी— भगोक बहुत आनन्दित हुआ। ये सारी फिल्में प्राकृतिक रंगों में थीं।

भगोक के पास भी सिक्सटीन मिनिमीटर कैमरा और प्रोजेक्टर था किन्तु

उसके पान फिन्नों का उभना गदा अफ़्फ़ार नहीं था। दरमगल उसे इतनी कुर्सी ही नहीं मिलनी थी कि अपना गदा थोक जी भर के पूरा कर सके।

महाराजा जब कुछ फिन्ने दिगा प्रकाश तो उसने कमरे में रोशनी की ग्री वही बेनफ़ल्लुकी ने प्रयोज की रात पर अपना मारकर कहा, 'श्रीर मुनाअं दोस्त।'।

अशोक ने विगरेट मुनगाया, 'मजा था गया फिल्म देखकर।'।

'श्रीर दिगाज' ?'

'नहीं, नहीं।'।

'नहीं भई, मऊ जम्बर देगो। मजा था जायगा तुम्हें।' यह कहकर महाराजा 'ग' ने एक संदूकना गोलकर एक रीन निकाली श्रीर प्रोजेक्टर पर चढ़ा दी। 'जरा इत्तेगान से देगना।'।

अशोक ने पूछा, 'क्या मतलब ?'

महाराजा 'ग' ने कमरे की लाइट आफ़ कर दी। 'मतलब यह कि हर चीज गौर से देखना।'। कहकर उसने प्रोजेक्टर का स्विच दबा दिया।

पदों पर कुछ क्षणों तक सफ़ेद रोशनी बरबराती रही। फिर एकदम तस्वीरें शुरू हो गईं। एक सर्वथा नग्न स्त्री सोफ़े पर लेटी थी; दूसरी शृंगार-मेज के पास खड़ी बाल सँवार रही थी।

अशोक कुछ देर सामोश बँठा देखता रहा। उसके बाद एक दम उसके कण्ठ से कुछ विचित्र आवाज निकली। महाराजा ने हँसकर उससे पूछा, 'क्या हुआ ?'

अशोक के कण्ठ से आवाज फँस-फँसकर बाहर निकली, 'बन्द करो यार, बन्द करो !'

'क्या बन्द करो !'

अशोक उठने लगा; लेकिन महाराजा ने उसे पकड़कर बिठा दिया, 'यह म तुम्हें पूरी-की-पूरी देखनी पड़ेगी।

ॐ चलती रही। स्त्री-पुरुष का शारीरिक सम्बन्ध निपट नग्नता के रकता रहा। अशोक ने सारा समय बेचैनी में काटा। जब फिल्म

बन्द हुई घोर पर्दे पर केवल दवेन प्रकाश था तो अशोक को ऐसा अनुभव हुआ कि जो कुछ तसने देखा था, प्रोजेक्टर की बजाम उसकी आँखें फँक रही हैं।

महाराजा 'ग' ने कमरे की बत्ती खोली घोर अशोक की ओर देखा और एक जोर का ठहाका लगाया, 'बया हो गया तुम्हें ?'

अशोक कुछ मुन्नट-सा गया था। एकदम प्रकाश होने के कारण उसकी आँखें मिची हुई थी। माथे पर पसीने के छोटे-छोटे कतरे थे। महाराजा 'ग' ने जोर से उसकी रान पर धप्या मारा और ऐसे जोर में हँसा कि उसकी आँखों में आंसू आ गये। अशोक सोफे पर से उठा, रुमाल निकालकर अपने माथे का पसीना पोछा। 'कुछ नहीं यार।'

'कुछ नहीं क्या ? मजा नहीं आया ?'

अशोक का कण्ठ सूखा हुआ था। धूरु निगलकर उसने कहा, 'वहाँ से लामे यह फिल्म ?'

महाराजा 'ग' ने सोफे पर लटते हुए उत्तर दिया, 'पेरिस से। पेरि... पेरि...'

अशोक ने सिर को झटका-सा दिया, 'कुछ समझ में नहीं आता।'

'क्या ?'

'ये लोग। मेरा मतलब है कमरे के सामने ये लोग कैसे... ?'

'यही तो कमाल है। है कि नहीं ?'

'यह है तो मही, यह कहकर अशोक ने रुमान से अपनी आँखें साफ की। सारी तसवीरों जैसे मेरी आँखों में फम-सी गई हैं।'

महाराजा 'ग' उठा, 'मैंने एक बार कुछ महिनाओं को यह फिल्म दिखाई।'

अशोक चित्लाया, महिनाओं को ?'

हा, हा। बड़े मजे लेकर देखा उन्होंने।'

.. 'मतल।'

महाराजा 'ग' ने बड़ी गम्भीरता से कहा, 'सच कहना है। एक बार देश पर दुसरे बार फिर देना। सीमासी, चित्तवासी और जैसती रही।

अशोक ने अपने मिन को भङ्गावना दिया, 'हृद ही गई है। मैं तो समझता था वे नेहोम हो गई होगी।'

'भरी भी बड़ी गवाय था, लेकिन उर्रोंने गूच आनन्द दिया।'

अशोक ने कहा, क्या सुरोपियन थी ?'

महाराजा 'ग' ने कहा, 'कती भाई, अपने देश ही थी। मुझसे कई बार यह फिल्म और प्रोजेक्टर मांग के ने गई।' मालूम नहीं कितनी सहेलियों को दिया चुनी है।'

'मिने कहा...।' अशोक कुछ कहते-कहते रुक गया।

'क्या ?'

'एक-दो रोज के लिए यह फिल्म दे सकते हो मुझे ?'

'हाँ हाँ ले जाओ।' यह कहकर महाराजा 'ग' ने अशोक की पसलियों में टहोका दिया, 'साले ! किसे दितायिगा ?'

'मित्रों को।'

'दिखा जिसे भी तेरो मर्जी हो।' कहकर महाराजा 'ग' ने प्रोजेक्टर में से फिल्म को एक स्पूल से निकाला और उसे दूसरे स्पूल पर चढ़ा दिया और डिक्वा अशोक के हवाले कर दिया।

'ले पकड़, ऐश कर।'

अशोक ने डिक्वा हाथ में ले लिया तो उसके वदन में भर-भरी-सी दौड़-गई। घोड़ों की टिप लेना भूल गया और कुछ मिनट इधर-उधर की वार्ते करने के बाद चला गया।

घर से प्रोजेक्टर ले जाकर उसने कई दोस्तों की यह फिल्म दिखाई। लगभग सभी के लिए मानव जाति की यह नग्नता एकदम नई वस्तु थी। अशोक ने प्रत्येक की प्रतिक्रिया नोट की। कुछ ने मामूली-सी घबराहट प्रकट की और फिल्म का एक-एक इंच गौर से देखा; कुछ ने थोड़ा-सा देखकर

झालें बन्द करलीं । कुछ घातों खुली रखने के आवजूद पूरी फिल्म को न देख सके । एक बर्दाश्त न कर सका और उठकर चला गया ।

शौन-चार दिन के बाद प्रसोक को फिल्म वापस करने का मयाल आया तो उसने सोचा क्यों न अपनी बीबी को दिखाऊँ ? भयः वह प्रोजेक्टर अपने घर ले गया । रात हुई तो उसने अपनी पत्नी को बुलाया, दरवाजे बन्द किये, प्रोजेक्टर का बनेबानन यगैरा ठीक किया, फिल्म निकाली, उसे फिट किया, कर्मरे की बत्ती बुझाई और फिल्म चला दी ।

पट्टे पर कुछ छद्म तक सफेद रोमनी चरपरवाई । फिर तगवीरें शुरू हुईं । प्रसोक की बाँवी जोर से खींची, तटगी, उछनी और उसके मुँह से विचित्र आवाजें निकली । प्रसोक ने उसे पकड़कर बिठाना चाहा तो उसने झालों पर हाथ रख लिया और चीखना शुरू कर दिया, 'बन्द करो ! बन्द करो !!'

प्रसोक ने हँसकर कहा 'अरे भई देख लो, दरमाती क्यों हो ?'

'नहीं, नहीं !' यह कहकर उसने हाथ छुड़ाकर भागना चाहा ।

प्रसोक ने उसे जोर से पकड़ लिया । वह हाथ जो उसकी झालों पर था, एक ओर खँचा । इस खँचा-नानी में सहसा प्रसोक की पत्नी ने रोना आरम्भ कर दिया । प्रसोक के जैसे ब्रेक-सा लग गया । उसने तो मात्र मनोरंजन के उद्देश्य से अपनी पत्नी को फिल्म दिखाई थी ।

रोती और बड़बडाली उमकी पत्नी दरवाजा खोल कर बाहर निकल गई । प्रसोक कुछ क्षण सर्वथा सजागैत बँठा नग्न चित्र देखता रहा, जो अमानुषिक कृत्यों में ध्वस्त थे । फिर यकायक उसने मामले की गम्भीरता का अनुभव किया और इस अनुभव ने उसे लज्जा के समुद्र में गर्के कर दिया । उसने सोचा मुझसे अत्यन्त असोभनीय कृत्य हो गया है और आश्चर्य है कि मुझे इसका भान तक न हुआ । दोस्तों को दिखाई थी, ठीक थी । मगर मैं और किसी को नहीं अपनी पत्नी को... उसके माथे पर पसीना आ गया ।

फिल्म चल रही थी । निपट नभ्यता विभिन्न आसन धारण करती दौट रही थी । प्रसोक ने उठकर स्विच ऑफ कर दिया । पट्टे हर सब कुछ मुक्त

गया। किन्तु उसने अपनी दृष्टि दूसरी ओर फेर ली। उसका हृदय तथा मस्तिष्क लज्जा में डूबा हुआ था। वह अनुभव उसे चुभ रहा था कि उससे एक अत्यन्त अशोभनीय, बहुत ही मूर्खतापूर्ण कृत्य हुआ है। उसने यहाँ तक सोचा कि वह कभी अपनी पत्नी से श्राप भिन्ना मरेगा।

कमरे में घुब घंघेरा था। एक सिगरेट मुचगाकर उसने इस लज्जा के अनुभव को विविध विचारों द्वारा दूर करने की चेष्टा की; किन्तु सफल न हुआ। थोड़ी देर विमान में इयर-डायर हान मारता रहा। जब चागों और से धिक्कार ही मिला तो वह उठता गया और एक विविध इच्छा उसके हृदय में उत्पन्न हुई कि जिस प्रकार कमरे में घंघेरा है उसी प्रकार उसके मस्तिष्क पर श्रंशकार छा जाये।

बार-बार उसे यह बात सता रही थी, 'ऐसी मूर्खतापूर्ण तथा अशिष्ट बात और मुझे ध्यान तक न आया।' फिर वह सोचता : 'बात यदि सास तक पहुँच गई सानियों को पता चल गया तो वे मेरे बारे में क्या राय कायम करेंगी, यही न कि मैं कितने गिरे हुए आचरण का व्यक्ति हूँ। ऐसी नीच प्रवृत्ति कि अपनी पत्नी को....।'

तंग आकर अशोक ने सिगरेट मुलगाया। वे नगे चित्र जो वह कई बार देख चुका था, उसकी आँखों के सामने नाचने लगे। उनके पीछे उसे अपनी पत्नी का चेहरा नजर आता। वह नितांत चकित तथा घबराया हुआ था। उसने जीवन में पहली बार दुर्गन्ध का इतना बड़ा ढेर देखा था। सिर झटक कर अशोक उठा और कमरे में टहलने लगा। किन्तु उसने भी उसकी व्याकुलता दूर न हुई।

थोड़ी देर बाद वह दवे पाँव कमरे से बाहर निकला। पास के कमरे में झाँककर देखा: उसकी पत्नी मुँह और सिर लपेट कर लेटी हुई थी। काफी देर खड़ा सोचता रहा कि अन्दर जाकर समुचित शब्दों में उससे क्षमा मि। लेकिन खुद इतना साहस पैदा न कर सका। दवे पाँव लौटा और यारे कमरे में सोफे पर लेट गया। देर तक जागता रहा, अन्त में सो गया।

‘ सुबह सवेरे उठा, रात की घटना उसके मस्तिष्क में पुनर्जीवित हो गई । अशोक ने पत्नी मिलना उचित नहीं समझा और नास्ता किये बिना ही चल दिया ।

आफिस में उसने दिल लगाकर कोई काम न किया । यह अनुभव उसके दिल व दिमाग के साथ चिपट कर रह गया था, ‘ऐसी निरर्थक बात और मुझे ध्यान तक न आया ।’

कई बार उसने घर बीबी को टेलिफोन करने का इरादा किया; लेकिन हर बार डायल के आधे मिनट घुमाकर रिमीवर रख दिया । दोपहर को घर से जब उसका खाना आया तो उसने नौकर से पूछा, ‘मेम साहब ने खाना खा लिया ?’

नौकर ने उत्तर दिया, ‘जी नहीं वह कहीं बाहर गये हैं ।’

कहाँ ?’

‘मालूम नहीं साहब ।’

‘कब गये थे ?’

‘ग्यारह बजे ।’

अशोक का दिल धड़कने लगा; भूख गायब हो गई । दो-चार घास खाये और हाथ उठा लिया । उसके दिमाग में हलचल मच गई थी । तरह-तरह के विचार उत्पन्न हो रहे थे—ग्यारह बजे.. अभी तक नहीं सौटीं.....गई कहाँ है...माँ के पास ? क्या वह उसे सब कुछ बता देगी ?.....जल्द बतायेगी । ..माँ से बेटी सब कुछ कह सकती है ।...ही सकता है बहनों के पास गई हो ।...मुँगेगी तो क्या कहेंगी ?...दोनों मेरी कितनी इज्जत करती थी । जाने बात कहाँ से कहाँ पहुँचेगी । ऐसी मूर्खता और मुझे खयाल भी न आया ।’

अशोक दफ्तर से बाहर निकल गया । मोटर सी और इधर उधर आबारा चक्कर लगाता रहा । जब कुछ समझ में न आया तो उसने मोटर का रस घर की तरफ फेर दिया : ‘देखा जायगा जो कुछ होगा ।’

घर के पास पहुँचा तो उसका दिल चिपटकने लगा । जब निपट एक

पत्रके के माथ ऊपर उठी तो उसके दिग्न उभरकर उसके मुँह में आ गया।

विपट तीमरी नजिल पर लगी। कुछ देर सोचकर उसने दरवाजा खोला। अपने फ्लैट के पास पहुँचा तो उसके कदम रुक गये। उसने सोचा कि मोट जाये। मगर फ्लैट का दरवाजा गुना खोर उभरना नोकर बीड़ी पीने के लिए बाहर निकला। अशोक देगकर टसने बीड़ी हाथ में छिपा ली और मराम किया। अशोक ने पत्र पर उससे पूछा, 'मेम साहब कहाँ हैं?'

नोकर ने जवाब दिया, 'अन्दर कमरे में हैं।'

'घोर गोन है?'

'उसकी बच्चे साहब। कौनसे बच्चे साहब की मेम साहब और दो पारसी बालियाँ।'

यह सुनकर अशोक बड़े कमरे की ओर बड़ा दरवाजा बन्द था उसने धक्का दिया। अन्दर से अशोक की पत्नी की पतली किन्तु तेज आवाज आई, 'कौन है?'

नोकर बोला, 'साहब।'

अन्दर कमरे में एक दम गड़बड़ी शुरू हो गई; चीखें आईं, दरवाजे की चटकनियाँ गुलने की आवाजें आईं; रटपट, फट-फट हुईं। अशोक कारीडोर में होता निश्चये दरवाजे से कमरे में प्रविष्ट हुआ तो उसने देखा कि प्रोजेक्टर चल रहा है और पर्दे पर दिन के प्रकाश में धुँधली-धुँधली इन्तानी तानें एक घुल्लात्तादक ढंग से अमानुषिक कृत्यों में लीन हैं।

अशोक ठाका मारकर हँसने लगा।

अत्ला दिता

दो भाई थे—अत्ला रखा और अत्ला दिता । दोनों रियासत पटियाला के निवासी थे । उनके पूर्वज तो लाहौर में ग्रामे थे किन्तु जब इन दो भाइयों का दादा नौकरी की तलाश में पटियाला आया तो वहाँ का हो रहा ।

अत्ला रखा और अत्ला दिता दोनों सरकारी कर्मचारी थे । एक चीफ़ सेक्रेटरी साहब बहादुर का अदली था, दूसरा कंट्रोलर प्राफ़ स्टोर्स के दफ्तर का चपरासी ।

दोनों भाई एक साथ रहते थे ताकि खर्च कम हो । वहाँ अच्छी गुजर हो रही थी । एक सिके अत्लारखा को जो बड़ा था अपने छोटे भाई के चाल-चलन के बारे में शिकायत थी । वह शराब पीता था, रिस्वत लेता था और दुर्गा-कभी किसी गरीब और निधन स्त्री को फ़ारम भी लिया करता था । किन्तु अत्ला रखा ने हमेशा उसे जान-बूझकर अनदेखा किया ताकि घर की शान्ति तथा व्यवस्था बंग न हो ।

दोनों विवाहित थे । अत्ला रखा की दो लड़कियाँ थीं । एक ब्याही जा चुकी थी और अपने घर में मुश थी । दूसरी ब्रिगवा नाम मुगरा था, तेरा वर्ष की थी और प्राइमरी स्कूल में पढ़ती थी ।

अत्ला दिता की एक लड़की थी— जैतव । उसकी शादी हो चुकी थी; किन्तु अपने घर में कोई इतनी मुश नहीं थी, इसलिए कि उसका पति अविवाही था फिर भी वह ज्योन्वो निभाये जा रही थी ।

जैतव अपने भाई तुफ़ैर में तीन वर्ष बड़ी थी । इस हिमाय में तुफ़ैर का धायु बटारह-उत्तम वर्ष की होती थी । वह मोह के एक छोटे में बाल्याने में

काम सीमा तक था। लड़का बुद्धिमान था फल: काम सीमाने के दौरान में पंद्रह वर्षे मासिक उसे भिन्न प्राप्ति थे। दोनों भाइयों को पत्नियां बड़ी आज्ञाकारिणी, परिश्रमी तथा ईश्वर-भक्त थी। उन्होंने अपने पत्नियों को कभी मिलायत का मोता नहीं दिया था।

श्रीमान लड़ा मकान तथा सुन्दर अर्वांग हो रहा था कि सहसा हिन्दू-मुस्लिम दंगे शुरू हो गये। दोनों भाइयों ने कभी कल्पना भी न की थी कि उनके प्राण, संवधि तथा प्रतिष्ठा पर आक्रमण होगा और उन्हें आपाधापी और दरिद्रता की दशा में रियासत पटियाला छोड़नी पड़ेगी—किन्तु ऐसा हुआ।

दोनों भाइयों को विल्कुल पता न था कि इस सूनी तुफान में कौन सा बंध गिरा, कौन से पेड़ को कौनसी शाखा टूटी। जब हीरा-हवास कुछ ठोक हुये तो कुछ वास्तुविनताएँ नामने आई और वे काँप उठे।

अल्ला रखा की लड़की का पति शहीद कर दिया गया था और उसकी पत्नी की बलवाइयों ने बड़ी बेदर्दी से हत्या कर दी थी।

अल्ला दिता की बीवी को भी सिकरों ने कृपाणों से काट डाला था। उसकी लड़की जैन्य का दुराचारी पति भी मौत के घाट उतार दिया गया था।

रीना-धोना बेकार था। सब संतोष करके बैठ रहे। पहले तो कम्पों में गलते-सड़ते रहे, फिर गली-कूचों में भीख मांगा किये। आखिर खुदा ने सुनी। अल्ला दिता को गुजरानवाला में एक छोटा-सा टूटा-फूटा मकान सिर छिपाने को मिल गया। तुर्फन ने दौड़-धूप की तो उसे काम मिल गया।

अल्ला रखा लाहौर ही में देर तक दर-बदर फिरता रहा। जवान लड़की साथ थी मानो एक पहाड़-का-पहाड़ उसके सिर पर खड़ा था। यह अल्लाह ही बेहतर जानता है कि उस बेचारे ने किस प्रकार डेढ़ वर्षे बिताया। बीवी और बड़ी लड़की का शोक वह विल्कुल भूल चुका था। संभव था कि वह कोई सतरनाक कदम उठाये कि उसे रियासत पटियाला के एक बड़े अफसर मिल गये जो उसके बड़े मेहरवान थे। उसने उन्हें अपनी कथा अ से ह तक कह

सुनाई । आदमी दयावान था । उसे बड़ी कठिनाइयों के बाद लाहौर के एक अत्यायी कार्यालय में अच्छी नौकरी मिल गई थी । अतः उसने दूसरे दिन ही उसे बालीम रुपये मासिक पर नौकर रख लिया और एक छोटा सा क्वार्टर भी रहने के लिए दिलवा दिया ।

अस्ता रत्ना ने खुदा का शुक्र धदा किया जिसने उसकी मुश्किलें दूर की अब वह आराम से साँस ले सकती था । सुगरा बड़ी व्यवस्थाप्रिय तथा सुगठ मडकी थी । सारा दिन घर के काम-काज में व्यस्त रहती । इधर-उधर से लकड़ियाँ चुनकर लाती, चूल्हा भुजगाती और मिट्टी की हॉटिया में हर रोज इतनी तरकारी पकाती जो दो बक्त के लिए पूरी हो जाय । आटा शूँघली, पाम ही तन्दूर या वहाँ जाकर रोटियाँ लगवा लेती ।

एकान्त में मनुष्य क्या कुछ नहीं सोचता ? तरह-तरह के विचार आते हैं । सुगरा आम तौर पर दिन में अकेली होती थी और अपनी बहन तथा मा की याद करके धाँसू बहाती रहती थी । पर जब बाप आता तो वह अपनी धाँसो में सारे धाँसू खुदरू कर लेती थी ताकि उसके घाव न हरे न हों । लेकिन वह इतना जानती थी कि उसका बाप अन्दर ही अन्दर घुला जा रहा है । उसका दिल हर वक्त रोना रहता है लेकिन वह किसी से कुछ कहता नहीं । सुगरा से भी उसने कभी उसकी माँ और बहन का जिक्र नहीं किया था ।

जिन्दगी गिरते-पड़ते गुजर रही थी । उधर गुजरानवाला में अस्ता रत्ना अपने भाई की प्रेरणा कुछ हद तक सुगहान था क्योंकि उसे भी नौकरो मिल गई थी और जैनब भी थोड़ा-बहुत सिलाई का काम कर लेती थी । मिल-मलाकर कोई सौ रुपये माहवार हो जाते थे जो तीनों के लिए बहुत काफी थे ।

मकान छोटा था लेकिन ठीक था । ऊपर की मंजिल में तुर्कन रहना था, निचली मंजिल में जैनब और उसका बाप । दोनों एक-दूसरे का बहुत खयाल रखते थे । अस्ता रत्ना उसे अधिक काम नहीं करने देता था । अतः मुँह-अधरे उठकर वह धाँपन में झट्टू देकर चूल्हा भुजगा देना था कि जैनब का

गुप्त काम तबका ही जाये। यक्त निपटता तो यह दो-तीन चक्के भरकर घड़ों की पर राग देना था।

जैसा वे अपने महोदय पति को मभी याद नहीं दिया था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे यह हमारे जीवन में कभी था ही नहीं। यह गुप्त थी। अपने चाप के साथ यह गुप्त थी। कभी-कभी यह हमसे निपट जाती थी, तुफल के सामने भी। और हमें गुप्त बूमती थी।

गुमरा अपने पिता से ऐसे घबरा नहीं पकती थी। यदि संभव होता तो वह हमसे परी करती-इमलिए नहीं कि यह कोई घनजाना था, नहीं बल्कि केवल घाटन के लिए। हमारे दिन में कई बार यह दुषा उठती थी, 'या पर-परदिवार, मेरा बच मेरा जनाना उठ ये !'

कभी-कभी कई दुषायें उल्टी न पति होती हैं। जो गुप्त को मंजूर या वाली होना था। बेचारी गुमरा के मिन पर जोक व संताप का एक पहाड़ टूटना था।

जून के नहींने दोपहर की दपहर के किसी काम पर जाते हुए तपती सड़क पर अल्ला रखा को ऐसी नू लगी कि बेहोश होकर गिर पड़ा। लोगों ने उठाया अस्पताल पहुँचाया। किन्तु दादा दादा ने कोई काम नहीं किया।

गुमरा चाप की मोत के सदमे से घाघी पागल हो गई। उसने करीब-करीब अपने आधे गाल नांच डाले। पड़ोसियों ने बहुत दम-दिलाना दिया मगर वह फारगर कैसे होता-वह तो ऐसी नौका के समान थी जिसका न कोई वादवान ही और न कोई पतवार, जो बीच डेकवार में आ फँसी हो।

पटियाले के यह अफसर जिन्होंने अल्ला रखा को नौकरी दिलवाई थी दया के देवता सिद्ध हुए। उन्हें जब सूचना मिली तब दीड़े आये। सबसे पहले उन्होंने यह काम किया कि गुमरा को मोटर में बिठाकर घर छोड़ आये और अपनी पत्नी से कहा कि वह उसका खयाल रखे। फिर अस्पताल जाकर उन्होंने अल्ला रखा के स्नानादि का वहीं प्रबंध किया और दपतर वालों से कहा कि वे उसे दफन आये।

अल्ला रखा को अपने भाई के देहान्त की सूचना बड़ी देर के बाद मिली।

बहरहाल वह साहोर आया और पूछता-पूछता यहाँ पहुँच गया जहाँ सुग्रा थी।
उगने अपनी भतीजी को बहुत दम-दिनामा दिया, बहलाया, सोने से लगाया,
प्यार किया, मसाले की नदररता का जिक्र किया, बहादुर बनने को कहा।
बिन्दु सुग्रा के फटे हुए दिल पर मन तमाम बातों का क्या प्रभाव पड़ता।
बेचारी चुपचाप अपने प्रांगु कुण्डों में सुग्राती रही।

अन्ना दिता ने अफसर साहब से अन्न में कहा, मैं आराम बहुत आभारी
हूँ। मेरी गर्दन सदैव आपके उपकारों तले दबी रहेगी। भाई की अन्वेषण का
आपने प्रयत्न किया, फिर यह बच्ची जो बिन्दु न निराश्रय रह गई थी, उसे
आपने अपने घर में जगन दी। मुझ आरामको इतना बदला दे। अब मैं इसे
अपने माय से जाना हूँ। मेरे भाई की बड़ी कौमती निशानी हूँ।

अफसर साहब ने कहा, 'ठीक है, लेकिन तुम अभी इसे कुछ देर और यहाँ
रहने दो। तांबयल रॉनल जाय तो ले जाना।'

अन्ना दिता न कहा, 'हजूर, मैंने निश्चय किया है कि मैंने इसकी शादी
अपने लड़के से करूँगा और बहुत जल्दी।'

अफसर साहब बहुत गुन हुए, 'बड़ा नेक इरादा है, लेकिन इस स्थिति में
जबकि तुम इसका विवाह अपने लड़के से करने वाले हो इसका उक्त घर में
रहना ठीक नहीं। तुम शादी का प्रबंध करो मुझे तारीख की सूचना द देना।
मुझ के करम से सब ठीक हो जायगा।'

बाल ठीक थी। अन्ना दिता आपस गुजरानवाला चला गया। जँव
उसकी अनुपस्थिति में बड़ी उदास हो गई थी। जब वह घर में प्रविष्ट हुआ
तो उसने लिफट गई और कहने लगी कि उसने इतनी देर क्यों लगाई।

अन्ना दिता ने प्यार से उसे एक ओर हटाया, 'अरे बाबा, आना जाना
तो क्या है, बत्र पर फातेहा पड़नी थी। सुग्रा से मिलना था, उसे क्या
लाना था।'

जँव न जाने क्या सोचने लगी, 'सुग्रा को यहाँ लाना था?' एकदम
चौककर, हाँ, सुग्रा को यहाँ लाना था। पर वह कहाँ है?'

'वहीं है। पटियाले के एक बड़े नेकदिल अफसर है, उनके पास है।

उन्होंने कहा, 'जब तुम इसकी शादी का बन्दोबस्त कर लोगे तो ले जाना।' यह कहते हुए उसने बीड़ी गुलगाई।

जैनव ने बड़ी दिनचरणी नेने हुए पूछा, 'इसकी शादी का बन्दोबस्त कर रहे हो ? कोई नष्टक है तुम्हारी नजर में ?'

श्रल्ला दिता ने जोर का कज लिया, 'अरे भाई अपना तुफैल है न। मेरे बड़े भाई कि सिर्फ एक ही निशानी तो है। मैं उम्र गया दूसरों के हवाले कर दूंगा ?'

जैनव ने ठपड़ी नांस भरी, 'तो मुगरा की शादी तुम तुफैल से करोगे ?'

श्रल्ला दिता ने उत्तर दिया, 'हां ! क्या तुम्हें कोई पेंतराज है ?'

जैनव ने बड़े नयल स्वर में कहा, 'हां, और तुम जागते हो क्यों है। वह शादी हरगिज नहीं होगी।'

श्रल्ला दिता मुस्काराया। जैनव की ठोड़ी पकड़कर उसने उसका मुँह चूमा, पगली हर बात पर गफ करती है। और बातों को छोड़, आखिर में मुम्हारा वाप हूँ।'

जैनव ने बड़े जोर से 'हुंह, की, 'वाप !' और अन्दर कमरे में जाकर रोने लगी।

श्रल्ला दिता उसके पीछे गया और उसे पुचकारने लगा।

दिन गुजरते गये। तुफैल आशाकारी बेठा था। जब उसके वाप ने सुगरा की बात की तो वह फौरन मान गया। आखिर तीन-चार महीने के बाद तारीख निश्चित हो गई। अफसर साहब ने सुगरा के लिए फौरन एक बहुत अच्छा जोड़ा सिलवाया जो उसे शादी के दिन पहनना था। एक अंगूठी भी ले दी। फिर उसने मुहल्ले वालों से अपील की कि वे एक अनाथ लड़की के व्याह के लिए जो नितान्त निराश्रय है यथाशक्ति कुछ दें।

मुगरा को लगभग सभी आनते थे और उसकी स्थिति से अभिन्न थे। अतएव उन्होंने मिल-मिलाकर उसके लिए बड़ा अच्छा दहेज तैयार कर दिया।

मुगरा दुल्हन बनी तो उसे ऐसा अनुभव हुआ कि सारे दुःख एकत्र हो गये हैं और उसे पीस रहे हैं। वहरहाल वह अपनी समुराल पहुंची जहाँ उसका

स्वागत जैनव ने किया—कुछ इस तरह कि मुग़रा को उसी समय मालूम हो गया कि वह उनके साथ बहनों का सा व्यवहार कभी नहीं करेगी वल्कि सान की तरह पेश आयेगी ।

मुग़रा का सदेह सही था । उसके हाथों की मेहदी अभी अच्छी तरह उतरने भी नहीं पाई थी कि जैनव ने उससे नौकरो के काम लेने शुरू कर दिये; भाड़ू वह देती, बर्तन माजती, चूल्हा वह भोजती, पानी वह भरती । यह सब वह बड़ी फुर्ती और बड़ी सुघडता से करती, लेकिन फिर भी जैनव खुश न होती बात-बात पर उसे डाँटती, डपटती और झिड़कती रहती ।

मुग़रा ने दिल में निश्चय कर लिया था कि वह मध कुछ बर्दास्त करेगी और कभी जवान से कोई शिकायत न करेगी । क्योंकि यदि उसे यहाँ से धक्का मिल गया तो उसके लिए और कोई ठिकाना नहीं था ।

अल्ला दिता का व्यवहार उससे बुरा नहीं था । जैनव की नजर बचाकर कभी-कभी वह उसे प्यार कर लेता था और रहता था कि वह कुछ चिन्ता न करे । सब ठीक हो जायगा ।

मुग़रा को इससे बहुत ड़ाड़स होता । जैनव जब कभी अपनी किसी सहेली के मही जाती और अल्ला दिता सयोगवश घर पर होता तो वह उससे दिन खोलकर प्यार करता । उससे बड़ी मीठी-मीठी बातें फरना, काम में उसका हाथ बटाना, उसके लिए जो वस्तुएं छिपाकर रखी होती थीं देता और उन्हें सीने से लगाकर उससे कहता, 'मुग़रा, तुम बड़ी प्यारी हो ।'

मुग़रा भँप जाती । असल में वह इतने उल्माहपूर्ण प्रेम की आशं नहीं थी । उसका मरहूम बाप अगर उसे कभी प्यार करना चाहता था तो गिरफ़्त उसके मिर पर हाथ फेर दिया करता था या उसके कपे पर हाथ रगड़कर यह दुष्प्रा दिया करता था, 'मुग़रा मेरी बेटी के नमीव धरुं करे ।'

मुग़रा तुर्फ़ल से बहृत मुश थी । वह धरुंछा पति था । जो बरमाना था उसके हवान कर देता था किन्तु मुग़रा जैनव को दे देती थी इसलिए कि वह उसके प्रबोध से डरती थी ।

तुर्फ़ल से मुग़रा ने जैनव के दुर्घणवहार और उनके सान अंसे बर्तन का

कभी निकल न दिया था। मगर यद्युक्त: शान्तिप्रिय थी। वह नहीं चाहती थी कि उसके कमरे पर में किसी प्रकार का झगडा पैदा हो। और भी कई बातें थीं जो वह मुकून में कहना चाहती तो कह देती किन्तु उसे डर था कि मुफान उठ गया होगा। और जो बचकर निराल जायेंगे लेकिन वह श्रवणी उसमें फंम जायेगी और उसे मरन न भर सकेगी।

ये काम बानें उसे कुछ रोत्र हुये मालूम हुई थी और वह कांप-कांप गई थी। अब अन्तर् दिना उसे प्यार करना चाहना तो वह अलग हट जाती या दोफार ऊपर नवी जाती जहाँ वह और मुकून रहते थे।

मुफान को मुकयार की सुट्टी होती थी अल्ला दिता को इतवार की। यदि जैनव घर पर होता तो वह जल्दी जल्दी कम-नाज खत्म करके ऊपर चली जाती। मगर सयोगवश इतवार को जैनव वही बाहर गई होती तो मुगरा की जान पर चली रहती। टर के मारे उससे काम न होना। लेकिन जैनव का मयान आता ही उसे मजबूरन कांपते हाथों और घडकते दिल से इच्छा या अनिच्छा से सभी कुद्ध करना पड़ता। यदि वह जाना ठीक समय पर न पकाये तो उसका पति भूया रहे क्योंकि वह ठीक बारह बजे अपना शिष्य रोटी के लिए भेज देता था।

एक दिन इतवार को जब कि जैनव घर पर नहीं थी तो वह अगटा सूंध रही थी। अल्ला दिता पीछे से दवे पांव घाया और आकर उसकी आँखों पर हाथ रख दिये। वह गड़प कर उठी किन्तु अल्ला दिता ने उसे अपनी मजबूत गिरफा में ले लिया।

मुगरा ने चीखना शुरू कर दिया, मगर वहाँ सुनने वाला कौन था। अल्ला दिता ने कहा, 'शोर मत मचाओ। यह सब वेफायदा है, चलो आओ।

वह चाहता था कि मुगरा को उठाकर अन्दर ले जाय। कमजोर थी लेकिन खुश जाने उसमें कहाँ से इतनी शक्ति आगई कि अल्ला दिता की गिरफ्त से निकल गई और हाँसी-काँपती ऊपर पहुँच गई। कमरे में प्रविष्ट होकर उसने अन्दर से कुण्डी चढ़ा दी।

थोड़ी देर के बाद जैनव आ गई। अल्ला दिता की तबियत खराब हो

गई थी। घन्दर कमरे में लेट कर उसने जैनब को पुकारा। वह भाई तो उसने कहा, 'इधर भागो मेरी टांगें दबाओ।' जैनब उचक कर पलंग पर बैठ गई और अपने बाप की टांगें दवाने लगी। थोड़ी देर के बाद दोनों के सिस तेज-तेज चलने लगे।

जैनब ने भल्ला दिता से पूछा, 'क्या बात है आज तुम अपने भापे में नहीं हो ?'

भल्ला दिता ने सोचा कि जैनब से छिपाना बिल्कुल बेकार है अतः उसने सारी घटना सुना दी। जैनब भाग-बदूला हो गई, 'क्या एक काफी नहीं थी तुम्हें ? पहले धर्म नहीं आई, पर अब तो धानी चाहिए थी। मुझे मासूम था कि ऐसा होगा। इसीलिए मैं शादी के खिलाफ थी। अब सुनलो कि सुगुरा इस घर में नहीं रहेगी।

भल्ला दिता ने बड़े भोलेपन से पूछा, 'क्यों?'

जैनब ने खुले तौर पर कहा, 'मैं इस घर में अपनी सीत नहीं देखना चाहती।'

भल्ला दिता का कण्ठ सूख गया। उसके मुँह से कोई बात न निकल सकी।

जैनब बाहर निकली तो उसने देखा कि सुगुरा अंगन में झाडू दे रही है; चाहती थी कि उससे कुछ कहे लेकिन चुप रही।

इस घटना को घटे दो मास बीत गये। सुगुरा ने अनुभव किया कि तुर्कल उससे खिचा-झिचा रहता है। जरा-जरा-सी बात पर उसे धक की निगाहों से देखता है। आखिर एक दिन भाया कि उसने तलाकनामा उसके हाथों में दिया और घर से बाहर निकाल दिया।

भूठी कहानी

कुछ समय से अल्पसंख्यक जातियां अपने अधिकारों की रक्षा के लिए जागृत हो रही थीं और उन्हें उस भयानक स्वप्न से जगाने वाली बहुसंख्यक जातियां थीं जो एक मुद्दे से अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए उन पर दबाव डाल रही थीं। इस जागृति की लहर ने कई संगठनों को जन्म दिया था : होटल के बंदों का संगठन, हज्जामों का संगठन, पत्रकारों का संगठन, पत्रकारों का संगठन। हर अल्पसंख्यक जाति या तो अपना संगठन बना चुकी थी या बना रही थी ताकि अपने अधिकारों की रक्षा कर सके।

ऐसे प्रत्येक संगठन की स्थापना पर समाचार पत्रों में मनीषाएं होती थीं। बहुमत के समर्थक उनका विरोध करते थे और अल्पमत के पक्षपाती उनका समर्थन। गरज कुछ भर्तों से एक अच्छा-भासा हंगामा बर्पा था जिन्हें रौनक बनी रहती थी। किन्तु एक दिन जब समाचार पत्रों में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि देश के दस नवतरिखे गुण्डों ने भी अपना संगठन स्थापित कर लिया है तो बहुसंख्यक तथा अल्पसंख्यक दोनों जातियां बड़ी भयभीत हुईं। शुरू-शुरू में तो लोगों ने समझा कि बेपर की उठा दी है किमी ने पर जब उन संगठन ने अपने उद्देश्यादि प्रकाशित किये और एक नियमित विधान बनाया तो पता चला कि यह कोई मजाक नहीं बल्कि गुण्डे व बदमाश बान्धव में मुद्दे की एक संगठन के नीचे संगठित व एरंडूट करने का दृढ़ निश्चय कर चुके हैं।

इन संगठन की दो बैठकें हो चुकी थीं जिन्होंने रिपोर्टें अखबारों में छाप चुकी थीं। लोग पढ़ते और विस्मित हो जाते। कुछ तो कहते प्रत्यय समीप है।

उनके कर्मों तथा उद्देश्यों की सम्यो-नोड़ी सूनी थी जिसमें यह कहा गया था कि मुर्खों और बदमाशों का यह संगठन सबसे पहले तो इस बात पर विशेष प्रकट करेगा कि समाज में उनको पूर्ण तथा हीन दृष्टि से देखा जाता है। ये भी दूसरों की भाँति यद्यपि उनमें अपेक्षा कुछ अधिक शान्तिप्रिय नागरिक हैं। उनके मुँह और बदमाश न कहा जाय, क्योंकि इससे उनका अपमान होना है। वे स्वयं अपने लिए कोई उन्नत काम ढूँढ़ लेते किन्तु इस विचार में कि 'अपने मुँह भियां भिट्टू' कहावत उन पर चरितायं न हो, वे इसका निर्णय जन-साधारण पर छोड़ते हैं। चोरी-नफारी, डकैती और लूट, जेब-तारागी और जालसाजी, पत्तेबाजी और ब्लैक-मार्केटिंग आदि की गणना दुष्टकर्मों की अपेक्षा ललित कलाओं में होनी चाहिए। इन ललित कलाओं के साथ अब तक जो दुर्व्यवहार किया गया है उसका पूरा-पूरा बदला ही इस यूनियन का परम उद्देश्य है।

ऐसे ही कई और उद्देश्य थे जो मुनने और पढ़ने वालों को बड़े विचित्र प्रतीत होते थे। प्रकट में ऐसा था कि चन्द्र बेफिक्रे रसिकों ने लोगों के मनोरंजन के लिए ये सब बातें गढ़ी हैं। यह चुटकला ही तो मालूम होता था कि यूनियन अपने सदस्यों की कानूनी रक्षा का जिम्मा लेगी और उसकी गतिविधियों के लिए अनुकूल तथा सुखद वातावरण उत्पन्न करने के लिए पूरा-पूरा संघर्ष करेगी। वह वर्तमान अधिकारियों पर जोर देगी कि यूनियन के प्रत्येक सदस्य पर उसके स्थान तथा श्रेणी के अनुसार अभियोग चलाया जाय। सरकार लोगों को अपने घरों में चोरों का बिजली का अलार्म न लगाने दे। क्योंकि कभी-कभी यह घातक सिद्ध होता है। जिस प्रकार राजनीतिक वन्दियों को जेल में 'ए' तथा 'बी' क्लास की सुविधाएँ दी जाती हैं उसी प्रकार इस यूनियन के सदस्यों को दी जायें। यूनियन इस बात का भी जिम्मा लेती थी कि वह अपने सदस्यों को बुढ़ापे तथा अप्रगुत्व, या किसी दुर्घटना का शिकार हो जाने की स्थिति में हर मास निर्वाह के लिए एक समुचित रकम देगी। जो सदस्य किसी विषय-विशेष में दक्षता प्राप्त करने के हेतु विदेश जाना चाहेगा उसे छात्रवृत्ति देगी आदि आदि।

जाहिर है कि अखबारों में इस यूनियन की स्थापना पर बहुत सी समीक्षाएँ हुईं। सगभग सभी इनके विरुद्ध थे। कुछ प्रतिक्रियावादी कहते थे कि यह कम्युनिज्म की चरम अवस्था है। और इसके सम्पादकों के टाँडे फेमलिन से मिलाने थे। इसलिए सरकार में बार-बार प्रायोजना की जाती कि यह इस उपद्रव को फौरन कृपण दे; क्योंकि यदि इसे जरा भी पनपने का मौका दिया गया तो समाज में ऐसा जहर फैलेगा कि उसका निदान मिलना मुश्किल हो जाएगा।

लोगों का विचार था कि प्रगतिवादी इस यूनियन का पक्ष पोषण करेंगे क्योंकि इनमें एक नवीनता थी और प्राचीन मूल्यों से हट कर उसने अपने लिए एक नया रास्ता तैयार किया था और फिर यह कि प्रतिक्रियावादी इसे कम्युनिस्टों का आविष्कार समझते थे परन्तु घासचर्य है कि धल्पसंतत्वकों के ये सबने बड़े पक्षपाती पहले तो इस मामले में सामोना रहे और बाद में दूसरों के समर्थक बन गये। और इस यूनियन के निर्मूलत करने पर जोर देने लगे।

अखबारों में हंगामा बर्षा हुआ तो देश के कोने-कोने में इस यूनियन की स्थापना के विरुद्ध समारोह होने लगे। सगभग हर दल के प्रसिद्ध नेता ने मंच पर घाकर अभ्युत्थान व सस्कृति के इस कलंक रूपी संगठन को धिक्कारा। और कहा कि यही समय है जब तमाम लोगों को अपने आपस के भगड़े छोड़कर इस भीमकाय उपद्रव का सामना करने के लिए एकता तथा अटल विश्वास को अपना लक्ष्य बना कर उठ जाना चाहिये।

इस मारे कोलाहल का जवाब यूनियन की ओर से एक पोस्टर द्वारा दिया गया जिसमें संक्षेप में यह कहा गया कि प्रेस बहुमत के हाथ में है, कानून उसका साथ देता है। किन्तु यूनियन का उत्साह तथा उसके निश्चय समाप्त नहीं हुए। यह प्रयत्न कर रही है कि घृत-गी रकम देकर अखबार सारीद ले और उन्हें अपने पक्ष में करे।

यह पोस्टर देश भर की दीवारों पर लगाया गया तो फौरन बाद ही कई पहरो से बड़ी-बड़ी चोरियों और ठकंतियों की सूचनाएं मिली। और उसके कुछ दिन बाद जब एकाएकी दो अखबारों ने दधी जवान में गुण्डों और दध-

दलों की युनियन के उद्देश्यों में सुभाषचन्द्र बोस कुम्हिला हुए किया तो लोगों समझ गये कि पदों के पीछे क्या हुआ है ?

उनके मार्क्सवादी परिशिष्टों में बड़े विभिन्न विषयों पर विस्तार प्रकाशित गये थे जिनमें से नाट्य-जीवन की समस्या भी प्रमुख थी।

● भाषित दृष्टि से उनके मार्क्सवाद के मान।

● सामाजिक तथा सामूहिक दृष्टिकोण में वेद-पुस्तकों का महत्त्व।

● भूट की स्वरूप-शक्ति होती है—साधुविक वैज्ञानिक अनुसंधान।

● बच्चों में इला तथा मूट की स्थाभाविक प्रवृत्तियाँ।

● संसार के भयानक आकृ तथा धर्म की पवित्रता।

विज्ञापन की कम विविध नहीं थी। उनमें विज्ञापन का नाम तथा पता नहीं होता था। शीर्षक देकर मतलब की बात संक्षेप में बता दी जाती थी। कुछ शीर्षक देना :

चोरी के जेवरान गरीबों से पहले हमारा निशान जरूर देना लिया करें जो गरीबों का गारण्टी है।

द्वैक मार्केट में केवल उसी फिल्म के निकट बेचे जाते हैं जो मनोरंजन की सर्वश्रेष्ठ सामग्री प्रस्तुत करती है।

दूध में किन तरीकों ने मिलावट की जाती है। 'दूध का दूध और पानी का पानी' नामक पत्रिका अवश्य पढ़िये।

एक अलग कालम में 'द्वैक मार्केट के आज के भाव' के शीर्षक से उन तमाम चीजों की कण्ट्रोल कीमत दर्ज होती थी जो केवल द्वैक मार्केट से प्राप्त होती थीं। लोगों का कहना था कि इन कीमतों में एक पाई की भी कमी-बेशी नहीं होती। जो छिपे-चोरी चोरी का खास निशान लगा हुआ माल खरीदते थे उन्हें सस्ते दामों पर सोलह आने खरा माल मिलता था।

गुण्डों, चोरों और व्यभिचारियों की युनियन जब धीरे-धीरे ब्याति तथा सहानुभूति प्राप्त करने लगी तो शासनाधिकारियों की चिन्ता ओर बढ़ गई। सरकार ने अपनी ओर से गुप्त रूप से बहुत प्रयत्न किया कि उसके अड्डे का पता चलाये लेकिन वह विफल रही। युनियन की सारी गति-

विधियां भूमिगत अर्थात् भ्रष्टर याउष्ट थी । उच्च वर्ग के कुछ लोगों का विचार था कि पुलिस के कुछ भ्रष्टाचारी अफसर इस यूनियन से मिले हुए हैं, बल्कि इसके नियमित रूप से सदस्य हैं । किन्तु यह बात विचारणीय थी कि जनता में जो इस यूनियन की स्थापना में बेचनी फैली थी अब विल्कुल खत्म हो चुकी थी । मध्यम वर्ग उनकी गतिविधियों में बड़ी दिलचस्पी ले रहा था । केवल उच्च वर्ग था जो दिन-ब-दिन भयभीत होता जा रहा था ।

इस यूनियन के विरुद्ध यों तो आये दिन भाषण होते थे और जगह-जगह सभाएँ होती थी, किन्तु अब वह पहला सा उल्साह नहीं था । अतएव उसे पुनर्जीवित करने के लिए टाऊन हाल में एक विराट सभा के आयोजन की घोषणा की गई । नगर के लगभग सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों को प्रतिनिधित्व के लिए निमन्त्रित किया गया था । इस सभा का उद्देश्य यह था; एकमत से गुण्डों और व्यभिचारियों की इस यूनियन के विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव पास किया जाय और जन साधारण को इन भयानक कीटाणुओं से मयासम्भव अवगत कराया जाय जो इसके अस्तित्व के कारण सामाजिक तथा सामूहिक क्षेत्र में फैल चुके हैं और बड़ी तीव्र गति से फैल रहे हैं ।

सभा के आयोजन पर हजारों रुपये खर्च किये गये । कार्यकारिणी तथा स्वागत-समिति ने भुविधा के लिए हर सम्भव यत्न किया । कई अधिवेशन हुए और वे बड़े सफल रहे । उनकी रिपोर्टें यूनियन के अखबारों में शब्दशः प्रकाशित होती रही । निन्दा के जितने प्रस्ताव पास हुए विना टीका-टिप्पणी छपते रहे । दोनों अखबारों में उन्हें विदोय स्थान दिया जाता था ।

अन्तिम अधिवेशन बहुत महत्वपूर्ण था—देश को तमाम सम्मिलित एवं प्रतिष्ठित विमृतिया एकत्रित थी । घनिक तथा मन्त्री आदि मौजूद थे । सरकार के उच्चाधिकारियों को भी निमन्त्रण दिया गया था । धुमाधार भाषण हुए और धार्मिक, सामूहिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, मनोवैज्ञानिक सभेप में हर सम्भव ढंग से गुण्डों और बदमाशों के संगठन के विरुद्ध तर्क प्रस्तुत किये गये और सिद्ध कर दिया गया कि निचले वर्ग का अस्तित्व मानव जीवन के लिये विप के समान है । निन्दा का अन्तिम प्रस्ताव जो बड़े सबल शब्दों में लिखा

मना था, एकमत में गम हो गया तो हान सातियों के शोर से गूँज उठा। जब कुछ शानि हुई तो पिछले बेंचों में एक व्यक्ति गड़ा हुआ। उसने सभापति में सम्बोधन करने का कला—'सभापति महोदय की यदि आज्ञा हो तो मैं कुछ निर्दिष्ट करूँ।'

गर्द हान की निगाहें उस आदर्श पर जम गईं। सभापति ने बड़े रीव से पूछा, 'मैं पूछ सकता हूँ आप कौन हैं?'

उस व्यक्ति ने जो, बड़े साधारण, किन्तु सुन्दर वस्त्र पहने हुए था, आदर के साथ कहा, 'देश तथा जाति का एक निकृष्ट सेवक।' और उसने झुककर प्रणाम किया।

सभापति ने चश्मा लगाकर उसे गौर से देखा और पूछा, 'आप क्या कहना चाहते हैं?'

उस पहिलीनुमा व्यक्ति ने मुस्कराकर कहा, 'हम भी मुँह में जवान रगत हैं।'

इस पर सारे हाल में गुस्सर-पुस्सर होने लगी। विशेष कर मंच पर बैठे मन्त्र-के-सच्य प्रतिष्ठित लोग तथा नेतागण प्रश्नसूचक चिन्ह बनाकर एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

सभापति ने अपने रीव को कुछ और रीवदार बनाते हुए पूछा, 'आप कहना क्या चाहते हैं?'

'मैं अभी अर्ज करता हूँ।' यह कहकर उसने जेब से एक वेदांग रुमाल निकाला, अपना मुँह साफ किया और उसे वापिस जेब में रखकर बड़े पार्लेमेण्टेरियन ढंग से कहने लगा, 'सभापति जी और सम्माननीय सज्जनगण,' डायस के एक ओर देखकर वह रुक गया। 'क्षमा याचना करता हूँ—आदरणीया श्रीमती मर्जवान आज हमेशा के विपरीत पिछले सोफे पर विराजमान हैं। सभापति महोदय, आदरणीया देवी जी तथा सज्जनगण।'

श्रीमती मर्जवान ने बेनिटी वेग में से आईना निकालकर अपना मेकअप देखा और गौर से सुनने लगी। बाकी सब भी ध्यानपूर्वक सुन रहे थे।

सारे हाल में खुसर-पुसर होने लगी। सभापति की नाक के वांसे पर चश्मा फिसल गया, 'आप हैं कौन?'

सिर के एक हत्के से झुकाव के साथ उस व्यक्ति ने उतर दिया, 'देश तथा जाति का एक निरूप्यत सेवक। निचले वर्ग के संगठन का एक सदस्य जिसे उसके प्रतिनिधित्व का गर्व प्राप्त है।'

हास में बिमी ने जोर से, 'बाह' कहा और तासी बजाई। चोरों, उचककों और गुण्डों की यूनिफन के प्रतिनिधि ने सिर को फिर एक हल्का झटका दिया, और कहना शुरू किया, 'बया अर्ज करू, कुछ कहा नहीं जाता :

बाँ गया नी मैं तो उनकी गालियों का क्या जवाब
माद की जितनी दुघाएँ सफे-दरवाँ हो गई

इस घाघिनेशन मे इस मणठन के विरुद्ध जिसका यह सेवक प्रतिनिधि है, इनकी गामियाँ थी गई हैं, उसे इनका घिबकारा गया है कि सिर्फ इनका कहने को ही चाहता है :

सो वो भी कहते हैं कि ये बेनगो-नाम है

'समापति जी, आदरणीय श्रीमती मर्जवान और सज्जनों'

श्रीमती मर्जवान की लिपस्टिक मुस्कराई। बोलने वाले ने भाँसे और गिर झुकाकर प्रणाम किया। 'शुद्ध' श्रीमती मर्जवान और सज्जनों! मैं जानता हूँ कि यहाँ मेरी यूनिफन का कोई हमदर्द मौजूद नहीं। आप में से एक भी ऐसा नहीं जो हमारा पक्ष पोषण करे।

दोस्तगर कोई नहीं है जो करे चारागारी

न सही लेक समन्नाए दवा है तो सही

डायरा पर एक घषकनपोग रईस कल्ले में पान दबाने हुए बोले, 'फिर !'

समापति ने जब उनकी ओर घृणा की दृष्टि से देखा तो वह खामोश हो गये।

चोरों और भ्रष्टाचारियों की यूनिफन के प्रतिनिधि के पतले-पतले होठों पर ध्वेत मुस्कान प्रकट हुई। 'मैं अपने सक्षिप्त भाषण में जो शेर भी पढ़ूँगा, 'गामिब' का हीगा।'

श्रीमती मर्जवान ने बड़े भोलेपन से कहा, 'आप तो बड़े योग्य व्यक्ति मासूम होते हैं।'

योगसे यावे ने झुककर प्रणाम किया और कहा :

योगी हैं मरुतों के निगे हम मुमवित्री
तकरीब कुदर तो यहर-मुलाकत चाहिए

मान हाव कहकरी और तालियों में खूँज उठा । श्रीमती मजंवान ने उदकर सभापति के मान में कुदर कहा, जिसने श्रीवाघों को दांत रहने की याजा थी । दांनि हई तो चोरों और लफंगों की यूनियन के प्रतिनिधि ने फिर बोळना मुम किया :

'मैं पपना मेद प्रकट किये बिना नहीं रह सकता वि उम वगं के साथ गिनका प्रतिनिधित्व मेरी यूनियन करती है, बहुत अग्र्याम हुग्रा है उसे अब तक बिलकुल नमत रग में दिगाया जाता रहा है और यही कोशिश की जाती रही है कि हमे शूफेत तथा भिन्दित ठहराकर समाज से बहिष्कृत कर दिया जाय । मैं उन महानुभावों को गया पहुँ जिन्होंने इस दारीक और सम्मानित वगं पर पदराय करने के निए पत्तर उठाये हैं ?

घातिशकदा है सीना मिरा राजे-निहाँ से
ऐ वाये अगर मारिजे-इजहार में भावे'

सभापति ने एकदम गरजकर कहा, 'सामोश ! वस अब आपको अधिक कुदर कहने की आश नहीं है ।'

वक्ता ने मुस्करा कर कहा, 'हजरते 'ग़ालिब' की इसी गजल का एक शेर है :

दे मुझको शिकायन की इजाजत कि सितमगर
कुदर तुझको मजा भी मिरे आजार में आये'

हान तालियों के शोर से खूँज उठा । सभापति ने अधिवेशन समाप्त करना चाहता लेकिन लोगों ने कहा कि नहीं । चोरों और गुण्डों की यूनियन के प्रतिनिधि का भाषण समप्त हो जाये तो कारंवाई बन्द की जाय । सभापति तथा अधिवेशन के अग्र्य सदस्यों ने पहले स्वोक्ती प्रकट न की, किन्तु बाद में जनमत के सामने उन्हें झुकना पड़ा । वक्ता को बोलने की अनुमति मिल गई ।

उसने सभ्रापित का समुचित शब्दों में आभार प्रकट किया और कहना धारम्भ किया :

'हमारी यूनियन को केवल इसलिए घृणा तथा होन हृष्टि से देखा जाता है कि यह चोरो, उठाईगीरो, लुटेरो और डाकुओ की यूनियन है जो उनके अधिकारों की रक्षा के लिए स्थापित की गई है मैं आप लोगों की भावनाओं में भली प्रकार परिचित हूँ। हमारी स्थापना पर आपकी जो प्रतिक्रिया हुई थी, उसकी भी मैं कल्पना कर सकता हूँ। किन्तु क्या चोरो, डाकुओ और लुटेरों के कोई अधिकार नहीं होते ? या नहीं हो सकते ? मैं समझता हूँ कोई सही दिमाग वाला व्यक्ति ऐसा नहीं सोच सकता। जिस प्रकार आप सबसे पहले इन्सान है और बाद में सेठ माहव है, बड़े धनवान हैं, म्युनिसिपल कमिश्नर है, गृह मंत्री हैं या विदेश मंत्री; इसी प्रकार वह भी सबसे पहले धार ही की तरह इन्सान है। चोर, डाकू उठाईगीरा, जेब कतरा और ब्लैक-मार्केटियर बाद में हैं। जो अधिकार दूसरे इन्सानों को इस सृष्टि में प्राप्त हैं, वे उसे भी प्राप्त हैं और होने चाहिये। जो उनहार दूसरे इन्सानों को मिलते हैं, उसे भी उन्हें प्राप्त करने का अधिकार है। मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि एक चोर या डाकू को क्यों सलित बन्नु से जीवन समझा जाता है। क्यों उसे एक ऐसा व्यक्ति समझा जाता है जिसे साधारण जीवन को व्यतीत करने का अधिकार नहीं। क्षमा कीजिये यह एक अचछा शेर सुनकर उसी तरह फड़क उठता है, जिस तरह कोई दूसरा उसे समझने वाला। 'सुबहे-बनारस' और 'शामे-भवध' से निरफ आप ही आनन्द-लाभ नहीं कर सकते वह भी करता है, सुर-ताल की उसे भी खबर है। वह केवल पुलिस के हाथों ही गिरफ्तार होना नहीं जानता, किसी मुन्दरी के प्रेम-जाल में फँसने का ढंग भी वह जानता है। शादी करता है बच्चे पैदा करता है, उन्हें चोरी से मना करता है, भूठ बोलने से रोकता है। भगवान न करे यदि उनसे से कोई मर जाये तो उसके दिल की सदमा भी पहुँचता है।'

यह कहते हुए उसका गला रुंध गया। लेकिन फौरन ही उसने हल बदला और मुस्कराते हुए कहा, 'हजरते गान्धिव' के इस दोर का जो भ्रम वह ले सकता है, माफ कीजिये धार में से कोई नहीं ले सकता :

न मुठना दिन को वो कय रात को पूं धेगवर सोता
 गता गतका न चोरी का दुआ देता हूं रहजन को
 गग्य हाव हेंने गग्य । श्रीमती मर्जवान भी जो भापगु के अन्तिम
 भाग पर कुछ गिन्न-गी हो गई थी, मुस्कराईं । वक्ता ने उसी प्रकार पतली
 पतली गोक मुस्कराहट के साथ कहना शुरू किया, 'मगर अब ऐसे दुआ देने
 जाने क्यों ?'

श्रीमती मर्जवान ने बड़े भोलेपन से ब्राह्म भरकर कहा, 'श्रीर वे डाकू
 भी क्यों ?'

वक्ता ने स्वीकार किया, 'घ्रापने ठीक फार्माया श्रीमती मर्जवान । हमें इस
 दुन्द तथ्य का पूर्ण अनुभव है । गही कारण है कि हमने मिलकर अपनी
 गूणियन बना डाली है । गग्य परिवर्तन के साथ डाकू, चोर श्रीर जेव कतरे
 लगभग सभी अपनी पुरानी प्रथा तथा प्रतिष्ठा को भूल गये हैं । किन्तु हर्ष
 का स्थान है कि अब बहुत तेजी से अपने असल स्थान को लौट रहे हैं ।
 लेकिन मैं उन महाशयों से जो इन बेचारों की जड़ें तोड़ने में व्यस्त हैं, यह
 धृष्टतापूर्ण प्रश्न पूछना चाहता हूं कि अपने सुधार के लिए अब तक उन्होंने
 क्या किया है ? मुझे कहना तो नहीं चाहिए, लेकिन तुलना के लिए कहना
 पड़ता है कि हमें बहुत हेय चोर श्रीर दुष्ट डाकू कहा जाता है । मगर वे
 लोग क्या हैं ? कुछ इस ऊँचे डायस पर भी बैठे हैं, जो जनता का माल-मत्ता
 दोनों हाथों से लूट रहे हैं !'

हाल में 'शेम ! शेम !' के नारे बुलन्द हुए ।

वक्ता ने कुछ रुककर फिर कहना शुरू किया : 'हम चोरी करते हैं, डाके
 डालते हैं मगर उसे कोई श्रीर नाम नहीं देते । ये सम्मानित लोग निकृष्टतम
 प्रकार के डाके डालते हैं किन्तु यह जायज समझा जाता है । अपनी आँख के इस
 लम्बे-चीड़े श्रीर भारी भरसक फूले को कोई नहीं देखता श्रीर न देखना चाहता
 है, क्यों ? यह बड़ा गुस्ताख सवाल है । मैं इशका जवाब सुनना चाहता हूं,
 चाहे वह इससे भी ज्यादा गुस्ताख हो ।' थोड़ी देर रुककर वह मुस्कराया, 'मंत्री
 गग्य अपने मंत्रालय की मसनद की सान पर उस्तरा तेज करके देश की हर

शेख हुरामत बगने है । यह बोर्ड बदराथ नहीं । लेकिन जिमी कि जेब मे बही मफाई के साथ बटुवा खुगने वाला दखनीय है... दख बो छोड़िये, मुझे उम पर बोर्ड बजागि नहीं । यह आपही दृष्टि मे गर्दन उठा देने योग्य है ।

हाथ पर बटुा मे लोग खेचने मे हो गये । श्रीमति मजबान धून प्रपु-
न्वित थी ।

बगाने में खेतना गला साफ किया, फिर कहना शुरू किया, 'तमाम महकमो मे ऊपर मे लेकर मोखे तक गिरवा का बाजार गमे है, यह किसे मालूम नहीं ? क्या यह भी बोर्ड भेद है जिसके गाने की जरूरत है कि तनपरवरी और परिवार-यागत के कारण सर्वथा असोय, अनिष्ट और भ्रष्टाचारी बड़े-बड़े घोड़े में भांगे खेडे है ? माफ करमाइयगा इधर हमारे बग में ऐसी दु गदाई परिशिष्टागिनी नहीं है । बोर्ड चोर भाने जिमी सम्बन्धी को बही थोरी के लिए बरी खुनेगा ।' हमारे यही भोग इस प्रकार की गिआपनी मे लाभ उठाना चाहें तो नगी उठा नबने । इसलिए कि थोरी करने, जेब काटने या डाका डालने के लिए शिल-लुदे, दशाया तथा योग्यता की आवश्यकता है । यहाँ बोर्ड सिफारिस काम नहीं घाली । हर स्थिति का काम हो स्वय उमसी परीक्षा होती है जो फौरन उगे परिणाम मे अपगत करा देता है ।'

हाथ पर बटुा को भी गामोनी छा गई । बगाने ने अपनी जेब से रुमात निचालकर मुँह साफ किया और उगे हवा मे सहगकर कहा, 'गमापति जी, अद्वेन देवी जी तथा महानमो ! मुझे माफ करमाइए कि मैं जरा भावुकता में यह गया । निवेदन यह है कि जिस तरफ नजर उठाई जाये ईमान-फरोग होगा है या तभीर-फरोग, धन-फरोग होगा है या कोम-फरोग । रामक मे नहीं घाता कि ये भी बोर्ड बेचने की चीजें है ? इमान तो उन्हें बहुत ही कठिन समय मे भी एक क्षण के लिए गिरवी नहीं रग सकता मगर मैं इसानो को बाध कर रहा हूँ । माफ करिये मेरे स्पर में फिर बटुता पैदा हो गई ।

रामिमी गालिब मुझे इस तल्ल भव ई से मुधाफ

आज कुछ दर्द मिरे दिल मे सिवा होता है ।

यह कहता हुआ यह हाथ को तरफ बढ़ा । गमापति महोदय, श्रीमति

मर्जवान तथा महाजनों ! मैं अपनी सुनियन की ओर से आप सबको धन्यवाद देना हूँ कि आपने मुझे बोलने का अवसर दिया ।' टायम के पास पहुँचकर उसने सभापति की ओर हाथ बढ़ाया । मैं अब एक मित्र के रूप में आपसे विदा होना चाहता हूँ ।'

सभापति ने विनम्रतापूर्वक हाथ उठाकर उससे हाथ मिलाया । उसके बाद उसने श्रीमति मर्जवान की ओर हाथ बढ़ाया । 'यदि आपको कोई आपत्ति न हो ।'

श्रीमति मर्जवान ने भोलेपन से अपना हाथ पेश कर दिया । शेष गण्यमान्य व्यक्तियों तथा पत्नियों से हाथ मिलाकर जब वह निवृत्त हुआ तो नमस्कार कहकर चलने लगा । विद्वान् पोरन ही रुक गया । अपनी दोनों जेबों में से उसने बहुत नी पौजे निकालीं और सभापति की मेज़ पर एक-एक करके रख दीं, फिर वह मुस्कुराया, एक असें से जेब तराशी छोड़ चुका हूँ, आजकल सेफ़ तोड़ना मेरा पेशा है । आज सिर्फ़ मनोविनोद के लिए आप लोगों की जेबों पर हाथ गाफ़ कर दिया ।' यह कहकर वह श्रीमति मर्जवान से संबोधित हुआ, 'श्रद्धेय देवीजी ! धमा कीजिये, आपके वेनिटी रिंग में से मैंने एक चीज निकाली थी मगर वह ऐसी है कि सबके सामने आपको वापिस नहीं कर सकता ।'

और वह तेजी के साथ से बाहर निकल गया ।

Handwritten signature

सड़क के किनारे

यही दिन थे; घाबारा उसकी आँखों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि आज है. घुला हुआ, निघरा हुआ। और धूप भी ऐसी ही कुनकुनी थी—मुहाने सपनों की भाँति; मिट्टी की गंध भी ऐसी ही थी जैसी कि इस समय मेरे दिल व शिमाग में रच रही है और मैंने इसी प्रकार लेटे-लेटे अपनी फड़फड़ाती हुई आत्मा उसके हवाले कर दी थी ।

'उसने मुझसे कहा था, तुमने मुझे जो ये क्षण प्रदान किये हैं विश्वास करो मेरा जीवन इनसे वंचित था। जो रिक्त स्थान तुमने आज मेरे जीवन में पूरे किये हैं तुम्हारे आभागी है। तुम मेरी जिन्दगी में न आती तो शायद वह हमेशा धधुरी रहती। . . . मेरी समझ में नहीं आता। मैं तुमसे और क्या कहूँ मेरी पूर्ति हो गई है, ऐसी पूर्णता के साथ कि अनुभव होता है मुझे अब तुम्हारी आवश्यकता नहीं रही . . .' और वह चला गया, हमेशा के लिए चला गया।

'मेरी आँखें रोईं', मेरा दिल रोया मैंने उसकी मिश्रत-समाजत की। उससे सात बार पुश्चा कि मेरी जरूरत अब तुम्हें क्यों न रही . जबकि तुम्हारी जरूरत अपनी पूरी-तीव्रता के साथ अब आरम्भ हुई है। उन क्षणों के पश्चात् जिन्दगी तुम्हारे ही कमानानुसार तुम्हारी हस्तों की खाली जगहें भरी हैं।

'उसने कहा, 'तुम्हारे अस्तित्व के जिस-जिस क्षण की मेरे जीवन की पूर्ति तथा निर्माण की आवश्यकता थी . . ये क्षण पुनः-पुनःकर देते रहे अबकि उसकी पूर्ति हो गई है तुम्हारा और मेरा नाता अपने आप समाप्त हो गया है।'

'उसने मुझे धरती पर पतंगों के समान महल न दिया गया... मैं कील-खोप कर गीरे गयी । परन्तु उस पर कुछ प्रभाव न पड़ा ।... मेरे सुकाने क्या, 'मे' क्या जिससे तुम्हारे अस्तित्व की पूर्ति हुई है मेरे अस्तित्व के अन्त में । क्या उसका मुझे कोई सम्बन्ध नहीं ?..... क्या मेरे अस्तित्व का शेष भाग उससे अपना माना मोड़ मचना है ?..... तुम पूर्ण हो हो..... लेकिन मुझे अपनी कल्पना..... क्या मैंने तुम्हें इतना लिए अप भयानक बनाया था ?'

'उसने कहा, 'भोरे कलियों और फूलों का रस चुन-चूम कर गहद सींचे है, किन्तु वे उसकी गलछट तक भी उन फूलों और कलियों के होंठों तक न जाते । ' भगवान् अपनी पूजा कराना है पर स्वयं आराधना नहीं करता परन्तु उसके गाय मंत्रान्त में कुछ क्षण व्यतीत करके उसने अस्तित्व की पूर्ति... किन्तु अब कहाँ है ?... उसकी अब अस्तित्व को क्या आवश्यकता है ? वह एक मिमी मां थी जो अस्तित्व को जन्म देते ही प्रसूतिगृह में ही समाप्त हो गई थी ।

'नहीं रो सकती है... तक नहीं कर सकती । इसकी सबसे बड़ी दलील उसकी आँग से टलका हुआ आँसू है..... मैंने उससे कहा, 'देखो... मैं रो रही हूँ... मेरी आँगें आँसू बरसा रही हैं । तुम जा रहे हो तो जाओ, परन्तु इनमें से कुछ आँसुओं को तो अपने रुमाल के कफन में लपेट कर साथ लेते जाओ !... मैं तो सारी उम्र रोती रहूँगी..... मुझे इतना तो याद रहेगा कि कुछ आँसुओं के कफन-दफन का सामान तुमने भी किया था... मुझे चुन करने के लिए !

'उसने कहा, मैं तुम्हें खुश कर चुका हूँ..... तुम्हें उस ठोस उल्लास से मिला चुका हूँ जिसको तुम केवल मरीचिका ही देखा करती थी, क्या उसका हर्ष, उसका आनन्द तुम्हारे जीवन के शेष क्षणों का सहारा नहीं बन सकता ? तुम कहती हो कि मेरी पूर्ति ने तुम्हें अपूर्ण कर दिया है, लेकिन क्या यह अपूर्ति ही तुम्हारे जीवन को सक्रिय रखने के लिए काफी नहीं... मैं मदं हूँ आज तुमने मेरी पूर्ति की है... कल कोई और करेगा...'

मेरा प्रतिपत्तन हुआ ऐसे पानी तथा मिट्टी से बना है जिसकी जिनगी में
ऐसे कई धारा धारों से जब वह गुरु की चपूरण ममभंगा.....घोर तुम जैसी
कई रिषदा धारों को इन दाणों की उत्पत्त की हुई जानो जगहें भरेंगी ।

‘मैं रोती रही, भुंभनाती रही ।

‘मैंने सोचा कि वे वृत्त दाण जो अभी-अभी मेरी मूर्छी में थे...नहीं...
मैं उन दाणों की मूर्छी में थीं मैंने क्यों गुरु की उनके हवाले कर दिया ?
मैंने क्यों अपनी पट्टकवाती धारमा उनके मुँह गोलों केद में डाल दी ? उनमें
धातुदा या, गुरु मजा या... एक वस्तुनाम या... या, अरुदा या और
यह उनके घोर मेरे टकराव में या लेकिन यह क्या कि यह सावित्र
य गानिम रहा और मुझमें तरेके वरु मये । यह क्या कि यह धव मेरी धाक-
दयवता धनुमय मरुं करता । पर मैं तो और भी सीधता से उगनी धावदयवता
धनुमय जाती हूँ । यह मजबब बन गया है । मैं दुर्वल हो गई हूँ । यह क्या कि
धातुनाम पर दो धातुनाम एध-दुवरे का धानिगन करें—एक रो-रोकर धरगने
मया और दूसरा धिखनी वा कौदा बनकर उग वरुं मे सेवता कुदरुके सगाता
मज्ज जाये ...यह धिगजा कातून है ? धातुनामों का ? धमीनों का या उनके
बनाने धामों का ?

‘मैं सोचती रही और भुंभनाती रही ।

‘वो धातुनामों का गिमटकर एक हो जाना और एक होकर निस्सीम विस्तार
प्रदण कर जाना, क्या यह एक कविता नहीं है ?.....नहीं दो धातुनामों
गिमटकर निदकम ही दग मरुं-ते बिन्दु पर पहुँचती हैं जो फंसकर धारणा
बनना है.....लेकिन इस बह्याण्ड में एक धातुनाम क्यों कभी-कभी धामज
धोड़ हो जाती है क्या इस अपराध पर कि उतने दूसरी धातुनाम को इस
मरुं से बिन्दु पर पहुँचने में मदद थी ।

‘यह कैसा सत्कार है !

‘यही दिन थे, धातुनाम उतकी धालों की भीति ऐसा ही नीला या
जैसा कि धातु है.....और धूप भी ऐसी ही कुनकुनी थी .. और मैंने इसी
प्रकार लेटे-लेटे धामनी पट्टकवाती हुई धातुनाम उतके हवाते कर दी थी...यह

मोजूब नहीं है... बिजली का कौदा बनकर न जाने यह किन बदलियों के साथ घेन रहा है... अपनी पूति करके चला गया..... एक माँप था जो मुझे टम कर चला गया । ...किन्तु अब उसकी छोड़ी हुई लकीर क्यों मेरे पेट में फरवटें ले रही है... क्या यह मेरी पूति हो रही है ?

'नहीं, नहीं...' यह कैसे पूति हो सकती है... यह तो ध्वंस है... किन्तु मेरे शरीर के रिक्त स्थान क्यों भर रहे हैं . ये जो गढ़े ये किस मलवे से पूरे किये जा रहे हैं । मेरी रगों में ये कैसे सरसराहटें दौड़ रही हैं... मैं मिमटकर अपने पेट में किस नन्हें-से बिन्दु पर पहुँचने के लिए पेचोताव ता रही हूँ... मेरी नाव झुककर अब किन समुद्रों में उभरने के लिए उठ रही है.....?

'ये मेरे श्रन्दर दहकते हुए चूल्हों पर किस अतिथि के लिए दूध गरम किया जा रहा है... यह मेरा दिल मेरे रून को धुनक-धुनक करके किमके लिए नर्म व नाजुक रजाइयाँ तैयार कर रहा है । यह मेरा दिमाग मेरे विचारों के रंग-विरंगे घागों से किसके लिए नन्हें-मुन्नी पोशाकें बुन रहा है ?

'मेरा रंग किसके लिए निखर रहा है..... मेरे अंग-अंग और रोम-रोम में कैसे हुई हिषकियाँ लोरियों में क्यों तब्दील हो रही हैं.....'

'यही दिन थे, आकाश उसकी आँखों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि आज है... लेकिन यह आस्मान अपनी ऊँचाइयों से उतरकर क्यों मेरे पेट में तन गया है ?... इसकी नीली-नीली आँखें क्यों मेरी नाड़ियों में दौड़ती-फिरती हैं ?

'मेरे सीने की गोलाइयों में, मस्जिदों के मेहराबों में ऐसी पवित्रता क्यों घ्रा रही है ?

'नहीं-नहीं... यह पवित्रता कुछ भी नहीं । मैं इन मेहराबों को ढा दूँगी... मैं अपने श्रन्दर तमाम चूल्हे ठण्डे कर दूँगी जिन पर बिन बुलाये मेहमान की आवश्यकत चड़ी है । मैं अपने विचारों के तारे रंग-बि रंगे घागे आपस में उलझा दूँगी ।.....'

‘यही दिन थे, आत्मान उसकी आँखों की तरह ऐसा ही नीला था जैसा कि आज है...लेकिन मैं वह दिन क्यों याद करता हूँ जिनके सोने पर से वह अपने पद बिन्हु भी उठा कर ले गया था...’

‘लेकिन...यह पद-बिन्हु किसका है ? यह जो मेरी पेट की गहराईयों में तब प रहा है...? क्या यह मेरा जाना-बुझा जाना नहीं...’

‘मैं इसे खुरच दूंगी ... इसे मिटा दूंगी । यह रसीली है, फोडा है— बहुत भयानक फोडा ।’

‘लेकिन मुझे अनुभव होता है कि यह फाहा है... फाहा है तो किस जन्म का ? उस जन्म का जो वह मुझे लगाकर चला गया था ? नहीं नहीं, यह तो ऐसा सगता है किसी पैदायशी जन्म के लिए है ।...ऐसे जन्म के लिए जो मैंने कभी देखा ही नहीं था...जो मेरी कोख में न जाने कब-से सो रहा था ।’

‘यह कोख क्या ?...फिजूल-सी मिट्टी की हडकुलिया, बच्चों का खिलौना । मैं इसे तोड़-फोड़ दूंगी ।’

‘लेकिन यह कौन मेरे कान में कहता है, वह दुनिया एक चौराहा है... अपना मोटा क्यों इसमें फोड़ती है ‘याद रख तुम्ह पर उँगलियाँ उठेंगी ।’ ।’

‘उँगलियाँ...उधर क्यों न उठेंगी विधर वह अपनी हस्ती पूरी करके चला गया था—? क्या उन उँगलियों को वह रास्ता भासूम नहीं ?... यह ‘दुनिया एक चौराहा है...लेकिन उस समय तो वह मुझे एक दोराहे पर छोड़ कर चला गया था—इधर भी अधूरापन था, उधर भी अधूरापन—इधर भी भासू, उधर भी भासू !’

‘लेकिन यह किसका भासू मेरे सीप में मोती बन रहा है—यह कहाँ बिन्धेगा ?’

उँगलियाँ उठेंगी । जब सीप का मुँह खुलेगा और मोती फिसल कर बाहर चौराहे पर गिर पड़ेगा तो उँगलियाँ उठेंगी—सीपों की और भी और मोतियों की और भी...और वे उँगलियाँ सँधोन्निया बन कर उन दोनों को उठेंगी और अपने विष से उनको नीला कर देंगी ।

'यही दिन थे, आवाज उगकी घोंगी की भांति ऐसा ही नीला था जैसा कि था। यह गिर क्यों नहीं जाता... ये कौन से स्तंभ हैं जो इसे संभाले हुए हैं? क्या उस दिन जो भूकम्प आया था यह इन स्तंभों की बुनियादें हिला देने के लिए काफी नहीं था... यह क्यों अब तक मेरे सिर के ऊपर उसी तरह तना हुआ है ?

'मेरी आत्मा पसीने में डूबी हुई है... उसका हर मसाम खुला हुआ है। चारों ओर घाग झड़ रही है। मेरे घन्दर राटाली में सोना पिघल रहा है।... घोंकनियां बन रही हैं, शोले भड़क रहे हैं। सोना आग उगलने वाले ज्वालामुखी के माथे की नाईं उबल रहा है। मेरी नसों में नीली घांखें दौड़-दौड़ कर हांप रही हैं... घण्टियां बज रही हैं... कोई आ रहा है... फोई आ रहा है। बन्द करदो, बन्द करदो बिवाड़...।

'गटाली उलट गई है... पिघला हुआ सोना बह रहा है... घण्टियां बज रही हैं... वह आ रहा है... मेरी घांखें मुँद रही हैं... नीला आवाज गदला होकर नीचे आ रहा है।...'

'यह किसके रोने की आवाज है... इसे चुप कराओ... उसकी चीखें मेरे दिल पर हथौड़े मार रही हैं। चुप कराओ, इसे चुप कराओ, इसे चुप कराओ मैं गोद बन रही हूँ... मैं क्यों गोद बन रही हूँ... ?

'मेरी बांहें खुल रही हैं। चूल्हों पर दूध उबल रहा है। मेरे सोने की गोलाइयां प्यालियां बन रही हैं... लाओ इस गोश्त के लोथड़े को मेरे दिल के घुनके हुए खून के नर्म-नर्म गालों में लिटा दो।

'मत छीनो ! मत छीनो इसे मुझसे... अलग न करो ! खुदा के लिए मुझसे अलग मत करो !

'उंगलियां... उंगलियां... उठने दो उंगलियां। मुझे कोई चिन्ता नहीं... यह दुनियां चौराहा... फूटने दो मेरी जिन्दगी के तमाम भाँडे...।

'मेरा जीवन नष्ट हो जायेगा ?... हो जाने दो... मुझे मेरा गोश्त वापस दे दो... मेरी आत्मा का यह टुकड़ा मुझसे मत छीनो' 7

'यही दिन थे, आकाश उषकी प्रांगों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि था है... यह गिर क्यों नहीं जाता... वे गीन से स्वप्न है जो इसे संभाले हुए है ? क्या उस दिन जो भूकम्प आया था वह उन स्तंभों की बुनियादों हिला देने के लिए काफी नहीं था... यह क्यों अब तक मेरे सिर के ऊपर उठी तरह तना हुआ है ?

'मेरी आत्मा पसीने में डूबी हुई है... उसका हर मगम मुला हुआ है। पारों थोर आग दहक रही है। मेरे अन्दर राटाली में सोना पिघल रहा है। ... गोंकनियां चल रही हैं, दोले भड़क रहे हैं। सोना आग उगलने वाले ज्वालामुखी के साथे की नाई उबल रहा है। मेरी नसों में नीली आँखें दौड़-दौड़ कर हाँप रही हैं... घण्टियाँ बज रही हैं... कोई आ रहा है... कोई आ रहा है। बन्द करदो, बन्द करदो सिवाड़...।

'गटाली उलट गई है... पिघला हुआ सोना वह रहा है... घण्टियाँ बज रही हैं... वह आ रहा है... मेरी आँखें मुँद रही हैं... नीला आकाश गदला होकर नीचे आ रहा है। ...

'यह किसके रोने की आवाज है... इसे चुप कराओ... उसकी चीखें मेरे दिल पर हथौड़े मार रही हैं। चुप कराओ, इसे चुप कराओ, इसे चुप कराओ मैं गोद बन रही हूँ... मैं क्यों गोद बन रही हूँ... ?

'मेरी बाँहें खुल रही हैं। चूल्हों पर दूध उबल रहा है। मेरे सोने की गोलाइयाँ प्यालियाँ बन रही हैं... लाओ इस गोश्त के लोथड़े को मेरे दिल के धुनके हुए खून के नर्म-नर्म गालों में लिटा दो।

'मत छोड़ो ! मत छोड़ो इसे मुझसे... अलग न करो ! खुदा के लिए मुझसे अलग मत करो !

'उँगलियाँ... उँगलियाँ... उठने दो उँगलियाँ। मुझे कोई चिन्ता नहीं... यह दुनियाँ चौराहा... फूटने दो मेरी जिन्दगी के तमाम भाँटे... ..।

'मेरा जीवन नष्ट हो जायेगा ?... हो जाने दो... मुझे मेरा गोश्त वापस दे दो... मेरी आत्मा का यह टुकड़ा मुझसे मत छोड़ो... ..।

जानते यह कितना मूल्यवान् है... यह मोती है जो मुझे इन दाहों ने प्रदान किया है... उन दाहों ने जिन्होंने मेरे अस्तित्व के कई कण चुन-चुन कर किसी की पूर्ति की थी और मुझे अपने विचार में अपूर्ण छड़कर चले गये थे... मेरी पूर्ति आज हुई है ।

'मान लो... मान लो... मेरे पेट के रिक्त स्थान से पूछो । मेरी दूध मरी हुई छातियों से पूछो । उन लोरियों से पूछो जो मेरे अंग-भग और रोम-रोम में तमाम हिचकियाँ मुला कर भागे बढ़ रही हैं उन मूलनों से पूछो जो मेरे बज्रघों में डाले जा रहे हैं ।

'मेरे चेहरे के पीलेपन से पूछो जो गीत के इस लोपड़े के गालों को अपनी तमाम सुलियाँ चुसाती रही हैं... उन साँसों से पूछो जो चोरी छीपे उसे उसका हिस्सा पहुंचाते रहे हैं ।

'ऊंगलियाँ ? उठने दो ऊंगलियाँ... मैं उन्हें काट दूंगी... शोर मचेगा... मैं ये ऊंगलियाँ उठाकर अपने कानों में दूँस लूँगी । शूँगी हो जाऊँगी, बहरी हो जाऊँगी, झँधी हो जाऊँगी... मेरा माँस मेरे संकेत समझ लिया करेगा... मैं उसे टटोल-टटोल कर पहचान लिया करूँगी ।

'मत छीनो... मत छीनो इसे । यह मेरी कोख का सिन्दूर है । यह मेरी ममता की माधे की बिन्दिया है । मेरे पाप का कड़वा फल है । लोग इस पर घू घू करेंगे ?... मैं चाट लूँगी ये सब थूक... समझकर भाक कर दूँगी ।'

'देखो, मैं हाथ जोड़ती हूँ; तुम्हारे पांव पड़ती हूँ ।

'मेरे मरे हुए दूध के बर्तन धोये न करो... मेरे दिल के चुनके हुए मूत्र के नर्म-नर्म गालों में भाग न लगाओ । मेरी बाँहों के मूलनों की रस्सियाँ न तोड़ो । मेरे कानों को उन गीतों से वंचित न करो जो इसके रोने में मुझे सुनाई देते हैं ।

'मत छीनो !... मुझसे धन्य न करो । भगवान के लिए मुझे इससे धन्य न करो ।'

नाहोर—२१ जनवरी

घोषी मण्डी से पुलिस ने एक नवजन्मी बच्ची को सर्दी से ठिठुरती सड़क के किनारे पर पड़ी हुई पाया और अपने कब्जे में ले लिया। किसी बठोर हृदयी ने बच्ची की गर्दन को मजबूती से कपड़े में जकड़ कर रखा था और नग्न शरीर को पानी से गीले कपड़े में बाँध रखा था ताकि वह सर्दी से मर जाये। पर यह जोरित थी। बच्ची बहुत सुन्दर है—घ्रांति नीली हैं। उसे अस्पताल पहुँचा दिया है।

